उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय
प्रयागराज

।। सरस्वती नः सुभगा मयस्करत् ।।

शान्तिपुरम् (सेक्टर-एफ), फाफामऊ, प्रयागराज - 211013
www.uprtou.ac.in
टोल फ्री नम्बर- 1800-120-111-333

MAGO - 102

स्वाध्याय स्वमन्थन स्वावलम्बन

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

उत्तर प्रदेश सरकार का एकमात्र मुक्त विश्वविद्यालय

।। सरस्वती नः सुभगा मयस्करत् ।।

MAGO-102
भारत का भूगोल

शान्तिपुरम् (सेक्टर-एफ), फाफामऊ, प्रयागराज - 211013
www.uprtou.ac.in
टोल फ्री नम्बर- 1800-120-111-333

कुलपति
उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय
प्रयागराज

सन्देश

प्रयागराज की पवित्र भूमि पर भारत रत्न राजर्षि पुरूषोत्तम दास टण्डन के नाम पर वर्ष 1999 में स्थापित उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज उ0प्र0 का एकमात्र मुक्त विश्वविद्यालय है। यह विश्वविद्यालय उ0प्र0 जैसे विशाल जनसंख्या वाले राज्य में उच्च शिक्षा के प्रत्येक आकांक्षी तक गुणात्मक तथा रोजगारपरक उच्च शिक्षा के अवसर उपलब्ध कराने में निरन्तर अग्रसर एवं प्रयत्नशील है। तत्कालीन देश की सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियों में एक वैकल्पिक व नवाचारी शिक्षा व्यवस्था के रूप में भारत में मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा प्रणाली का पदार्पण हुआ था, परन्तु वर्तमान परिस्थितियों तथा तकनीकी का सार्थक प्रयोग करते हुये मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा आज की सर्वोत्तम पूरक शिक्षा व्यवस्था के रूप में स्थापित हो चुकी है।

वर्तमान शिक्षा प्रणाली के सामने व्याप्त पाँच मुख्य चुनौतियों - (i) पहुँच (Access), (ii) समानता (Equity), (iii) गुणवत्ता (Quality), (iv) वहनीयता (Affordability) तथा (v) जवाबदेही (Accountability) को केन्द्र में रखकर घोषित देश की राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP-2020) के प्रस्तावों को क्रियान्वित करने में उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय कृत संकल्पित है। उ0प्र0 की माननीय राज्यपाल एवं कुलाधिपति श्रीमती आनंदीबेन पटेल जी की सद्इच्छाओं के अनुरूप उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, शैक्षिक दायित्वों के साथ-साथ सामाजिक दायित्वों के निर्वहन में भी लगातार नवप्रयास कर रहा है। चाहे वह गाँवों को गोद लेकर उनके समग्र विकास का प्रयास हो या ग्रामीण महिलाओं, ट्रान्सजेन्डर व सजायाफ्ता कैदियों को शुल्क में छूट प्रदान कर उनमें आत्मविश्वास जागृति व उच्च शिक्षाा के प्रति अलख जगाने का प्रयास हो।

राष्ट्रीय विकास को बढ़ावाा देने के लिए शिक्षा एक मूलभूत जरूरत है। ज्ञान-विज्ञान एवं तकनीकी के क्षेत्रों में हो रहे तीव्र परिवर्तनों व वैश्विक स्तर पर रोजगार की परिस्थितियों में आ रहे परिवर्तनों के कारण भारतीय युवाओं को विभिन्न क्षेत्रों में गुणवत्तापूर्ण शैक्षिक अवसर उपलब्ध कराने पर ही भारत का भविष्य निर्भर करेगा। इसीलिए विभिन्न क्षेत्रों में सफलता हेतु शिक्षा को सर्वसुलभ, समावेशी तथा गुणवत्तापरक बनाना समसामयिक अपरिहार्य आवश्यकता है। कोविड-19 संक्रमण काल ने परम्परागत शिक्षा को और भी सीमित कर दिया है जबकि कोविड-19 के संक्रमण काल में तथा कोविड-19 के बाद भी मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा व्यवस्था ही एकमात्र पूरक एवं प्रभावी शिक्षा व्यवस्था के रूप में सार्थक सिद्ध हो रही है। ऐसी स्थिति में विश्वविद्यालय का दायित्व और भी बढ़ जाता है। इस दायित्व को एक चुनौती स्वीकार करते हुए विश्वविद्यालय ने प्राचीन तथा सनातन भारतीय ज्ञान, परम्परा तथा सांस्कृतिक दर्शन व मूल्यों की समृद्ध विरासत के आलोक में सभी के लिए समावेशी व समान गुणवत्तायुक्त शिक्षा सुनिश्चित करने तथा जीवन पर्यन्त शिक्षा के अवसरों को बढ़ावा देने के लिए अपने शैक्षिक कार्यक्रमों में प्रमाणपत्र, डिप्लोमा, परास्नातक डिप्लोमा, स्नातक, परास्नातक तथा शोध उपाधि के समसामयिक शैक्षिक कार्यक्रमों की संख्या तथा गुणात्मकता में वृद्धि की है।

शैक्षिक कार्यक्रमों में संख्यात्मक वृद्धि, गुणात्मक वृद्धि तथा रोजगारपरक बनाने के साथ-साथ प्रत्येक उच्च शिक्षा आकांक्षी तक पहुँच सुनिश्चित करने के लिए अध्ययन केन्द्रों व क्षेत्रीय केन्द्रों के विस्तार के साथ-साथ प्रवेश, परीक्षा, प्रशासन तथा परामर्श (शिक्षण) में आनलाइन व्यवस्थाओं को सुनिश्चित किया गया है। विश्वविद्यालय कार्यप्रणाली में पारदर्शिता तथा जवाबदेही सुनिश्चियन की दृष्टि से तकनीकी के प्रयोग को बढ़ायाा गया है। 'चुनौती मूल्यांकन' की व्यवस्था सुनिश्चित करने का कार्य किया गया है, तो शिक्षार्थी सहायता सेवाओं में भी वृद्धि की जा रही है। शिक्षार्थियों की समस्याओं के त्वरित निस्तारण हेतु शिकायत निवारण प्रकोष्ठ को सुदृढ़ करने के साथ-साथ पुरातन छात्र परिषद को गतिशील किया गया है।

शोध और नवाचार के क्षेत्र में अग्रसर होते हुए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) नई दिल्ली तथा माननीय राज्यपाल एवं कुलाधिपति, उ0प्र0 की अनुमति से विश्वविद्यालय में शोध कार्यक्रम पुनः प्रारम्भ किया गया है तथा वर्ष पर्यन्त समसामयिक विषयों पर व्याख्यान, सेमिनार, बेबिनार तथा आनलाइन संगोष्ठियों आदि की श्रृंखला भी प्रारम्भ की गयी है। विभिन्न क्षेत्रों में रिसर्च प्रोजेक्ट सम्पादन पर भी ध्यान केन्द्रित किया गया है। पुस्तकालय को अत्याधुनिक तथा सुदृढ़ बनाने हेतु कदम उठाये गये हैं। शिक्षकों व कर्मचारियों के स्वास्थ्य तथा कल्याण की योजनायें क्रियान्वित की गयी है। वर्तमान की विषम परिस्थितियों के दृष्टिगत विश्वविद्यालय ने मुख्यमंत्री तथा प्रधानमंत्री राहत कोष में अंशदान देने का भी प्रयास किया है।

भौतिक अधिसंरचना की दृष्टि से विश्वविद्यालय निजी स्रोतों से ही निरन्तर आत्मनिर्भरता की ओर बढ़ा है। विश्वविद्यालय के शिक्षकों, परामर्शदाताओं, क्षेत्रीय समन्वयकगण, अध्ययन केन्द्र समन्वयकगण तथा कर्मचारियों की एकता व कर्मठता ही वह ऊर्जा पिण्ड है जिसके बल पर विश्वविद्यालय जीवंत व प्रकाशवान है। मुझे विश्वास है कि इसी ऊर्जा पिण्ड की सहायता से यह विश्वविद्यालय देश, प्रदेश तथा समाज को अपनी सेवाओं व योगदान प्रदान कर और अधिक समृद्ध, सुदृढ़ और गौरवशाली बनाने में अपनी भूमिका अदा कर सकेगा। मैं समस्त विश्वविद्यालय परिवार के प्रति आदर व आभार व्यक्त करती हूँ।

प्रो. सीमा सिंह
कुलपति

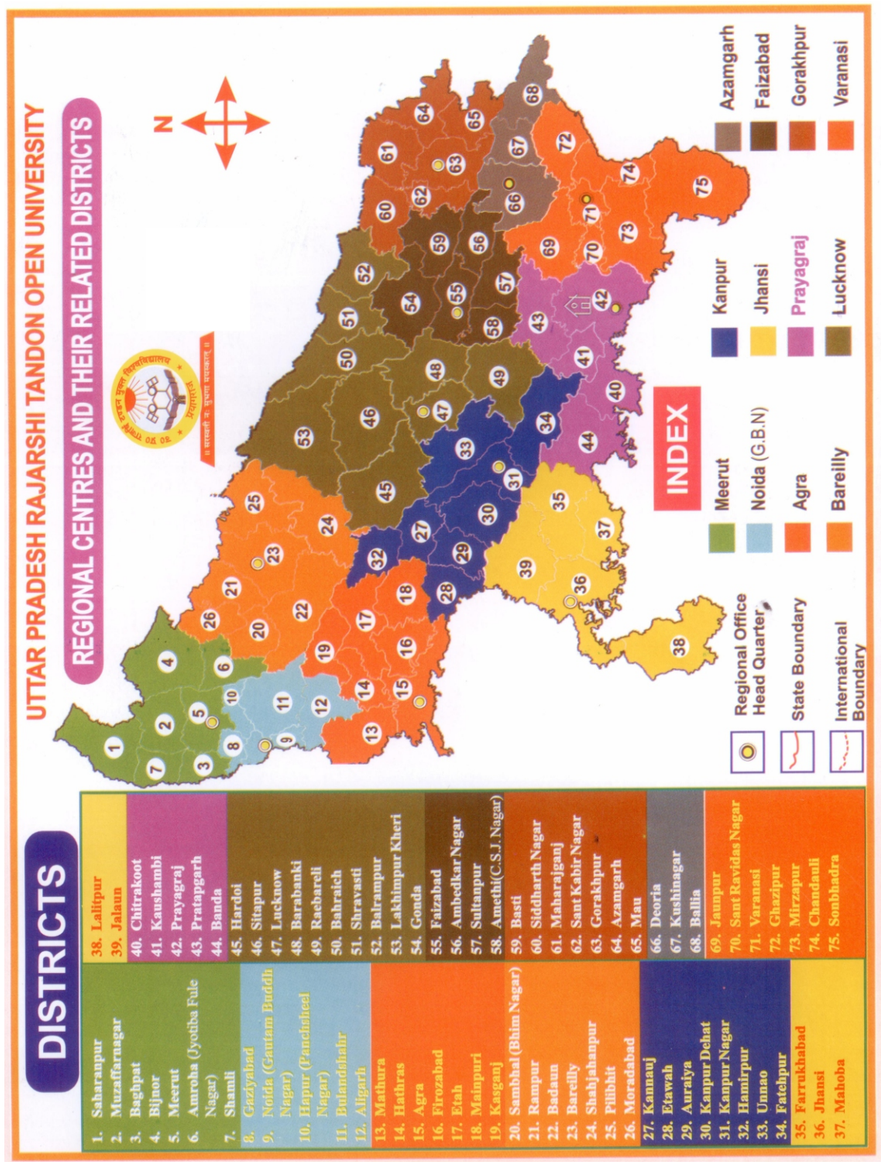

शान्तिपुरम् (सेक्टर-एफ), फाफामऊ, प्रयागराज - 211013

"अपने भाइयों को मै सचेत करना चाहता हूँ कि मोम न बनें और आसानी से पिघल न जायें। छोटी-छोटी सी बातों के लिए ही हम अपनी भाषा को या संस्कृति को न बदलें।"

राजर्षि पुरूषोत्तमदास टंडन

उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

परामर्श समिति

प्रो0 सीमा सिंह कुलपति, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

विनय कुमार कुलसचिव, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

पाठ्यक्रम निर्माण समिति ; (अध्ययन बोर्ड)

प्रो0 संतोषा कुमार आचार्य, इतिहास, निदेशक, समाज विज्ञान, विद्याशाखा, उ0 प्र0 रा0 ट0 मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ0 संजय कुमार सिंह सह – आचार्य, भूगोल समाज विज्ञान विद्याशाखा उ0 प्र0 रा0 ट0 मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ0 अभिषेक सिंह सहा0 आचार्य समाज विज्ञान विद्याशाखा उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रो0 एन.के .राना आचार्य, भूगोल विभाग बी0एच0यू0, वाराणसी

प्रो0 ए0 आर0 सिद्दीकी आचार्य, भूगोल विभाग इलाहाबाद विश्वविलय प्रयागराज

प्रो0 अरूण कुमार सिंह आचार्य, भूगोल विभाग बी0एच0यू0, वाराणसी

लेखक

डॉ0राजेश कुमार पाल सहा0. आचार्य, भूगोल विभाग मॉ भवानी पीं जीं कालेज सोगाई, चन्दौली

सम्पादन

डॉ0 संजय कुमार सिंह सह – आचार्य, भूगोल समाज विज्ञान विद्याशाखा
उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

समन्वयक

डॉ0 संजय कुमार सिंह सह – आचार्य, भूगोल समाज विज्ञान विद्याशाखा
उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

सह -समन्वयक

डॉ0 अभिषेक सिंह सहायक आचार्य, भूगोल समाज विज्ञान विद्याशाखा
उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

मुद्रित वर्ष – 2023

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

ISBN No. – 978-81-963573-7-5

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस सामग्री के किसी भी अंश को उप्र राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में मिनियोग्राफी (वक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

नोट : पाठय साम्रगी में मुद्रित साम्रगी के विचारों एवं आकड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय, उत्तरदायी नहीं हैं।

प्रकाशन विनय कुमार, कुलसचिव, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज, 2023।

MAGO-102

भारत का भूगोल

उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन
मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

MAGO-102 भारत का भूगोल

इकाई 1– भौमिकीय संरचना, भौतिक प्रदेश, अपवाह तन्त्र।

इकाई 2– मानसून की उत्पत्ति एवं संकल्पना।

इकाई 3–जलवायु प्रदेश,एल नीनो, ला नीना।

इकाई 4–मिट्टी : प्रकार एवं वितरण, वनस्पति प्रकार एवं वितरण।

इकाई 5–सिंचाई बहु–उद्देशीय परियोजनाएँ, जलागम क्षेत्र विकास।

इकाई 6–कृषि एव ंकृषि प्रदेश, कृषि जलवायुविक प्रदेश।

इकाई 7–भारत में हरित क्रान्ति, हरित क्रान्ति के पर्यावरणीय प्रभाव।

इकाई 8–पर्यावरणीय कृषि, भारत में खाद्यान्न सुरक्षा, भारत की कृषि नीति।

इकाई 9–खनिज संसाधन – लौह–अयस्क, अभ्रक, कोयला।

इकाई 10–शक्ति संसाधन –पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस, जलविद्युत।

इकाई 11 परमाणु ऊर्जा, ऊर्जा संरक्षण, हरित ऊर्जा।

इकाई 12– उद्योग – लौह–इस्पात, वस्त्र उद्योग, चीनी उद्योग, औद्योगिक प्रदेश।

इकाई 13–जनसंख्या वृद्धि एवं वितरण, जनसंख्या की संरचना–आयु, लैंगिक।

इकाई 14–जनसंख्या नीति, नगरीकरण, नगरीकरण की समस्याएं एंव समाधान।

इकाई 15–जनसंख्या एवं पर्यावरण, भारत में संविकास के प्रयास।

इकाई 16– अधिवास–नगरीय एंव ग्रामीण प्रतिरूप, परिवहन के साधन।

MAGO- 102 भारत का भूगोल

इकाई 1- भौमिकीय संरचना, भौतिक प्रदेश, अपवाह तन्त्र

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 भौमिकीय संरचना

1.4 भौतिक प्रदेश

1.5 प्रादेशिक विभाजन

1.6 अपवाह तन्त्र

1.7 सारांश

1.8 शब्द सूची

1.9 परीक्षोपयोगी प्रश्न

1.10 उपयोगी पुस्तकें व संदर्भ–

1.11 अभ्यास प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

इस इकाई में आप भौमिकीय संरचना के विकास के विभिन्न चरणों का अध्ययन करके प्रीकैम्ब्रियम युग की शैलों, पुराण समूह की शैलों, द्रविड़ियन युग की शैलों एवं आर्यन युग की शैलों भौतिक प्रदेश में हिमालय पर्वत समूह के विभिन्न प्रकार, बृहद मैदान, प्रायद्वीपीय भाग के विभिन्न भागों, तटीय मैदान एवं द्वीप समूह तथा अपवाह तन्त्र में हिमालयी नदी तन्त्र, प्रायद्वीपीय नदी तन्त्र तथा नदियों के बारे में अध्ययन करेंगे।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई में भारत भूगोल का अध्ययन करने के उपरान्त आप–

- भारत का भौमिकीय संरचना को समझ सकेगें,

- भारत के भौमिकीय संरचना के विकास के विभिन्न चरणों को समझ सकेंगे,
- भारत के भौतिक प्रदेश का स्वरूप समझ सकेगें,
- भारत का प्रादेशिक विभाजन समझ सकेगें,
- भारत का अपवाह तन्त्र में हिमालयी अपवाह तन्त्र तथा प्रायद्वीपीय अपवाह तन्त्र समझ सकेगें।

1.3 भौमिकीय संरचना

भारत गोडवाना लैण्ड का भाग है यहां अवशिष्ट पर्वत से लेकर नवीन पर्वत तक पाये जाते हैं जिसमें मोड़दार पर्वतों की उत्पत्ति चार अवस्थाओं में हुई है। प्रथम चरण में प्री. कैम्ब्रियम युग है जिसमें अरावली पर्वत उत्पत्ति हुई है, द्वितीय चरण में केलीडोनियन पर्वत है जिसके अन्तर्गत कुडप्पा भू–अभिनति से पूर्वी घाट की उत्पत्ति हुई, तीसरे चरण में हर्सीनियन युग के पर्वत की हुई है जिसमें विंध्यन भू–अभिनति से विंध्याचल तथा सतपूड़ा पर्वत की उत्पत्ति हुई तथा चतुर्थ चरण में अल्पाइन युग की पर्वत की उत्पत्ति हुई जिसमें महान हिमालय की उत्पत्ति हुई। भारतीय प्रायद्वीप की भौमिकीय विकास काफी प्राचीन है यहां पर प्री कैम्ब्रियम युग से लेकर चतुर्थ युग तक की शैलें पायी जाती हैं। भू वैज्ञानिक लोगों ने भारत की भूमि को भूवैज्ञानिक संरचना की दृष्टि से तीन भागों में बांटा है। प्रथम– प्रायद्वीपीय पठार जो प्राचीन भूखण्ड है। द्वितीय– हिमालय पर्वत है। तृतीय– नवीन जलोढ़ पदार्थ से उत्तर भारत का मैदान है। भारत की भौमिकीय संरचना के विकास को निम्न समय चरण में बांटा गया है।

1.प्री. कैम्ब्रियम युग की शैलें
2.पुराण समूह की शैलें
3.द्रविड़ियन युग की शैलें
4.आर्यन युग की शैलें

1. प्री कैम्ब्रियन युग की शैलें

इस युग के अन्तर्गत दो शैलासमूहों को शामिल किया जाता है। प्रथम– आर्कियन युग समूह की शैल तथा द्वितीय– धारवाड़ क्रम की शैलें।

I. आर्कियन समूह की शैल

इस शैल समूह को आद्य कल्प शैल समूह भी कहते हैं। यह पृथ्वी की प्राचीनतम शैलों का सूचक है। इस शैल समूह में जीवन के साक्ष्य नहीं पाये जाते हैं। इन्हें जीवहीन भी कहते हैं। अरावली, धारवाड़, कुडप्पा, विंध्यन, मेघालय का

पठार और मिकिर की पहाड़ियां इस समूह के अन्तर्गत आते हैं जो प्राययद्वीपीय भारत के कर्नाटक, तमिलनाडु, आन्ध्रप्रदेश, तेलंगाना, ओडिशा, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, मेघालय, छोटा नागपुर का पठार तथा दक्षिण–पूर्व राजस्थान में पायी जाती है। ये शैले रवेदार कायान्तरित रूप में मिलती हैं जिसके कारण जीवाश्म का अभाव पाया जाता है।

इस शैल के समूह के अन्तर्गत प्रायद्वीपीय नाइस (बंगाल नाइस), बुन्देलखण्ड नाइस तथा नीलगिरी नाइस शामिल है। प्रायद्वीपीय नाइस को बंगाल नाइस भी कहते हैं। जिसका वितरण मुख्यतः पश्चिम बंगाल, झारखण्ड, उड़ीसा एवं कर्नाटक में पाया जाता है। बुन्देलखण्ड नाइस जो ग्रेनाइट सदृश्य दिखलाई पड़ती है। इसका वितरण बुन्देलखण्ड, महाराष्ट्र, राजस्थान, आन्ध्रप्रदेश एवं तमिलनाडु राज्यों में है। नीलगिरी नाइस को चर्नोकाइट नाइस भी कहते हैं। जिसका वितरण तमिलनाडु, आन्ध्रप्रदेश, कर्नाटक, केरल, बिहार, झारखण्ड, मध्य प्रदेश, एवं राजस्थान में है।

II. धारवाड़ समूह की शैल

धारवाड शब्द कर्नाटक के इसी नाम के जनपद से लिया गया है जहां इन शैलों को प्रथम बार खोजा गया था जिसका निर्माण आर्कियन नाइस एवं शिष्ट शैलों के अनाच्छादन से प्राप्त अवसादों से हुआ है। इस समुह में अन्तर्भेदी नाइस चट्टानें कुछ स्थानों पर पायी जाती है। यह मुख्यतः कायान्तरिक अवसादो से बनी है। वलन भ्रंशन क्रिया द्वारा इनके स्वरुप में काफा परिवर्तन हुआ है और इसमे खेदार तथा शिष्ट सम्बन्धित विशेषताएं उत्पन्न हो गयी है। इसमें खण्डमय अवसाद, रासायनिक तौर पर अवक्षेपित चट्टान, ज्वालामुखी एवं पातालीय शैल शामिल है जिसका अत्यन्त कायान्तरण हुआ है। इसमे शिष्ट, फाइलाइट एवं स्लेट प्रमुख चट्टान है इसमे परत का अभाव पाया जाता है।

धारवाड़ चट्टानें बिखरे रूप में दक्षिणी दक्कन, प्रायद्वीप के मध्यवर्ती एवं पूर्वी भागों, उत्तरी–पश्चिमी क्षेत्र और हिमालय क्षेत्र में पायी जाती है। दक्षिणी दक्कन में 15540वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैला हुआ है जिसका विस्तार कर्नाटक के धारवाड़ और बेल्लारी जनपदों से लेकर नीलगिरी, मदुरै और श्रीलंका तक फैला हैं यहां स्फटिक, स्लेट, कांग्लोमरेट, हार्नब्लेड–शिस्ट, टैल्क–शिस्ट, चर्ट, लौह पत्थर, संगमरमर आदि पाये जाते हैं कुछ क्षेत्रों में सोना भी पाया जाता है। मध्य एंव पूर्वी प्रायद्वीपीय क्षेत्र में मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, झारखण्ड, उड़ीसा एवं पश्चिम बंगाल में फैला हुआ है। इनमें चिल्पी, सासर, सकोली, खोडलाइट, लौह अयस्क कोल्हण गांगपुर एवं डाल्माट्रैप प्रमुख उपक्रम हैं। उत्तरी–पश्चिमी क्षेत्र में अरावली पहाड़ी सहित राजस्थान एवं गुजरात राज्य में फैला हुआ है। प्रायद्वीपेतर क्षेत्र में

मेघालय पठार एवं हिमालय क्षेत्र शामिल हैं। धारवाड़ शैले जीवाश्म रहित तथा अत्यधिक धात्विक हैं।

2. पुराण समूह की शैले

इस समूह की शैले आद्यजीवी समय की है इस समूह की शैलें 2500से 570मिलियन वर्ष पूर्व माना गया है। इस समूह में निम्नलिखित शैल क्रमों को शामिल किया जाता है।

I. कुडप्पा क्रम

इस क्रम की शैलों का नामकरण आन्ध्र प्रदेश के जिले के नाम पर किया गया है। भू वैज्ञानिकों के अनुसार ये शैलें धारवाड़ क्रम की शैलों के जलीय अपरदन के कारण जमा अवसादों से बनी हैं। कुडप्पा चट्टानों में शेल, स्लेट, क्वार्टजाइट एवं चूना पत्थर प्रमुख हैं। इन चट्टानों का अत्यधिक रूपान्तरण हुआ है एवं इसमें जीवाश्म का अभाव पाया जाता हैं इस क्रम की शैल निर्माण की दृष्टि से क–निचले कुडप्पा ख–ऊपरी दो वर्गों में बांटा गया है। पापाघनी एवं चेमार श्रेणी तथा कृष्णा एवं नल्लामलाई श्रेणी क्रमशः निचली कुडप्पा तथा ऊपरी कुडप्पा शैल की श्रेणी है। कुडप्पा क्रम की शैलें कृष्णा घाटी, नल्लामलाई पापाधनी, चेमार, दिल्ली श्रेणी, बिजावर श्रेणी, कालडगी श्रेणी तथा लेसर हिमालय में पायी जाती हैं। इस क्रम की शैल में सैंडस्टोन शैल, चूना पत्थर, क्वार्टजाइट, स्लेट, निम्न गुणवत्ता वाला लौह अयस्क, मैगनीज अयस्क, एस्बेस्टास, ताँबा, निकिल, कोबाल्ट तथा संगमरमर पाया जाता हैं।

II. विन्ध्य क्रम

इसका नामकरण विन्ध्य पहाड़ियों के नाम पर किया गया हैं इसका अधिकांश भाग ध्यिाचल क्षेत्र में पाया जाता है। इसी कारण इसे विंध्ययन क्रम नाम से जाना जाता हैं इसका विस्तार पश्चिम में चित्तौड़गढ़ से लेकर पूरब में सासाराम के बीच 103600 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र पर फैला है। महान सीमा भ्रंश विंध्यन क्रम को अरावली से पृथक करता है। ये 4 किलोमीटर तक की मोटाई में मिलती हैं। इस क्रम की प्रमुख शैलों में स्थूल बलुआ पत्थर, शेल एवं चूना पत्थर शामिल है। विन्ध्य क्रम के प्रमुख उपक्रमों में निचला विन्ध्य क्रम जिसमें नर्मदा घाटी के उत्तर विन्ध्य पहाड़ियों के रूप में पाया जाता है। इसे सेमरी, कुर्नूल, भीमा, मलानी उपक्रमों के स्थानीय नामों से जाना जाता है। ऊपरी विन्ध्य क्रम में कैमूर, रीवा एवं भाण्डेर में विभाजित किया जाता है। इस शैल में बहुमूल्य पत्थर, सजावटी पत्थर, हीरा, गृह निर्माण पदार्थ तथा सीमेण्ट, चूना, शीशा एवं रसायन

उद्योग हेतु कच्चा माल प्राप्त किया जाता है। इसमें लोहा एवं मैगनीज भी पाया जाता है।

3. द्राविडयन युग की शैलें

इसका प्रारम्भ कैम्ब्रियन काल (600 मिलियन वर्ष पूर्व) से होकर मध्य कार्बनी (300मिलियन वर्ष पूर्व) काल तक फैला है। इसमें जीवाश्म पाया जाता है। अध्ययन की सुविधा हेतु इस कल्प की शिलाओं को कैम्ब्रियन, आर्डोविशन, सिलूरी, डिवोनी, तथा निचले एवं मध्यवर्ती कार्बनी क्रमों में बांटा जाता है। इसका वितरण कश्मीर के बारामुला एवं अनंतनाग जनपदों एवं पीरपंजाल, हिमांचल प्रदेश का स्पीति जनपद, पाक का साल्टरेंज और म्यांमार का शान प्रान्त, कश्मीर की लिद्दार घाटी एवं हण्डवारा घाटी उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमायूं क्षेत्रों में द्रविड़ महाकल्प की शैलों का विस्तार मिलता है।

4. आर्यन युग की शैलें

भारतीय भूविज्ञान के आर्य कल्प का प्रारम्भ ऊपरी कार्बनीकाल में मानी जाती है। इसमें अग्रलिखित शैलों को शामिल किया गया है–

I. गोंडवाना क्रम

गोंडवाना क्रम की शैल का निर्माण कार्बोनिफेरस युग से लेकर नवजीवी के प्रारम्भ तक माना जाता है। इस क्रम के शैल के निर्माण के बाद प्रायद्वीपीय भाग में किसी प्रकार का हलचल नहीं हुई। इस क्रम को मध्य प्रदेश के प्राचीन गोड राज्य के आधार पर गोंडवाना नाम दिया गया। इसका वितरण छोटानुगपुर का दामोदर घाटी क्षेत्र, महानदी घाटी क्षेत्र, गोदावरी, वेलगंगा एवं वर्धा घाटियां, कच्छ, काठियावाड़, पश्चिमी राजस्थान, कश्मीर एवं सिक्किम के क्षेत्र हैं। गोंडवाना क्रम को लम्बवत एवं क्षैतिज दो तरह से वर्गीकरण किया जा सकता है। क्षैतिज तौर पर गोंडवाना क्रम को दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। प्रथम– प्रायद्वीपीय गोंडवाना, जिसमें दामोदर घाटी, महानदी घाटी एवं गोदावरी घाटी क्षेत्र शामिल हैं एवं द्वितीय– प्रायद्वीपेतर गोंडवाना भाग है। लम्बवत् वर्गीकरण के आधार पर गोंडवाना क्रम को ऊपरी गोंडवाना एवं निचला गोंडवाना में बांटा जा सकता है। निचला गोंडवाना क्रम के तालचेर (उड़ीसा) दामुदा उपक्रम– रानीगंज, बंजर संस्तर एवं बराकर करहरबारी तथा पंचेत उपक्रम (नवीनतम) के हैं। तथा ऊपरी गोंडवाना क्रम के महादेव उपक्रम में पंचमढ़ी एवं मलेरी, राजमहल उपक्रम में राजमहल, जबलपुर उपक्रम में जबलपुर, कोटा तथा उमिया उपक्रम में उमिया

अवस्था शामिल है। गोंडवाना क्रम कोरोमण्डल तट के क्षेत्रों में, साल्टरेंज, शेख बुदिन पहाड़ी, हजारा, अफगानिस्तान, कश्मीर, नेपाल, सिक्किम, भूटान, असम एवं अबोर के दूर–दराज के अंचलों में भी पाया जाता है। भारत का 95 प्रतिशत से अधिक कोयला का भण्डार इसी में पाया जाता है।

II. दक्कन ट्रैप

क्रिटेशिस काल के अन्तिम चरण में ज्वालामुखी के उद्‌भेदन प्रायद्विपीय भाग में हुआ। दरारी उद्‌भेदन से सोपानिक स्थल का निर्माण हुआ, इसी कारण इसे दक्कन ट्रैप (स्वेडिश भाषा) कहते हैं। दक्कन ट्रैप का विस्तार गुजरात (कच्छ, सौराष्ट्र), महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश (मालवा पठार) एवं उत्तरी कर्नाटक में लगभग 5लाख वर्ग किलोमीटर में फैला हुआ है। इसका विस्तार राजामुन्द्री (आन्ध्र प्रदेश), दक्षिणी बिहार एवं सिन्ध (पाकिस्तान) के क्षेत्रों तक देखा गया है। इसका सर्वाधिक मोटाई (3000 मीटर) मुम्बइ तट के सहारे पाई जाती है। पृथक लावा प्रवाह की औसतन मोटाई 5मीटर पायी जाती है। कच्छ के पास यह मोटाई 800मीटर, अमरकंटक के पास 150मीटर तथा बेलगाम के पास 60मीटर पायी जाती है। कुल लावा में पीठ़िता की अधिकता थी जिसके कारण तेजी से स्फटिकीकरण एवं बेसाल्ट, कांच की विरलता पाई जाती है। बेसाल्ट के अपघटन से काली, गहरी या लाल रंग की रेगड़ मिट्टी का निर्माण हुआ है। लेटेराइट मृदा भी इसी जमाव से बनी है जिसमें एल्यूमिना, लोहा तथा मैगनीज तत्व मिलते हैं। बाक्साइट के निक्षेप भी मिलते हैं।

III. तृतीयक क्रम

भारत में इस युग का सर्वप्रथम स्थान है क्योंकि इसी युग के दौरान देश को वर्तमान स्वरूप मिला। इस युग के अन्तर्गत दो भौमिकीय घटनायें महत्वपूर्ण रही है, प्रथम– गोंडवानालैण्ड का अन्तिम रूप से विखण्डनएवं इसके बड़े भाग का समुद्र में निमज्जन, तथा द्वितीय–टेथीज के भू अभिनतिक अवसादों के उत्थापन से हिमालय की उंची श्रृंखलाओं का निर्माण। टेथीज के नितल में परमियन काल से संग्रहित अवसादों से हिमालय का निर्माण हुआ है। हिमालय का प्रथम बार उत्थान लगभग 6 मिलियन वर्ष पूर्व इयोसीन युग में हुआ जो मध्य ओलिगोसीन तक चला, जिसमें महान हिमालय का उत्थान हुआ, द्वितीय उत्थान 4 मिलियन वर्ष पूर्व मध्य मायोसीन में हुआ, जिससे लघु हिमालय का उत्थान हुआ, तृतीय उत्थान लगभग 1.5 मिलियन वर्ष पूर्व उत्तर प्लायोसीन काल में हुआ, जिससे शिवालिक में वलन हुआ अर्थात बाहरी हिमालय का निर्माण हुआ। अन्तिम उत्थान के रूप में प्लीस्टोसीन काल में पीरपंजाल श्रेणी एवं कश्मीर घाटी

अस्तित्व में आये। इस प्रकार अधिकांश टर्शियरी युगीन की शैले हिमालय के क्षेत्रों में पायी जाती हैं।

IV. चतुर्थक क्रम

इसके अन्तर्गत प्लीस्टोसीन एवं होलोसीन युग की शैलों को शामिल किया जाता है। प्लीस्टोसीन युग में बड़े पैमाने पर हिमानीकरण हुआ था हिमालय के क्षेत्रों में हिमोढ़, गोलाश्म तथा हिम से निर्मित तथा अपरदित धरातल के प्रमाण पाये जाते हैं। कश्मीर घाटी प्लीस्टोसीन में अस्तित्व में आया। यहां बड़ी मात्रा में हिमोढ़ एवं करेवा मिलते हैं। करेवा का निक्षेप झेलम में अधिक पाया जाता है। यहां करेवा का 7500वर्ग किलोमीटर में विस्तार पाया जाता है। करेवा एक झीलकृत निक्षेप है जिसमें कुछ स्तनपायी जीवों का अवशेष है। यह करेवा केसर, बादाम, अखरोट खूबानी के कृषि के लिए प्रसिद्ध है। गंगा, ब्रह्मपुत्र, सतलज, नर्मदा, ताप्ती, गोदावरी, कृष्णा आदि नदियों में जमा पुरातन कॉप बांगर तथा नवीन काप खादर प्लीस्टोसीन काल की है। कच्छ रन (गुजरात) तथा थार का मरुस्थल (राजस्थान) भी इसी काल के हैं।

1.4 भौतिक प्रदेश

भारत के उच्चावच एवं भौतिक स्वरूप में पर्याप्त विषमता मिलती है। इसके उत्तरी भाग में हिमाच्छादित शिखरों, विस्तृत घाटी हिमानियों, गहरे खड्ड, जल प्रपात एवं सांस्कृतिक विविधता से सम्पन्न क्षेत्र स्थित हैं। दक्षिणी भाग में नदी द्वारा निक्षेपित विशाल समतल एवं स्थलाकृति विहीन मैदान फैला हुआ है। पश्चिम में स्थित राजस्थान मैदान वनस्पति विहीन बालुका स्तूपों से परिपूर्ण मरुस्थल क्षेत्र हैं। दक्षिण की तरफ विशाल मैदान का संपर्क पठारी भाग से होता है जिसकी सतह काफी अनाच्छादित है एवं कहीं सीढ़ी के भांति तो कहीं कगार के रूप में है। प्रायद्वीय दक्षिण की तरफ पतला होता जाता है एवं सागर से पश्चिम एवं पूर्व में घिरा हुआ है। इसके पूर्वी तट में चिल्का, पुलिकट एवं कोलेरू झील पाये जाते हैं। तट से दूर अरब सागार एवं बंगाल की खाड़ी में कई द्वीप पाये जाते हैं। एक अनुमान के अनुसार देश के सम्पूर्ण क्षेत्रफल का 10.6% भाग पर्वतों, 18.5% पहाड़ियों, 27.7% पठारों एवं शेष 43.2% मैदानों के रूप में पाया जाता है। इन विविध उच्चावच लक्षणों के आधार पर भारत को निम्नलिखित चार भौतिक विभागों में विभाजित किया गया है–

1.हिमालय पर्वत समूह

2.बृहद मैदान

3.प्रायद्वीपीय उच्च भूमि

4.तटीय मैदान एवं द्वीप समूह

1. हिमालय पर्वत समूह

भारत के उत्तरी भाग में अवस्थित यह महान पर्वत पश्चिम में पाकिस्तान की पूर्वी सीमा से लेकर पूर्व में म्यांमार की सीमा तक 2500 किमी. के लम्बाई में फैला है तथा 240 से 320 किमी. की चौड़ाइ एवं 5लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल में फैला हुआ है। यह तीन समानान्तर पर्वत श्रेणी से मिलकर बना है– (अ) हिमाद्री (अ) हिमांचल (स) शिवालिक।

हिमालय का विभाजन

अनुदैर्ध्य रूप में हिमालय दक्षिण से उत्तर तीन समानान्तर श्रेणियों एवं एक हिमालय–पार क्षेत्र में निर्मित हैं।

(अ) उप हिमालय या शिवालिक हिमालय

इसको बाह्य हिमालय भी कहते हैं। यह हिमालय पर्वत का दक्षिण में बाहरी विस्तार है जो सिन्धु के महाखण्ड से ब्रम्हपुत्र के महाखण्ड तक लगभग 2400 किमी. में विस्तृत है। शिवालिक हिमालय उत्तर के मैदान से हिमालय अग्र भ्रंश द्वारा अलग होता है। इस श्रंखला की औसत ऊंचाई 1300मीटर है लेकिन अधिकांशतः इसकी उंचाई 650 मीटर के आसपास ही है। यह 8 से 45किमी. चौड़ी है यह सतत रूप में नहीं पाया जाता है। इसके कई भाग है जिनको अलग–अलग नामों से जाना जाता है जिसमें जम्मू पहाड़ियां (जम्मू), डफला, मिरी, अबोर तथा मिश्मी पहाड़ियां (अरुणांचल प्रदेश) है। इसी प्रकार नेपाल में धांग व डण्डवा श्रेणी इसी क्रम की हैं। यह बलुआ पत्थर, सेंड रॉक, मृत्तिका, कांग्लोमरेट एवं चूना–पत्थर से बना है जो मुख्यतः ऊपरी टर्शियरी काल की हैं। इस क्षेत्र में कुछ विस्तृत समतल घाटियां भी पायी जाती हैं जिनको पूर्व में द्वार एवं पश्चिम में दून कहते हैं। देहरादून, कोठरीदून व पाटलीदून ऐसी ही घाटियां हैं।

(ब) लघु हिमालय या हिमांचल

इसको मध्य हिमालय या हिमांचल भी कहते हैं। यह शिवालिक हिमालय के उत्तर में फैला है। यह मुख्य सीमान्त क्षेप के (MBT) द्वारा पृथक की जाती है। इसकी उंचाई 1000से 4500 मीटर के मध्य तथा चौड़ाई 60 से 80 किमी के मध्य फैला है। लघु हिमालय की कश्मीर में फैला पीर पंजाल एवं हिमाचल में धौलाधर श्रेणियां, नागटिब्बा, मसूरी श्रेणी (कुमाऊ), महाभारत श्रेणी (नेपाल) प्रसिद्ध

है। यहां की शैलों में जीवाश्म का अभाव एवं अवसादी तथा कायान्तरित चट्टानें पायी जाती हैं। इस श्रेणी में स्लेट, चूना पत्थर व क्वार्टज की प्रधानता है। इसके ढालों पर कश्मीर में घास को मर्ग तथा उत्तराखण्ड में बुग्याल एवं पयार कहते हैं।

(स) बृहद हिमालय

इसे आन्तरिक या हिमाद्री भी कहते हैं। यह हिमालय की सबसे ऊंची एवं उत्तरी पर्वत श्रेणी है। वृहद हिमालय को लघु हिमालय से मुख्य केन्द्रीय भ्रंश पृथक करता है। इसका विस्तार पूर्व (ब्रम्हपुत्र) से पश्चिम (सिन्धु) में एक चाप के रूप में है। इसकी औसत चौड़ाई 24किमी तथा औसत उंचाई 600 मीटर है। इसमें माउण्ट एवरेस्ट (8848 मीटर), कंचनजंगा (8598 मीटर), मकालू (8481 मीटर), धोलागिरी (8172मीटर), मनसालू, चोआयु, नंगा पर्वत (8126 मीटर) तथा अन्नपूर्णा (8078 मीटर) प्रमुख चोटियां हैं। इसमें बुर्जिल, जोजिला (कश्मीर), बारालप्चा (हिमांचल प्रदेश), थांगला, नीति, लिपूलेख (उत्तराखण्ड) एवं नाथुला, जेलेपला (सिक्किम) का उल्लेख किया जा सकता है। रूपशू एवं देवसाई उच्च मैदान भी यहीं स्थित हैं। इस हिमालय से गंगा, यमुना व उनकी सहायक नदियों का उद्गम होता है। मिलाम, जेमू व गंगोत्री आदि हिमनद महत्वपूर्ण हैं।

(द) ट्रांस हिमालय

ट्रांस हिमालय में काराकोरम व लद्दाख श्रेणियों को शामिल करते हैं। काराकोरम को कृष्णगिरी भी कहते हैं। जो सिन्धु नदी के उत्तर में स्थित है। इसकी औसत उंचाई 3100 मीटर से 3700मीटर के मध्य पायी जाती है। इसकी सबसे महत्वपूर्ण श्रेणी काराकोरम है जिसे उच्च एशिया का मेरुदण्ड कहा जाता है। इसमें K_2(8611 मीटर), हिडेन चोटी(8068 मीटर), ब्राड चोटी(8047 मीटर), एवं गशेर ब्रम(8035 मीटर) शिखर तथा नुब्राघाटी का सियाचिन 72 किमी. शिगार घाटी के ब्याफो और बाल्टारो 60किमी. और हुंजा घाटी के हिस्पर और बातुरा 57 किमी. बड़े हिमानी पाये जाते हैं।

पूर्वांचल की पहाड़ियां

इसका विस्तार भारत के उत्तर–पूर्वी भाग में है जिसे पूर्वांचल उच्च भूमि के नाम से जाना जाता है। इसमें मिश्मी एवं पटकोई बुम की पहाड़ियां प्रमुख है। नागा पहाड़ी नागालैण्ड एवं म्यांमार के मध्य एक जलविभाजक है पूर्वांचल की पहाड़ियों का दक्षिणतम विस्तार मिसो पहाड़ियां है जिन्हें लुशाई की पहाड़ियां भी कहते हैं। डाफला, मिश्मी पहाड़ियां तथा नागा पहाड़ियों सबसे उंची चोटी है।

2. बृहद मैदान

यह मैदान हिमालय श्रेणी के दक्षिण तथा प्रायद्वीप पठार के उत्तर में अवस्थित है। इसका कुल क्षेत्रफल 777000वर्ग किमी. है जिसमें सिंधु का मैदान, पंजाब, हरियाणा का मैदान, राजस्थान का मरुस्थल, गंगा का मैदान तथा असम की ब्रह्मपुत्र घाटी शामिल है। इस मैदान का निर्माण उत्तर में हिमालय पर्वत एवं दक्षिण में प्रायद्वीपीय भारत से आने वाली नदियों द्वारा लाये गये जलोढ़क पदार्थों के जमाव करने से बना है। इसकी औसत गहराई 1300से 1400 मीटर के मध्य है। उत्तर भारत के विशाल मैदान को स्थलाकृतिक भिन्नता के आधार पर निम्न पांच उपभागों में बांटा जा सकता है।

1. भाबर मैदान

यह शिवालिक का जलोढ़ पंख है। भाभर का मैदान शिवालिक के तलहटी से सिन्धु से तिस्ता नदी तक लगभग 8 से 16 किमी. की चौड़ाई में फैला है व उंचाई 200से 300 मीटर है। यह एक प्रकार का पर्वतपदीय मैदान है जो नदियों द्वारा लाये गये कंकड़, पत्थर, रेत, बजरी आदि के जमा होने से बना है। यह जमाव काफी पारगम्य है जिसमें छोटी सरितायें भूमिगत हो जाती हैं।

2. तराई मैदान

भाबर के दक्षिण 15 से 30किमी चौड़ा दलदली क्षेत्र फैला हुआ है जिसे तराई क्षेत्र के नाम से जाना जाता है। यहां लुप्त नदियां पुनः सतह पर प्रकट हो जाती हैं। ढाल के मंद और अपवाह के अभाव के कारण जल धरातल पर फैल जाता है जिससे यह क्षेत्र दलदल में बदल जाता है। इस क्षेत्र में अधिक नमी, घने वन, वन्य जीवन, मलेरिया बीमारी की प्रधानता पायी जाती है।

3. बांगड़ या भागड़ मैदान

यह नदी के बाढ़ सीमा से ऊपर पुरानी जलोढ़क से निर्मित उच्च भूमि है जिसमें संग्रयनों एवं अशुद्ध कैल्शियम कार्बोनेट या कंकड़ की बहुलता पायी जाती है। शुष्क क्षेत्र लवणीय एवं क्षारीय के कारण रेह कहा जाता है। बांगड़ मृदा में चिकनी मिट्टी की प्रधानता होती है जो कहीं कहीं दुमट एवं रेतीली दुमट में परिणत हो गई है।

4. खादर मैदान

नवीन काप द्वारा निर्मित नदियों के बाढ़ मैदान को खादर या बेट (पंजाब) कहते हैं। प्रतिवर्ष बाढ़ के दौरान नई जलोढ़ व रेत को लाया जाता है जो बहुत

ही उर्वरक होते हैं। इसमें बालू, रेत, पंक एवं चिकनी मृदा के जमाव पाया जाता है। इस मृदा में जीवाश्म पाया जाता है। पश्चिमी बंगाल, बिहार एवं पूर्वी उत्तर प्रदेश में खादर का विस्तार पाया जाता है।

5. डेल्टा मैदान

यह खादर मैदान का विस्तार ही है। इसका विस्तार निचली गंगा घाटी के लगभग 1.86 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैला है। इसमें पुरानी जलोढ़ व रेत, नये जलोढ़ व रेत तथा दलदल शामिल होता है। गंगा का डेल्टा एक सक्रिय डेल्टा है जो बंगाल की खाड़ी की ओर सतत विस्तार कर रहा है।

1.5 प्रादेशिक विभाजन

प्रादेशिक विशेषताओं के आधार पर गंगा मैदान को निम्न चार मध्य स्तरी प्रदेशों में बांटा गया है–

1. सिन्धु का मैदान

इसका निर्माण सिन्धु नदी द्वारा लाये जलोढ़कों से हुआ है। इस मैदान के उत्तर में मरुस्थली धरातल पाया जाता है जबकि पश्चिम के क्षेत्र में जमाव बांगर से हुआ है जो पुरातन जमाव है। इस मैदान का कुल क्षेत्रफल 50 हजार वर्ग किमी है। इसके दक्षिण के क्षेत्रों में रेतीली मृदा मिलती है जहां अनेक छोटी–छोटी झीलें पायी जाती हैं। प्राचीन लम्बे संकरे गड्डा की आकृति के मार्ग को धोरोस कहते हैं। जब धोरोस सूख जाते हैं तो लवणीय झील को ढॉढ़ कहते हैं।

2. पंजाब हरियाणा का मैदान

इसका विस्तार पंजाब, हरियाणा, दिल्ली में है। पंजाब का नामकरण पाँच नदियों के प्रवाह के कारण पड़ा है। झेलम, चिनाब, रावी, व्यास व सतलज पंजाब की प्रमुख नदियां हैं। इस मैदान का विस्तार 640 किमी. है जिसका कुल क्षेत्रफल 1.75 लाख वर्ग किमी. है। पंजाब में प्रवाहित होने वाली नदियों के मध्य का भाग दोआब कहलाता है। पंजाब मैदान के क्षेत्रफल निम्नलिखित हैं–

1.	सतजल और व्यास के मध्य–	बिस्त जलंधर दोआब।
2.	व्यास और रावी के मध्य–	बारी दोआब।
3.	रावी और चिनाब के मध्य–	रचना दोआब।
4.	चिनाब और झेलम के मध्य–	चाज दोआब।

5. चिनाब, झेलम और सिन्धु के मध्य– सिंधु सागर दोआब।

इन पांचों नदियों द्वारा लाकर बड़ी मात्रा में जलोढ़क जमा किये गये हैं, जिन्हें अब इन्हीं नदियों द्वारा काटकर अपना मार्ग बना लिए गये हैं।

3. गंगा का मैदान

यह उत्तरी मैदान का मध्यवर्ती मैदानी भाग है इसका निर्माण गंगा, यमुना, रामगंगा, घाघरा, गोमती व गंडक तथा प्रायद्वीपीय भारत से चम्बल, बेतवा, केन, सोन नदियों द्वारा लाये गये जलोढ़कों के जमाव से हुआ है। इस मैदान में बिहार, उत्तर प्रदेश, झाखण्ड व पश्चिम बंगाल राज्य स्थित है। सम्पूर्ण मैदान उप–विभागों में गंगा, यमुना, दोआब, रूहेलखंड का मैदान, अवध का मैदान, बिहार का मैदान, उत्तरी बंगाल का मैदान और राढ का मैदान प्रमुख हैं। गंगा के मैदान के पश्चिमी भाग को रूहेलखण्ड का मैदान तथा पूर्वी भाग को अवध का मैदान कहते हैं। जिसमें गंगा, यमुना दोआब सबसे बड़ा है। इसका सामान्य ढाल उत्तर से दक्षिण तक है। यह ढाल बहुत ही कम है जिसमें बांगर एवं खादर स्पष्ट दृष्टिगत होते हैं। गंगा–यमुना दोआब में अनेक स्थानों पर बांगर खादर से उंचे होते हैं तो इन्हें खोले कहते हैं। यहां के दोआब में मिलने वाले विस्तृत वायुढ़ जमावों को भूड़ कहते हैं। इस दोआब के पूर्व में रूहेलखण्ड का मैदान स्थित है। यह उत्तर प्रदेश में 35हजार वर्ग किमी. में फैला है।

4. ब्रह्मपुत्र का मैदान

इस मैदान का विस्तार असम में धुबरी से सदिया तक फैला हुआ है। इसकी असम में चौड़ाई केवल 90से 100किमी. ही है। ब्रह्मपुत्र नदी अपने साथ अत्यधिक मात्रा में मिट्टी बहाकर लाती है जो किसी अवरोधक के आते ही जमा हो जाती है। ब्रम्हपुत्र के मार्ग में अनेक छोटे बड़े द्वीप पाये जाते हैं, इसमें माजूली द्वीप सबसे बड़ा है। इसे यूनेस्को ने सन् 2000में विश्व विरासत स्थल घोषित किया है।

थार का रेगिस्तान

यह पंजाब के शुष्क मैदान का दक्षिणवर्ती विस्तार है जो आगे चलकर राजस्थान के शुष्क मैदान में मिल जाता है। यह मैदान 650 किलोमीटर लम्बा तथा लगभग 2 लाख वर्ग किमी. में विस्तृत है। यह मैदान एक उबड़–खाबड़ वाला है, जिसकी औसत उँचाई 325 मीटर है। इस क्षेत्र की प्रमुख नदी लूनी है। पश्चिमी भाग का रेतीला शुष्क मैदान तथा इसके एवं अरावली के मध्य समानान्तर रूप में स्थित भाग का राजस्थान बांगड़ प्रदेश कहते हैं।

3. प्रायद्वीपीय उच्च भूमि

यह भूमि उत्तरी मैदान के दक्षिण में त्रिभुजाकार रूप में फैला है। यह लगभग 16लाख वर्ग किलोमीटर में है। इसका विस्तार दक्षिणी–पूर्वी राजस्थान, मध्य प्रदेश, तेलंगाना, आन्ध्रप्रदेश, उड़ीसा, झारखण्ड, महाराष्ट्र, कर्नाटक, पूर्वी केरल, छत्तीसगढ़ व तमिलनाडु राज्य में फैला है। इस पठार की औसत उंचाई 600 से 900मीटर है। इसका ढाल पूर्व एवं दक्षिण–पूर्व की ओर है। यह पठार काफी प्राचीन होने के कारण लम्बे समय से अपरदनकारी क्रियाओं से भ्रंश एवं विभंजन की क्रियाएं भी सतत रूप में होती रही हैं। सम्पूर्ण प्रदेश को भू–आकृतिक विविधता के कारण निम्नलिखित उपभागों में विभाजित किया जा सकता है–

1. अरावली पर्वत श्रेणी

यह पठार के उत्तर–पश्चिम भाग में सबसे प्राचीन पर्वत है। इसका उद्‌गम प्रीकैम्ब्रियन काल में हुआ था। इसका विस्तार दिल्ली से लेकर दक्षिणी–पश्चिमी में गुजरात तक है। यह पर्वत काफी प्राचीन होने के कारण इस पर अपरदनकारी प्रक्रियें काफी समय से सक्रिय हैं जिससे यह वर्तमान में एक अवशिष्ट पर्वत का रूप धारण कर लिया है। इसका सर्वोच्च ऊंची चोटी गुरू शिखर (1722 मीटर) है। अरावली पर्वत एक महान जलविभाजक के रूप में स्थित है।

2. मालवा का पठार

यह पठार उत्तर में अरावली, दक्षिण में विंध्याचल तथा पूरब में बुंदेलखंड से घिरा है। इस पठार में चम्बल और बेतवा नदियां प्रवाहित होती हैं। यहां लावा का जमाव पाया जाता है जिससे काली मृदा का निर्माण हुंआ है। इसका विस्तार दक्षिण–पूर्वी राजस्थान, मध्य प्रदेश तथा दक्षिणी–पश्चिमी उत्तर प्रदेश में है।

3. बुन्देलखण्ड का पठार

इसमें उत्तर प्रदेश के 5 जनपदों (जालौन, झांसी, ललितपुर, हमीरपुर एवं बांदा) तथा मध्य प्रदेश के 4जनपदों (दतिया, टीकमगढ़, छतरपुर एवं पन्ना) का 54560वर्ग किलोमीटर क्षेत्र शामिल है। यह मुख्यतः रवेदार आग्नेय और कायान्तरित शिलाओं से निर्मित है। इसका प्रमुख विस्तार मध्य प्रदेश एवं उत्तर प्रदेश में है। इसकी औसत उंचाई 100 से 300मीटर है जिसमें इधर–उधर मेसा एवं बूटी भी मिलती है।

4. बघेलखण्ड का पठार

यह मालवा के पूर्व में भाण्डेर के पठार व कैमूर की पहाड़ियों के बाद मध्य प्रदेश एवं छत्तीसगढ़ की सीमा पर स्थित है। इस पठार के दक्षिण में मैकाल श्रेणी आ जाती है। इसका पूर्वी भाग ग्रेनाइट का व पश्चिमी भाग बलुआ पत्थर का बना हुआ है। इसके उत्तर से सोन नदी बहती है।

5. विंध्ययन उच्च भूमि

बुन्देलखण्ड के दक्षिण में तथा मालवा के पूर्वी में विंध्ययन उच्च भूमि एक कगार के रूप में पूर्व से पश्चिम में फैला है। इसकी संरचना समतल शिखर युक्त अभिनतियों के रूप में है। इस वर्ग की प्रमुख श्रेणियां कैमूर, रीवा व भाण्डेर का पठार है। इस पठार की सामान्य उंचाई 300से 650मीटर है। प्राचीन युग की परतदार चट्टानों से निर्मित यह पर्वत पठार उत्तर भारत को दक्षिण भारत से अलग करता है।

6. छोटानागपुर का पठार

इसका विस्तार झारखण्ड में है। यह सोन नदी के पूर्व में स्थित है। यह पठार हजारीबाग में सर्वाधिक उंचा है जहां इसकी उंचाई 1070मीटर है। रांची भी इसी पठार का भाग है। रांची के उत्तर में हजारीबाग के अतिरिक्त कोडरमा का पठार है इसके पूर्व में नेतरहाट एवं जासपुर घाट मिलते हैं। ये पठार लेटेराइट के समतल टोपीनुमा आवरण रखता है जिन्हें पाट कहते हैं।

7. दक्कन का पठार

यह पठार क्रिटेशियस काल में हुए दरारी उद्‌गार से फैला लावा द्वारा बना हुआ है। इसकी औसत गहराई 600से 1500मीटर है। यह पठार प्रायद्वीपीय भारत के बड़े भाग पर फैला हुआ है। इसका विस्तार उत्तर में सतपुड़ा, मैकाल श्रेणी, नर्मदा एवं ताप्ती घाटियों के मध्य स्थित है। यह पश्चिम राजपिपला पहाड़ियों से पूर्व में महादेव पहाड़ी तक है। सतपुड़ा की धूपगढ़ (1350 मीटर) तथा महादेव की पंचमढ़ी (1117 मीटर) सबसे उंची चोटी है। सतपुड़ा के दक्षिण में लगभग सम्पूर्ण महाराष्ट्र में बेसाल्ट से निर्मित दक्कन का पठार स्थित है। इसके तीन ओर गोदावरी, भीमा एवं कृष्णा नदी घाटियां हैं। गोदावरी नदी तेलंगाना पठार को दो भागों में बांटता है। कृष्णा नदी के दक्षिण में रायलसीमा पठार है।

8. कर्नाटक या मैसूर का पठार

कर्नाटक पठार का विस्तार कर्नाटक राज्य एवं केरल के कन्नूर, कासरगौड़, कोझिकोड एवं वायनाड जनपदों में लगभग 183340 वर्ग किमी क्षेत्र में फैला है।

इसमें आर्कियन से लेकर नूतन युग तक शैले पायी जाती हैं। धारवाड़ क्रम के फाइलाइट शिष्ट एवं स्लेट के जमाव धारवाड़, गडग, बेल्लारी, शिमोगा, देवनगरी एवं चित्रदुर्ग जनपदों में पाया जाता है जिसमें लोहा, मैगनीज, तांबा, सीसा एवं स्वर्ण (कोलार खान) के भण्डार निहित हैं। इस क्षेत्र की औसत उंचाई 600 से 900मीटर के बीच पाई जाती है। मूलनगिरी (1923 किमी.) सबसे उंची चोटी है। इसे तीन उप भागों में बांटा जा सकता है–**क–मलनाद, ख–उत्तरी उच्चभूमि, ग–दक्षिणी उच्च भूमि।**

9. पश्चिमी घाट

इसको सहयाद्रि भी कहते हैं इसका विस्तार पश्चिमी सागर तट के समानान्तर लगभग 1600किमी. कि लम्बाई में ताप्ती के मुहाने से कन्याकुमारी तक है। यह एक ब्लॉक पर्वत है जिसका निर्माण स्थल के एक खण्ड का अरब सागर में अवसंवलन के कारण हुआ है। इसका पश्चिमी ढाल तीव्र एवं खड़ा है जबकि पूर्वी भाग मन्द ढाल का है। पश्चिमी घाट प्रायद्वीप के वास्तविक जलविभाजक का निर्माण करते हैं। पश्चिम की ओर प्रवाहित होने वाली नदियां सकरे घाटी से होकर तीव्र गति से अरब सागर की ओर बहती हैं एवं जल प्रवाह की भी निर्माण करते हैं। इसकी औसत उंचाई 1000–1300मी. पाई जाती है। इस पर्वत का निर्माण बेसाल्ट से हुआ है। गोदावरी, भीमा एवं कृष्णा नदियों का उद्‌गम इसी क्षेत्र में स्थित हैं। हरिशचन्द्रगढ़ (1424 मीटर), महाबलेश्वऱ (1438 मीटर), कल्सुबाई़ (1646 मीटर) एवं सल्हर (1567 मीटर) इस क्षेत्र की प्रमुख चोटियां हैं। थालघाट एवं भोरघाट यहां के प्रमुख दर्रे हैं। नीलगिरी के समीप पश्चिमी घाट पूर्वी घाट से मिलकर एक पर्वत ग्रन्थ का निर्माण करते हैं जिसका सर्वोच्च शिखर दोदाबेट्टा (2637 मीटर) है। नीलगिरी से दक्षिण पालघाट दर्रा तमिलनाडु को केरल से जोड़ता है। कोडाइकलान नामक पर्यटन स्थल पालनी की पहाड़ी पर तथा उटी (उटकमंडलम) नामक पर्यटन स्थल नीलगिरी कि पहाड़ी पर स्थित है।

10. पूर्वी घाट

इसका विस्तार बंगाल की खाड़ी के समानान्तर लगभग 1300 मीटर में है। यह एक असतत क्रम है जो कटे–फटे रूप में है। इसकी औसत उंचाई 600मीटर है। इसका उत्तरी विस्तार छत्तीसगढ़ के दक्षिण में दण्डकारण्य सीमा पर ओडिशा के फुलवनी से आन्ध्र प्रदेश के ऐलरू तक है तथा दक्षिणी भाग गोदावरी नदी के दक्षिण से नीलगिरी तक है। इसको महानदी, गोदावरी, कृष्णा व कावेरी ने काट दिया है। यहां सिंगुराजु (उड़ीसा) 1516मीटर जबकि महेन्द्रगिरी 1501

मीटर इस क्षेत्र की दूसरी सबसे उंची चोटियां है। खोण्डमल, नल्लामलाई, बेलिकोंडा, पालकोंडा, पंचमलाई तथा शेवराय व जावदी आदि नामों से भी जाना जाता है। कुडप्पा एवं कुर्नुल तक ही पहाड़िया सतत रूप में पायी जाती हैं।

11. शिलांग का पठार

यह प्रायद्वीपीय पठार का भाग है जो मेघालय में स्थित है। यह पठार पूर्व में सतत रूप में था लेकिन अधोभ्रंसन के कारण यह पृथक हो गया है जिसे राजमहल गेप कहते हैं। इस भ्रंशन में गंगा–ब्रह्मपुत्र नदियों के द्वारा जलोढ़ पदार्थों से भर दिया गया है। इसकी लम्बाई 240 किमी. एवं 96किमी. चौड़ी है। इसका औसत उंचाई 1000–1300मीटर के मध्य है। इस पठार के उत्तर में मिकिर एवं रेगंमा की पहाड़ियां है। यहां की प्रमुख चोटियों में शिलांग (1823 मीटर) व गारो पहाड़ियों की सर्वोच्च चोटी नाकरेक है।

4. तटीय मैदान एवं द्वीप समूह

इसका विस्तार 7516.6किलोमीटर सागरीय तट रेखा के सहारे स्थित मैदान है इसमें 6100 किमी. मुख्य भूमि की तट रेखा तथा शेष द्वीप समूह की है। इसका विस्तार पश्चिम तथा पूर्व तटीय मैदान शामिल है।

1. पूर्वी तट

इसका विस्तार पश्चिम बंगाल में गंगा के मैदान से लेकर कन्याकुमारी तक है। यह तट उन्मज्जन प्रकार का है जहां अपतटीय रोधिकायें, सागरीय पुलिन, लैगून तथा रेतीले कटक मिलते हैं। यह तट केप कोमोरिन से कृष्णा एवं गोदावरी डेल्टा तक लगभग 1100किमी में 100से 130किमी. चौड़ा है। इसकी औसत चौड़ाई 80 से 150 किमी है। उड़ीसा (उत्कल), आन्ध्रप्रदेश तथा तमिलनाडु (कोरोमण्डल) में इसका विस्तार है। यह तट कम कटा–फटा होने के कारण यहां बन्दरगाहों की संख्या कम पाया जाता हैं।

2. पश्चिमी तटीय मैदान

यह प्रायद्वीपीय भारत के पश्चिमी तट के सहारे एवं अरब सागर के मध्य एक सकरी पट्टी के रूप में गुजरात से कन्याकुमारी तक विस्तृत है। इसकी औसत चौड़ाई 64किमी. तथा औसत उंचाई 150 मीटर है। यह 1600 किमी. लम्बा है। नर्मदा, ताप्ती, माही व साबरमती इस मैदान में पूर्व से पश्चिम में तीव्र ढाल के अनुरूप प्रवाहित होता है। यह सम्पूर्ण मैदान तीन भागों में विभक्त किया

जा सकता है। प्रथम– दमन एवं दीव का काठियावाड़ तट, दूसरा दमन एवं गोवा के मध्य कोंकण तट व तीसरा गोवा से कन्याकुमारी तक मालाबार तट है।

द्वीप समूह

भारत के सागरों में दो प्रमुख द्वीप समूह हैं। अरब सागर में लक्षद्वीप एवं अण्डमान एवं निकोबार द्वीप समूह, इसके अतिरिक्त कुछ द्वीप बिखरे रूप में भी हैं। लक्षद्वीप समूह में 25द्वीप हैं जो 29वर्ग किमी. में फैला है। इसमें मिनिकाय लक्षद्वीप समूह का सबसे बड़ा एवं बत्रा सबसे छोटा द्वीप है। कवरती द्वीप लक्षद्वीप की राजधानी है। लक्षद्वीप समूह प्रवाल से बना है।

बंगाल की खाड़ी के द्वीपों में प्रमुख अण्डमान एवं निकोबार द्वीप अवस्थित हैं। 204द्वीप लगभग 590 किमी. की लम्बाई में फैला है। अण्डमान का सबसे उंची चोटी सैण्डल चोटी है। इस द्वीप समूह का निर्माण टर्शियरी काल में हिमालय के साथ बना माना जाता है जबकि कुछ विद्वान ज्वालामुखी से बना मानते हैं। अण्डमान एवं निकोबार द्वीप समूह का क्षेत्रफल 8326.83 वर्ग किमी है। अण्डमान द्वीप समूह में बैरन एवं नारकोण्डम सक्रिय ज्वालामुखी द्वीप हैं। कुछ अन्य द्वीप में गंगा के मुहाने पर न्यूमूर द्वीप, हुगली के सामने सागर द्वीप, महानदी व ब्राह्मणी के डेल्टा में शोर्ट द्वीप व व्हीलर द्वीप, चिल्का के उत्तर में भासरा माडरा द्वीप प्रमुख हैं। क्रोकोडाइल, अण्डाकोटा, पम्बन द्वीप हैं।

1.6 अपवाह तन्त्र

भारत में प्रतिवर्ष 1869अरब घन मीटर धरातली जल राशि का आकलन किया गया है। सतही जल के मुख्य साधन में नदी, झील, तालाब तथा पोखरा आदि है। सतही जल का अधिकांश भाग नदी के माध्यम से बहता है। भारत में विशाल अपवाह तन्त्र व लम्बाई वाली विभिन्न नदियां हैं।

अपवाह तन्त्र से अभिप्राय नदियों के उस तन्त्र से है जिससे धरातलीय जल प्रवाहित होती है।

भारत का अपवाह तन्त्र को दो प्रमुख तन्त्रों में विभाजित किया जा सकता है–

1.बंगाल की खाड़ी का अपवाह तन्त्र

2.अरब सागरीय अपवाह

इन्हें दिल्ली श्रेणी, अरावली, सहायाद्रि एवं अमरकंटक द्वारा एक–दूसरे से एक–दूसरे से अलग किया जाता है। देश की 77 प्रतिशत अपवाह तन्त्र बंगाल की खाड़ी तथा 23प्रतिशत अरब सागरीय अपवाह तन्त्र का है। इस प्रकार

उत्पत्ति के आधार पर भारत की अपवाह को हिमालय अपवाह एवं प्रायद्वीपीय अपवाह में विभाजित किया जा सकता है।

भौमिकीय संरचना व शैल की विशेषता के आधार पर भारत की नदियां विभिन्न प्रकार के अपवाह प्रतिरुप का निर्माण किया है। सिन्धु, ब्रह्मपुत्र, सतलुज एवं अरुणा नदियों द्वारा पूर्ववर्ती, दमोदर, सुवर्णरेखा, चम्बल एवं बनास द्वारा अध्यारोपित, गंगा के मैदान एवं दक्षिण भारत की नदियों द्वारा द्रुमाकृतिक, कोसी और इसकी सहायक नदियों द्वारा आयताकार, सोन, महानदी एवं नर्मदा द्वारा अरीय, सिहं भूमि में जालीदार, बिजावर एवं पश्चिमी तटीय मैदान में समानान्तर, चम्बल, केन सिन्ध, बेतवा एवं सोन द्वारा परिवर्ती, नर्मदा, ताप्ती, पेरियार नदियों द्वारा अनुगामी अपवाह प्रतिरूप का निर्माण किया जाता हैं।

क. हिमालयी अपवाह

इस अपवाह में मुख्य रूप से सिन्धु, गंगा एवं ब्रम्हपुत्र घाटी क्षेत्र शामिल हैं। चहां की अधिकांश नदियां सतत वाही हैं। सिन्धु, ब्रम्हपुत्र, सतलुज, अलकनन्दा, करनाली, गंडक, कोसी आदि नादियां पूर्ववर्ती है जो हिमालय के उद्‌गम के पहले से ही प्रवाहित है। हिमालयी अपवाह में मुख्य तीन नदी तन्त्रों को सम्मिलित किया जाता है–

1. सिन्धु नदी तन्त्र

सिन्धु नदी का उद्‌गम कैलाश चोटी के पूरब में बोखर चू हिमानी के पास से है। यह लद्‌दाख श्रेणी को काटकर गिलगिट के पास एक गहरा गार्ज का निर्माण करता है। इसकी कुल लम्बाई 2880 किमी. तथा अपवाह क्षेत्र 1165000वर्ग किमी. है लेकिन भारत में 321290वर्ग किमी. है। इसके बाएं एवं दाएं दोनों तरफ से कई हिमालयी नदियां आकर मिलती हैं। इसमें गरतंग, जास्कर, द्रास, श्योक, शिगार, नुब्र, गिलगिट और हुंजा प्रमुख है। मिठान कोट के उत्तर में इसमें पंचनद (सतलज, ब्यास, रावी, चिनाब एवं झेलम) का मिलाप होता है तथा अरब सागर में विलीन हो जाती हैं।

झेलम सिन्धु की प्रमुख सहायक नदी है जो शेषनाग से निकलकर त्रिम्मू के पास चिनाब से मिल जाती है। इसका भारत में कुल अपवाह क्षेत्र 28490वर्ग किमी. है।

चिनाब को आसिकनी या चन्द्रभागा भी कहते हैं। यह बारालाचा ला के पास से निकलकर पाकिस्तान में प्रविष्ट हो होती है। इसकी कुल लम्बाई 1180किमी. तथा अपवाह क्षेत्र 26755वर्ग किमी है।

रावी नदी को परुषणी या इरावती भी कहते हैं। इसका उद्‌गम हिमांचल प्रदेश के बंगाहल बेसिन से होता है। इसकी कुल लम्बाई 725किमी तथा अपवाह क्षेत्र 5957 वर्ग किमी है।

ब्यास (विपास या अर्गिकिया) का उद्‌गम ब्यासकुण्ड से है तथा हरिके पास सतलुज में मिल जाती है। इसकी कुल लम्बाई 470किमी तथा अपवाह क्षेत्र 26900वर्ग किमी है।

सतलज का उद्‌गम राक्षस झील से होती है। तिब्बत में लांगचेन खम्वाब के नाम से जाना जाता है। यह मिठानकोट के पास सिन्धु से मिल जाती है। इसकी कुल लम्बाई 1150किमी तथा अपवाह क्षेत्र 24087 वर्ग किमी. है।

2. गंगा नदी तंत्र

गंगा नदी तन्त्र का विस्तार देश के लगभग एक–चौथाई क्षेत्र पर पाया जाता है। इससे उपजाऊ मैदान का निर्माण होता है। गंगा नदी का उद्‌गम उत्तराखण्ड के उत्तरकाशी जनपद के गोमुख के निकट गंगोत्री हिमनद से होती है। देवप्रयाग में भागीरथी अलकनन्दा के मिलने से संयुक्त धारा को गंगा के नाम से जाना जाता है। बांग्लादेश में इस नदीको पद्‌मा कहते हैं। यह भागीरथी–हुगली के रूप में पश्चिम बंगाल में प्रवेश करती है और बंगाल की खाड़ी में गिरती है। इसकी कुल लम्बाई 2525किमी. तथा कुल अपवाह क्षेत्र 951600वर्ग किमी. है। गंगा नदी के बाएं तट पर रामगंगा, गोमती, टोन्स, घाघरा, गण्डक, बाघमती और कोसी सहायक नदियां आकर मिलती हैं तथा दाये तट के सहारे यमुना, सोन, पुनपुन, दामोदर और रूपनाराण हैं। यमुना नदी की कुल लम्बाई 1384किमी तथा अपवाह क्षेत्र 366228 वर्ग किमी है। इसका उद्‌गम बन्दरपूंछ के पास यमुनोत्री हिमनद से हुआ है तथा गंगा के समानान्तर प्रवाहित होकर प्रायागराज में गंगा से मिल जाती है। इसकी प्रमुख सहायक नदी में टोंस, गिरि, चम्बल, सिन्ध, बेतवा, केन एवं हिंदन हैं।

चम्बल नदी मध्य प्रदेश के मालवा पठार के महू के निकट से निकलती है। काली सिन्ध, सिप्ता, पार्वती एवं बनास इसकी प्रमुख सहायक नदियां है। चम्बल ने अपरदन से उत्खात या बिहड़ बना रखा है।

रामगंगा नदी का उद्‌गम अल्मोडा जनपद के द्वाराघाट के पास से है तथा कन्नौज के पास गंगा से मिल जाती है।

घाघरा नदी की उत्पत्ति मापचा चुंगी हिमनद से होता है। छपरा के पास गंगा नदी से मिल जाती है। इसकी कुल लम्बाई 1080किमी है।

गंडक नदी काली गंडक एवं त्रिशूल गंगा नदियों के मिलने से बनती है। हाजीपुर के समीप गंगा नदी में मिल जाती है। इसकी कुल लम्बाई 425 किमी. तथा अपवाह क्षेत्र भारत में 9540वर्ग किमी है।

कोसी नदी गंगा की बड़ी सहायक नदी है। यह सात नदियों के मिलने से बनती हैं। कोसी अपना मार्ग परिवर्तन के कारण प्रसिद्ध है इसी लिए इसे बिहार का शोक कहते हैं। यह मनिहारी के पास गंगा से मिल जाती है। इसकी कुल लम्बाई 730किमी. तथा भारत में इसका अपवाह क्षेत्र 21500वर्ग किमी है।

सोन नदी गंगा नदी के दाहिने तट की प्रमुख सहायक नदी है। कुल लम्बाई 780किमी. तथा अपवाह क्षेत्र 71900वर्ग किमी. है। यह अमरकंटक से निकलकर मानेर के पश्चिम में गंगा से मिल जाती है।

दमोदर नदी को बंगाल का शोक कहा जाता है। इसका उद्‌गम छोटा नागपुर पठार से है। इसकी लम्बाई 541किमी तथा अपवाह क्षेत्र 22000वर्ग किमी. है।

3. ब्रम्हपुत्र नदी तंत्र

इसका कुल विस्तार 580000वर्ग किमी. क्षेत्र पर है जिसमें से 258008 वर्ग किमी क्षेत्र भारत में स्थित है। इसका स्रोत तिब्बत में मानसरोवर झील के निकट चेमायुंग डंग हिमानी में है। यह भारत में मध्य हिमालय को काटकर सियांग या दिहांग नाम से भारत में प्रवेश करती है इसके बाद इसे ब्रम्हपुत्र के नाम से जानते हैं। इसमें सुबनश्री, कामेंग, धनश्री, जैभोरली, मानस, संकोश एवं तिस्ता उत्तर से तथा बूढ़ी दीहांग दिसांग एवं कोपाली दाये से आकर मिलती हैं।

ख. प्रायद्वीपीय अपवाह के नदी तन्त्र

इसके अन्तर्गत निम्न नदियों को शामिल किया गया है।

नर्मदानदी इसका उद्‌गम अमरकंटक के पश्चिमी भाग से है। विन्ध्याचल एवं सतपुड़ा के मध्य भ्रंश घाटी से प्रवाहित होती है। अरब सागर में एश्चुअरी बनाती हुई गिरती है। इसकी कुल लम्बाई 1312किमी. तथा कुल क्षेत्र 98795किमी. है।

ताप्ती नदी भी भ्रंश से होकर प्रवाहित होती है और अरब सागर में अपना जल गिराती है। इसका उद्‌गम बेतूल जनपद में मुल्तान के पास सतपुड़ा श्रेणी से है। 724किमी लम्बी तथा 65145वर्ग किमी क्षेत्र का जल बहा कर ले जाती है।

साबरमती नदी मेवाड़ की पहाड़ी से निकलकर खम्भात की खाड़ी में गिरती है इसकी कुल लम्बाई 320किमी है।

महानदी रायपुर जिले के सिहावा के पास से निकलती है और पाराद्वीप के पास बंगाल की खाड़ी में गिरती है। शिवनाथ, हंसदेव, मांद और ईब, जोक, उंग एवं तेल प्रमुख सहायक नदियां हैं। यह 858किमी. लम्बी है।

सुवर्णरेखा का उद्गम रांची के पठार से है तथा पश्चिम बंगाल की खाड़ी में गिरती है। इसकी कुल लम्बाई 395किमी. है।

गोदावरी नदी प्रायद्वीपीय भारत की सबसे बड़ी नदी है जो 1464किमी कि लम्बाई मे 312812वर्ग किमी क्षेत्र का जल को भी समाहित करती है। प्रवरा, पूर्ण, मंजरा, पेनगंगा, वेनगंगा, वर्धा, प्राणहिता, इन्द्रावती, ताल एवं सबरी इसकी प्रमुख सहायक नदियां हैं।

कृष्णा नदी प्रायद्वीपीय भारत की दूसरी सबसे बड़ी नदी है यह महाबालेश्वर के निकट से निकलती है। यह 1400किमी. लम्बाई में 258948वर्ग किमी क्षेत्रफल में विस्तृत है। सहायक नदियों कोयना, येरला, बरना, पंचगंगा, दूधगंगा, घाटप्रभा, मालप्रभा, भीमा, तुंगभद्रा और मूसी है।

पेन्नर नदी की उत्पत्ति कर्नाटक के कोलार जनपद से है। इसका 55213वर्ग किमी अपवाह क्षेत्रफल है।

कावेरी नदी का उद्गम कर्नाटक के कोडगू जनपद की ब्रम्हगिरी पहाड़ी से है तथा अपना जल बंगाल की खाड़ी में विसर्जित करती है। कावेरी को दक्षिणी गंगा भी कहा जाता है। सहायक नदियों में हेमावती, लोकपावनी, शिम्शा, हेरंगी अर्कावती, लक्ष्मण तीर्थ, सुवर्णवती, भवानी एवं अम्रावती है।

ताम्रपर्णी नदी का उद्गम पश्चिमी घाट के अगस्तमलाई से है जो मन्नार की खाड़ी में गिरती है।

लूनी नदी अरावली पहाड़ी से निकलकर कच्छ के दलदल में लुप्त हो जाती है। इसकी सहायक नदी में सुरसती, बुन्दी, सुकरी एवं जवाई है।

पश्चिमी सहायाद्रि की नदियां

इसके अन्तर्गत सूर्या, कालू, सावित्री, गोवा की माण्डवी, तेरखल, चपोरा, जुवरी, साल, तालपोना, काली नदी, गंगावती, शरावती, सुवर्णा, नेत्रवती बेपोर, पोन्नानी, भरतपूझा, पेरियार और पम्बा हैं।

सारांश

आपने इस प्रथम इकाई में भारत की भौमिकीय संरचना, भौतिक प्रदेश तथा अपवाह तन्त्र से सम्बन्धित अध्ययन किया है। आप भारत के भौमिकीय संरचना के विकास में प्री कैम्ब्रियम युग की शैलें, पुराण समूह की शैलें, द्रविड़ियन युग की शैले तथा आर्यन युग की शैले, भौतिक प्रदेश में हिमालय पर्वत समूह, बृहद मैदान, प्रायद्वीपीय उच्चभूमि और तटीय मैदान और द्वीप समूह तथा अपवाह तन्त्र में अपवाह तन्त्र, हिमालयी अपवाह तन्त्र, प्रायद्वीपीय अपवाह तन्त्र तथा पश्चिमी घाट की नदियों को समझ पाये होंगे।

1.8 शब्द सूची

पूर्ववर्ती	Antecedent	तुंगता	Altitude
उत्खात भूमि	Bad land	द्रोणी	Basin
अनुगामी	Consequent	जलोढ़ पंख	Alluvial Fan
बालूकामय	Arenaceous	बांगड़ मैदान	Bangar Plain
भाबर मैदान	Bhabar Plain	द्रुमाकृतिक	Denatritic

1.9 परिक्षापयोगी प्रश्न

प्रश्न–1 करेवा भूआकृति कहां पायी जाती है?

(क) उत्तरी–पूर्वी हिमालय (ख) पूर्वी हिमालय

(ग) हिमांचल उत्तराखण्ड हिमालय (घ) कश्मीर हिमालय

प्रश्न–2 खनिज संसाधन की दृष्टि से भारत का सर्वाधिक महत्वपूर्ण भौमिकी क्रम–

(क) विन्ध्य (ख) दक्कन ट्रैप (ग) धारवाड़ (घ) गोण्डवाना

प्रश्न–3 भारत में कैम्ब्रियन पूर्व महाकल्प की चट्टानें अधिकांशतः पायी जाती हैं–

(क) शिवालिक में (ख) पश्चिमी घाट में

(ग) अरावली में (घ) गोंडवाना में

प्रश्न–4 भारत में कोयला उत्पन्न करने वाली भौमिकी समूह–

(क) धारवाड़(ख) विन्ध्यन (ग) गोंडवाना(घ) कुडप्पा

प्रश्न–5 भू वैज्ञानिक संरचना की दृष्टि से मेघालय है–

(क) शिवालिक सदृश (ख) नागा–पटकोइ सदृश

(ग) अरावली सदृश (घ) छोटानागपुर सदृश

1.10 उपयोगी पुस्तकें व संदर्भ–

1. प्रो0 जगदीश सिंह– भारत : भौगालिक आधार एवं आयाम, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर।

2. प्रो0 आर0सी0 तिवारी भारत का भूगोल, प्रवालिका प्रकाशन।

3. डॉ0 बी0सी0 जाट, भारत का भूगोल, पंचशील प्रकाशन, जयपुर

4. सिंह, आर0एल0– इण्डिया : रीजनल जियोग्राफी एन0जी0एस0आई0, गोरखपुर।

5. Nag, P. and Sengupta, S- Geography of India, Concept Publishing company, New Delhi.

4.11 अभ्यास प्रश्न

प्रश्न–1भौमिकीय संरचना के विकास का वर्णन कीजिए।

प्रश्न–2आर्यन युगीन शैलों का वर्णन कीजिए।

प्रश्न–3हिमालय पर्वत समूह का वर्णन कीजिए।

प्रश्न–4भारत का वृहद मैदान का वर्णन कीजिए।

प्रश्न–5हिमालयी नदियों का वर्णन कीजिए।

प्रश्न–6प्रायद्वीपीय नदियों का वर्णन कीजिए।

MAGO-102 भारत का भूगोल

इकाई–2 : मानसून की उत्पत्ति एवं संकल्पना

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 मानसून की उत्पत्ति

2.4 मानसून की उत्पत्ति की संकल्पनायें

2.5 मौसमी दशाएं

2.6 सारांश

2.7 शब्द सूची

2.8 परीक्षोपयोगी प्रश्न

2.9 उपयोगी पुस्तकें

2.10 अभ्यास प्रश्न

2.1 प्रस्तावना–

इस इकाई के अन्तर्गत आप मानसून, मानसून की उत्पत्ति, मानसून से सम्बन्धित संकल्पनायें (प्राचीन एवं नवीन) तथा मौसमी दशाओं का अध्ययन करेंगे। भारतीय मानसून की संकल्पना में तापीय संकल्पना, गतिक संकल्पना, जेट वायु संकल्पना, तिब्बत पठार से सम्बन्धित संकल्पना तथा मौसमी दशाओं में शीत ऋतु, ग्रीष्म ऋतु, वर्षा ऋतु एवं शरद ऋतु का वर्णन देखेंगे। इसमें समझेंगें कि मानसून की उत्पत्ति कैसे होती है कौन–कौन कारक इसके उपत्ति में सहायक है। मौसमी दशा में तापमान, वर्षा, आर्द्रता, वायुदाब, पवने तथा मानसून का आगमन।

2.2 उद्देश्य

भारत के मानसून विशद् अध्ययन के बाद आप–

- मानसून की उत्पत्ति को समझ सकेगें।
- मानसून की उत्पत्ति में कौन–कौन कारक विद्यमान है।
- मानसून की उत्पत्ति से सम्बन्धित संकल्पनाओं को समझ सकेंगे।
- मौसमी दशाओं को समझ सकेंगे।

2.3 मानसून की उत्पत्ति–

भारतीय जलवायु मानसूनी है। इसकी प्रमुख विशेषताएं ग्रीष्म एवं शीतकाल में मौसमी दशाओं में विशेष परिवर्तन है। ग्रीष्म काल में अधिक तापमान, वायुदाब प्रवणता अधिक, आर्द्रता एवं व्यापक वर्षा है जबकि शीतकाल में सामान्य तापमान कम, कम वायुदाब प्रवणता, सापेक्षिक आर्द्रता कम तथा सामान्यतः वर्षा का अभाव। मानसूनी जलवायु में वर्षा ग्रीष्म काल में 2 से 4 माह तक सीमित, अनिश्चितता एवं अनियमितता, वर्षा की मात्रा में असमानता तथा विभंगता होती है। इसका प्रभाव फसल उत्पादन, जनजीवन तथा अर्थ तंत्र पर पड़ता है। भारतीय उपमहाद्वीप में मानसूनी जलवायु की प्रमुख विशेषताएं हैं–

इसमें प्रचुर वर्षा तथा अति न्यून वर्षा की दो ऋतु स्पष्ट होती है। वर्षा की अधिकांश मात्रा ग्रीष्म काल में तथा कम वर्षा की मात्रा शीतकाल में होती है। वर्षा की मात्रा में वर्षा ऋतु के दौरान वर्ष प्रतिवर्ष औसत से अधिक विचलन होने की संभावना बनी रहती है। सामान्यतः 5 वर्ष के अवध में केवल एक ही वर्ष दीर्घ औसत वर्षा की होती है अन्य 4 वर्षों में वर्षा की मात्रा में बहुत अधिक उतार–चढ़ाव पाया जाता है। जून माह के कुछ तिथियों में वर्षा हो जाने की लोग अपेक्षा करते हैं लेकिन वर्षा प्रारंभ होने की कोई निश्चित नहीं होती है। कभी वर्षा अपेक्षित तिथि से पहले तो कभी तिथि से काफी बाद में प्रारंभ होती है। इसी के साथ वर्षा की समाप्ति की तिथि भी अनिश्चित होती है। भारत के जिस क्षेत्र में वर्षा कब होती है वहां वर्षा की अनिश्चितता कम पाई जाती है। शीतकाल में संपूर्ण भारत में न्यून वर्षा होती है इस समय पंजाब तथा तमिलनाडु के भाग में थोड़ी बहुत वर्षा होती है जबकि संपूर्ण भारत प्रायः शुष्क रहता है। सामान्यतः सर्वत्र भारत मे सालों भर पर्याप्त तापमान बना रहता है परंतु अत्यधिक ऋत्विक घट – बड़ होती है।समुद्रतटीय, द्वीपीय क्षेत्र तथा समुद्र के आस पास के क्षेत्र में ऋत्विक तापांतर कम तथा विशाल मैदान के उत्तर पश्चिम में ऋत्विक तापांतर अधिक होता है। सामान्य तौर पर यहां में ग्रीष्म ऋतु में भी दो प्रकार का मौसमी दशाएं पाई जाती हैं– प्रथम वर्षा विहीन तथा द्वितीय वर्षा युक्त। मध्य मार्च से जून तक देश के अधिकांश क्षेत्र पर उच्च तापमान (35 डिग्री सेल्सियस से अधिक) रहता है। उत्तरी मैदानी भाग में प्रायः लू का प्रकोप बना रहता है। मध्य जून से मध्य अक्टूबर तक संपूर्ण उपमहाद्वीप में वर्षा होती है जिससे तापमान तो कम हो जाता है लेकिन सापेक्षिक आर्द्रता अधिक रहती है।

मानसून शब्द की उत्पत्ति अरबी भाषा के शब्द मौसिम से हुआ है जिसका तात्पर्य 'मौसम या ऋतु' है। इस शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग अरब के नाविकों द्वारा किया गया है। नाविकों द्वारा अरब सागर में चलने वाली उन हवाओं के लिए

किया जाता था जिसका मौसम के अनुसार दिशा परिवर्तन हो जाता था, अर्थात् ये हवायें जाड़े में उत्तर–पूर्व से दक्षिण–पश्चिम तथा गर्मी में दक्षिण–पश्चिम से उत्तर–पूर्व की ओर चला करती थी। हवा की दिशा में मौसमी परिवर्तन भारतीय मानसून की सबसे प्रमुख विशेषता है।

मानसून एक जटिल जलवायु प्रक्रिया का अंग है। वैज्ञानिकों एवं शोधों में हुए नवीन–नवीन प्रयोगों तथा जैसे–जैसे वायुमण्डलीय सम्बन्धित आंकड़े सुलभ होते गये वैसे–वैसे इसके जटिलता से रूबरू होते जा रहे हैं।

2.4 मानसून उत्पत्ति की संकल्पनायें–

मानसून उत्पत्ति से सम्बन्धित संकल्पनाओं का विवरण इस प्रकार है।

2.4.1 तापीय संकल्पना–

इस संकल्पना को क्लासिक सिद्धान्त भी कहा जाता है जिसका प्रतिपादन एडमण्ड हैली ने सन 1686 में किया था जिसका उद्देश्य एशियाई मानसून की उत्पत्ति की व्याख्या करना था। इनके संकल्पना के अनुसार मानसून एवं महासागरीय क्षेत्रों के विभिन्न मौसमी ऊष्मन से उत्पन्न वृहद स्तर की स्थल एवं जलीय हवायें है। जब सूर्य मकर रेखा पर लम्बवत चमकता है तो एशिया अपने समीपस्थ महासागर की अपेक्षा तेजी से ठण्डा होने लगता है जिससे इसके मध्य भाग (बैकाल झील एवं पेशावर) में एक प्रबल उच्चदाब का क्षेत्र बन जाता है।

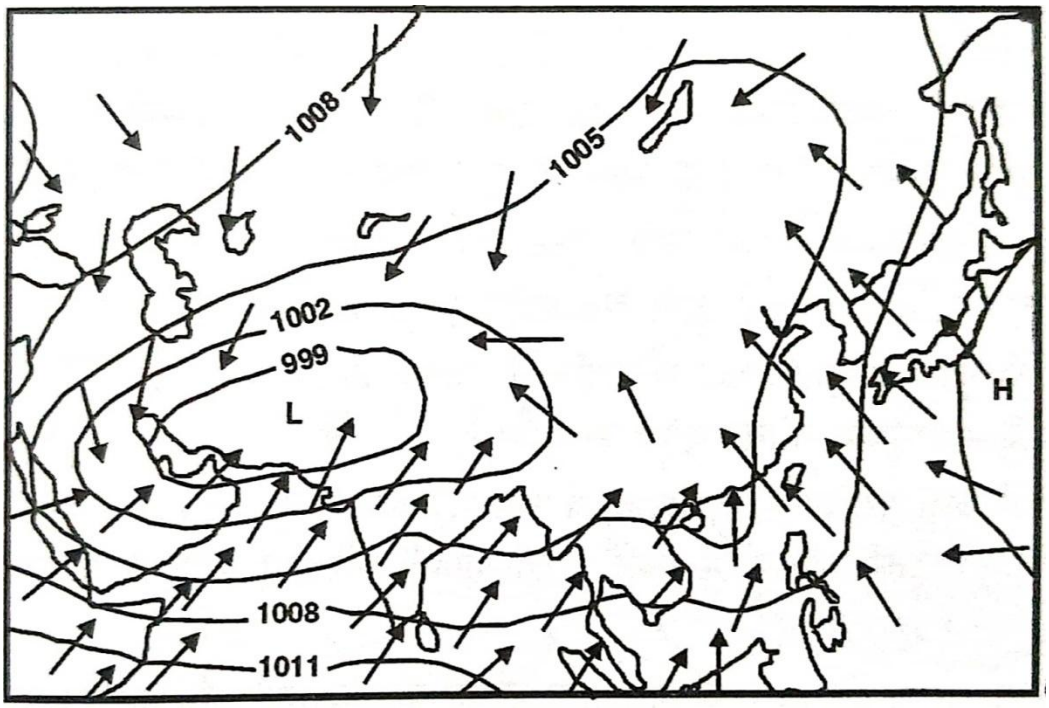

चित्र 1

इसके विपरीत दक्षिणी हिन्द महासागर के क्षेत्रों में कम वायुदाब का क्षेत्र बन जाता है। इसलिए शीतकाल में हवायें स्थलीय उच्चवायु से महासागरीय निम्न वायुदाब की ओर चलती है जिसे उत्तर–पूर्वी मानसून कहते हैं। ये हवायें स्थल से आने के कारण शुष्क, आर्द्रता विहीन और वर्षा करने में अक्षम होते हैं।

ग्रीष्म ऋतु के समय तापमान एवं दाब दशायें पलट जाती है। इन दिनों सूर्य की किरणे सीधा कर्क रेखा पर पड़ती है जिससे एशिया का भूखण्ड तप्त हो जाता है। बैकाल झील एवं पश्चिमी भारत के इलाकों में कम दाब केन्द्र का निर्माण हो जाता है जबकि हिन्द महासागर के दक्षिणी भाग में उच्च दाब केन्द्र रहता है। जिसके परिणामस्वरूप दक्षिण–पूर्व व्यापारिक हवायें निम्न दाब केन्द्रों की ओर खिंची चली आती है।

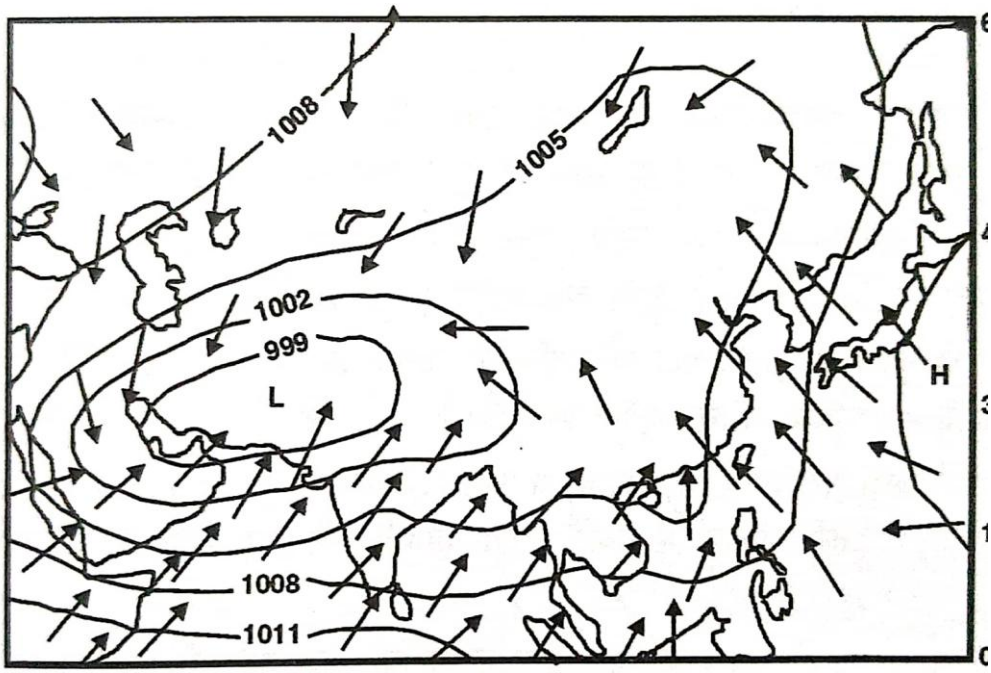

चित्र 2

विषुवत रेखा को पार करते समय ये हवायें विरोध बल (फेरल नियम) के कारण दक्षिण–पश्चिम होती है। ये हवायें महासागर से आने के कारण आर्द्रता से परिपूर्ण होती है। इनके मार्ग में अवरोध हो जाने से वर्षा की प्राप्ति होती है।

2.4.2 गतिक संकल्पना–

इस संकल्पना के प्रतिपादक फलोन महोदय को जाता है इन्होने अपना विचार 1951 प्रस्तुत किया, जिनके अनुसार मानसून की उत्पत्ति मौसमी परिवर्तन के कारण वायुदाब पेटियों के स्थानान्तरण पर आधारित है। दक्षिण एशिया की मानसूनी हवायें वास्तव में उष्ण कटिबन्धीय ग्रहीय पवन तन्त्र का संशोधित रूप

है। इनके अनुसार ग्रीष्म ऋतु में भारत के उत्तर–पश्चिमी भाग में निम्न दाब क्षेत्र और दक्षिण–पश्चिम मानसून दोनों ही उत्तर अन्तरोष्ण अभिसरण के उत्तर की ओर दक्षिण और दक्षिण–पूर्व एशियाई क्षेत्र पर लगभग 30^0उत्तरी अक्षांश तक प्रसारित हो जाने के कारण उत्पन्न होते हैं। इस स्थानान्तरण में उपमहाद्वीप का ग्रीष्म काल में अत्यधिक ऊष्मन प्रमुख भूमिका अदा करता है। जिसके कारण उपमहाद्वीप पर स्थित डोलड्रम की मेखला में प्रवाहित विषुवतीय पछुआ पवने प्रवाहित होने लगती हैं जिन्हें दक्षिणी–पश्चिमी मानसून कहते हैं।

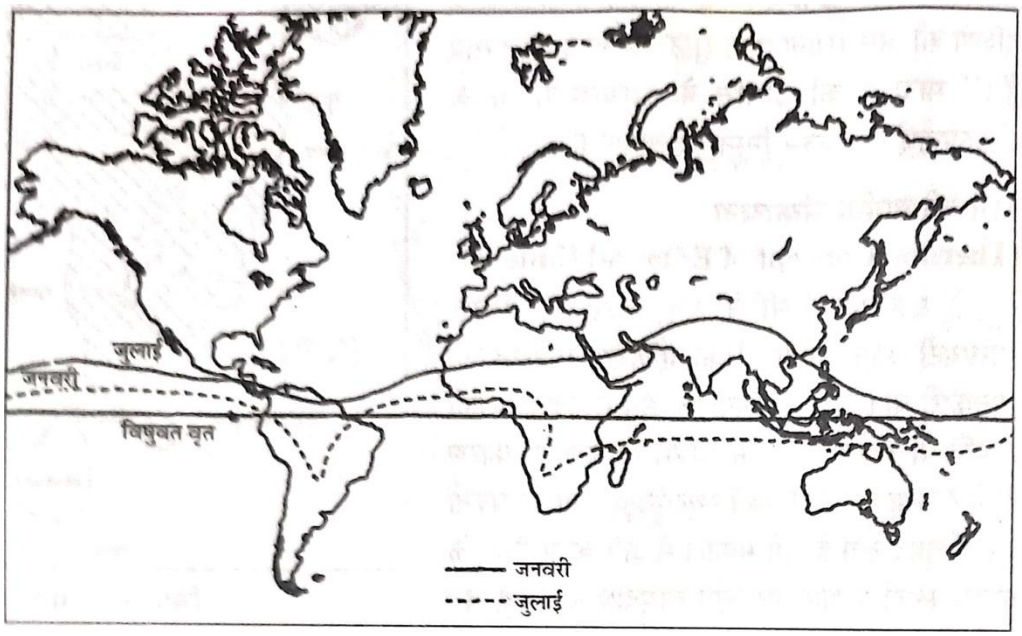

चित्र 3

जाड़े की ऋतु में सूर्य के दक्षिणायन होने के कारण सभी वायुदाब पेटियां दक्षिण को ओर खिसक जाती है जिससे दक्षिण एशिया का क्षेत्र पुनः उत्तर–पूर्व व्यापारिक पवनों के प्रभाव में आ जाता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि शीतकालीन मानसून उष्ण अक्षांशों में प्रवाहित व्यापारिक पवन–तंत्र का स्थापन मात्र है।

2.4.3 नवीन अवधारणायें–

जेट वायु धारायें–

जाड़े की ऋतु में जेट स्ट्रीम क्षोभमण्डल में लगभग 12 किमी0 की ऊँचाई पर स्थित होती हैं जो हिमालय तथा तिब्बत पठार के अवरोध के कारण दो भागों में बंट जाता है। इसमें से उत्तरी शाखा पश्चिम से पूरब को अपने वक्राकार मार्ग पर हिमालय के उत्तर तथा दूसरी शाखा इन पर्वतों के दक्षिण प्रवाहित होती हैं। दक्षिणी शाखा द्वारा बनाये गये चाप के कारण इन दिनों अफगानिस्तान और

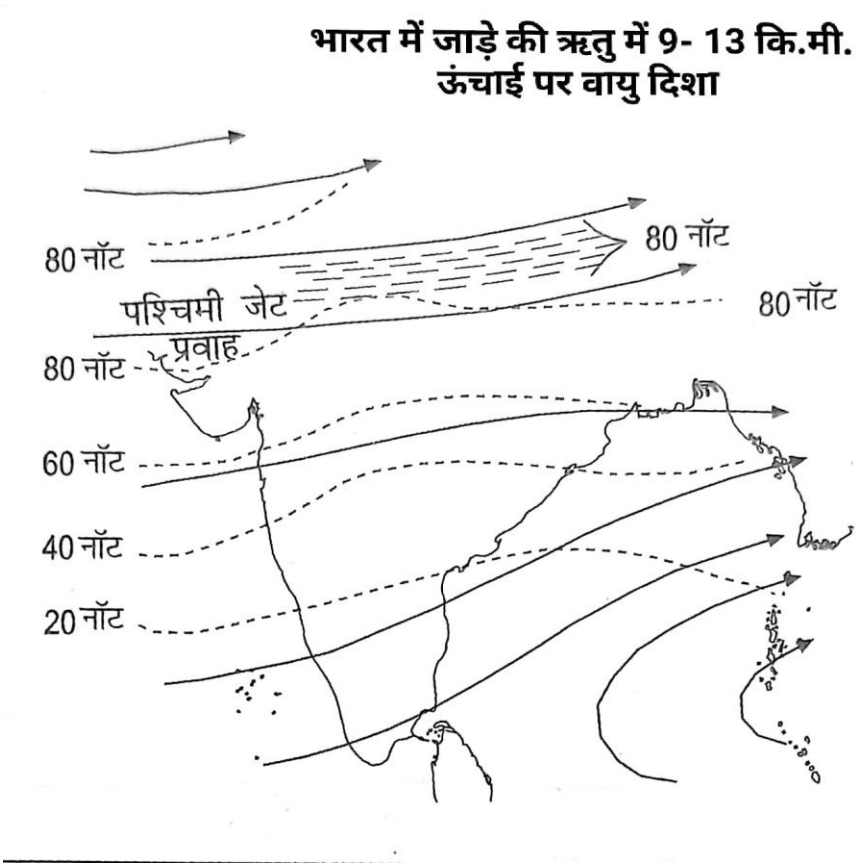

चित्र 4

उत्तर–पश्चिम पाकिस्तान के क्षेत्र पर एक उच्च दाब केन्द्र का निर्माण हो जाता है जिससे वायुमण्डल में स्थिरता पैदा हो जाती है और उत्तरी–पूर्वी मानसून हवाओं के उद्‌भव में मदद मिलती है।

ग्रीष्म ऋतु में सूर्य की किरणों के कर्क रेखा पर लम्बवत चमकने के कारण ध्रुवीय उच्च वायुदाब कमजोर पड़ने लगता है जिससे जेट स्ट्रीम खिसककर हिमालय के पार बहने लगती है। लगभग जून माह तक जेट स्ट्रीम की दक्षिणी शाखा हिमलय के दक्षिण से लुप्त हो जाती है एवं यह उत्तरी शाखा से मिल जाती है। इससे भूमध्यरेखीय पछुआ हवाओं को दक्षिण एशिया में प्रशस्त होने का अवसर मिल जाता है। जेट स्ट्री के बनने वाले लूप के ही कारण इन दिनों उत्तर–पश्चिम भारत के भाग में एक निम्न दाब का केन्द्र बन जाता है। जो मानसून प्रस्फोट में मददगार होता है। इन दिनों दक्षिणी गोलार्द्ध की जेट स्ट्रीम अधिक प्रबल होती है। जो ITCको उत्तरी की तरफ धकेलने में सहायता करती है।

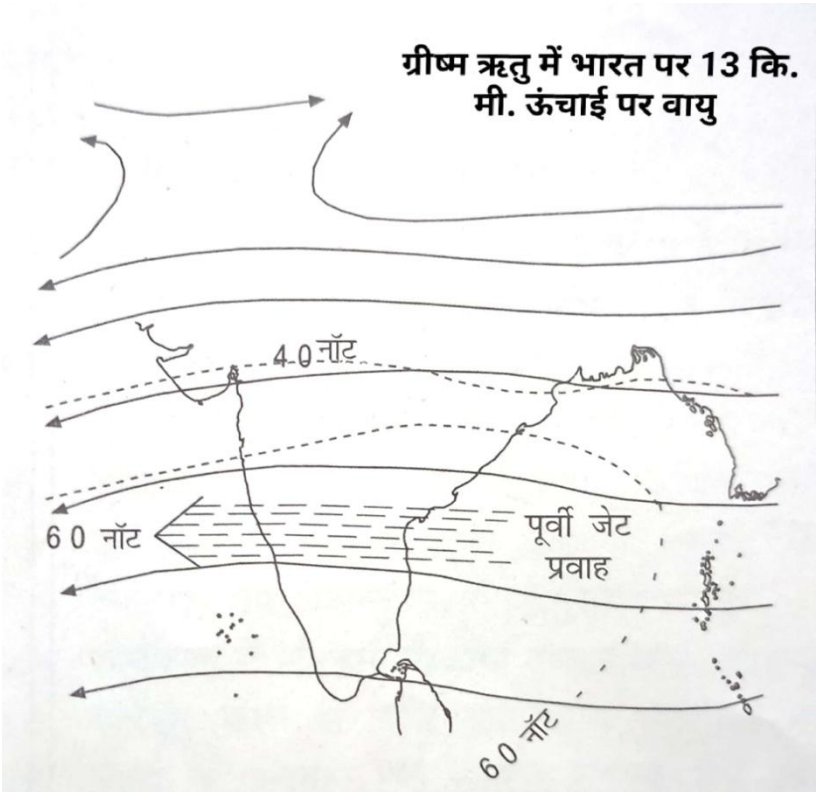

चित्र 5

भारतीय मानसून तथा तिब्बत का पठार–

यह भारतीय एवं सोवियत मौसम वैज्ञानिकों के सहयोग से 1973 में किया गया, जिसमें 4 रूसी और 2 भारतीय जहाजों ने मई से जुलाई माह के दौरान अरब सागर एवं हिन्द महासागर के क्षेत्रों से आधुनिक यंत्रों की सहायता से मौसमी आंकड़ों का संग्रह किया। इसके आधार पर मानसून की उत्पत्ति में तिब्बत के पठार की प्रमुख भूमिका होती है। इस प्रकार का विचार डॉ0 पी0 कोटेश्वरम् ने सन 1958 में एक अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी में भाग लेते हुए यह विचार व्यक्त किया कि तिब्बत के पठार की गर्मी में तापन मानसून परिसंचरण के उत्पत्ति तथा उसे कायम रखने में सबसे महत्वपूर्ण कारक है। भारतीय तथा सोवियत वैज्ञानिकों ने इस विचार से सहमत थे ।

डॉ0 पी0 कोटेश्वरम् के अनुसार तिब्बत का पठार 2–3^{0}Cअधिक सूर्यातप प्राप्त करता है था ग्रीष्म ऋतु गर्म हो उठता है जिससे तापीय प्रति चक्रवात उत्पन्न हो जाता है। इससे पश्चिमी उपोष्ण जे स्ट्रीम कमजोर होने लगती है एवं प्रतिचक्रवात के दक्षिणी भाग में पूर्वी जेट स्ट्रीम का निर्माण होता है। यह पूर्व से खिसकती हुई पश्चिम में भारत, अरब सागर एवं पूर्वी अफ्रीका तक फैल जाती है। इस जेट स्ट्रीम के सहारे प्रवाहित वायु का हिन्द महासागर में अवतलन होता

है। जिससे उच्च दाब को बल मिलता है और दक्षिण–पश्चिम मानसून का प्रादुर्भाव होता है।

महासागर क्षेत्र

इसमें मौसम विज्ञानियों तथा अनुसंधानकर्ताओं द्वारा एल– निनो सोमाली सागरी धारा, दक्षिणी दोलन एवं वाकर कोशिका का संबंध भारतीय मानसून के साथ स्थापित करने का प्रयास किया है। एल– निनो पेरू तट (दक्षिणी अमेरिका) पर प्रवाहित होने वाली एकगर्म महासागर धारा है जो दिसंबर माह में उत्पन्न होती है यह धारा सामान्य तौर पर वर्ष भर प्रवाहित होने वाली शीतल पेरू या हंबोल्ट धारा को बेदखल कर देती है। सामान्य परिस्थिति में पूर्वी प्रशांत (पेरू एवं इक्वाडोर के पास) काजल शीतल एवं उतरा तथा पश्चिमी प्रशांत (पश्चिमी ऑस्ट्रेलिया एवं इंडोनेशिया) उष्ण एवं गहरा होता है। इससे दक्षिणी–पश्चिमी मानसून सशक्त रहता है लेकिन एल नीनो के प्रभाव से या क्रम उलट जाता है इससे दक्षिण– पश्चिमी मानसून कमजोर पड़ जाता है और भारत में सूखे की संभावना बढ़ जाती है जिसे एल– नीनो के प्रभाव के नाम से जाना जाता है।दक्षिणी दोलन से तात्पर्य हिंद महासागर प्रशांत महासागर के मौसमी परिवर्तन से ऐसा देखा गया है कि जब प्रशांत महासागर में वायुदाब ऊंचा होता है तो हिंद महासागर में वायुदाब कम होता है इसके विपरीत जब प्रशांत महासागर में वायुदाब कम होता है तो हिंद महासागर में अधिक होता है। इस दोलन की जानकारी सर गिलबर्ट वाकर ने 1924 में दी थी। दक्षिणी दोलन की तीव्रता की माप ताहिती एवं डार्विन के बीच वायुदाब के अंतर से की जाती है।धनात्मक मान के अंतर्गत हिंद महासागर के क्षेत्र में ठंडी में वायुदाबकम तथा प्रशांत के क्षेत्रों में अधिक पाया जाता है।इस परिस्थिति में मानसून सामान्य पाया जाता है। इसके विपरीत ऋणात्मक मान के दौरान हिंद महासागर क्षेत्र में ठंडी के महीने में वायुदाब अधिक पाया जाता है इससे आने वाली मानसून कमजोर पड़ जाती है । इस प्रकार ऋणात्मकमान का एल नीनो के विकास में सीधा संबंध पाया जाता है। इस एल– निनो तथा ऋणात्मक दक्षिणी दोलन के संयोग को इन्सो कहा जाता है।

मौसम से संबंधित अनुसंधान तथा वैज्ञानिक खोज से यह स्पष्ट होता है कि उष्णकटिबंधीय क्षेत्र का वायु संचरण दो वृहद कोशिकाओं से प्रभावित होता है प्रथम– हेडली कोशिका जो उत्तर– दक्षिण धरातलीय व्यापारिक हवाओं और वायुमंडल में ऊंचाई पर प्रवाहित प्रति व्यापारिक द्वारा बनाई जाती है द्वितीय– वाकर कोशिका इसका विस्तार पूर्व– पश्चिम होता है सामान्यतः ऊपरी उड़ती

वायु के क्षेत्र में तापमान अधिक (इंडोनेशिया तथा ऑस्ट्रेलिया) तथा बैठती वायु के क्षेत्र (पेरू तट) में कम होता है। इस स्थिति में सामान्य मानसून पाया जाता है परंतु ऋणात्मक दक्षिणी दोलन तथा एल– निनो के द्वारा वाकर कोशिका का अवरोही भाग पूरब की तरफ खिसक जाता है जिससे संपूर्ण भारत अवरोहण के प्रभाव में आ जाता है । जिससे मानसून कमजोर हो जाता है और सूखे की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

हिंद महासागर की गर्म धारा सोमाली जो अपने ऊपर चलने वाली वायु के अनुसार अपना दिशा बदलती रहती है। ग्रीष्म काल में यह धारा भूमध्य रेखा के दक्षिण से उत्तर के 10 डिग्री उत्तरी अक्षांश तक चलती है और आगे बढ़ कर भारत के तट की ओर मुड़ जाती है।जाड़े में यह उत्तर– पूर्व मानसून का अनुसरण करती हुई दक्षिण की ओर प्रवाहित होती है। यह धारा दो वलय में प्रवाहित होती है प्रथम– उत्तरी वलय (5 डिग्री से 9 डिग्री उत्तरी अक्षांश के मध्य) द्वितीय दक्षिणी दोलन (0 डिग्री से 5 डिग्री के मध्य)।गर्मी बढ़ने के साथ –साथ दक्षिणी वलय, उत्तरी में बढ़कर उत्तरी वलय मे विलीन हो जाती है। अच्छे मानसून के समय दक्षिणी वलय की तीव्रता अधिक और कमजोर मानसून के समय मंद पाई जाती है। दोनों वालयों के बीच का क्षेत्र तीव्र उद्वेलन से प्रभावित होता है।इससे जून के माह में सोमालिया (15 डिग्री सेल्सियस) एवं मुंबई (30 डिग्री सेल्सियस) के पास तापमान में पर्याप्त अंतर पाया जाता है। यह ताप प्रवणता मानसून के विकिरण संतुलन को प्रभावित करती है।

2.5 मौसमी दशाएं

भारतीय मौसमी दशाएं अत्यंत परिवर्तनशील है फिर भी भारतीय वैज्ञानिकों ने सुविधा के अनुसार ऋतु में बांटा है–

1. शीत ऋतु– मध्य दिसम्बर से मध्य मार्च तक

4 ग्रीष्म ऋतु– मध्य मार्च से मई तक

5 वर्षा ऋतु– जून से सितम्बर तक

6 शरद ऋतु– अक्टूबर से मध्य दिसम्बर तक

1. शीत ऋतु–

भारत में यह नवम्बर माह से शुरुआत होती है और दिसम्बर तक पूरे भारत में छा जाता है। इस ऋतु की विशेषता प्रतिचक्रवात, शुष्क तथा स्थायी वायु व नीला आकाश होता है। इस समय जेट स्ट्रीम की दक्षिणी शाखा हिमालय के दक्षिण में होती है जिससे उत्तरी गोलार्द्ध की ध्रुवीय गतिकी के पुनः प्रवल

होने की सहायता आभास मिलता है। पश्चिमी जेट स्ट्रीम वापस हो जाती है और उत्तरी–पूर्वी व्यापारिक हवायें चलने लगती है। ITC पीछे हट जाता है। उत्तर–पश्चिम भारत में प्रतिचक्रवात बन जाता है जिससे देश का अैधिकांश भाग शुष्क रहता है।

तापमान–

इस समय समताप रेखायें अक्षांशो के समानान्तर पायी जाती है। इसमें तापमान दक्षिण से उत्तर की ओर सामान्यतः घटता जाता हैं। जनवरी में भारत के उत्तर–पश्चिम में 15^0Cतापमान तथा उत्तर भारत में 10^0C से कम पाया जाता है। पंजाब एवं हरियाणा में कभी–कभी शीत लहर का प्रकोप छा जाता है। प्रायद्वीपीय भाग में शीत ऋतु कम प्रभावी होता है। रात में पंजाब हरियाणा तथा राजस्थान में कभी–कभी तापमान घटकर हिमांग से नीचे चला जाता है जिसके प्रभाव से तुषारित हो जाता है। प्रायः रात का तापमान सामान्य औसत से 6 डिग्री सेल्सियस से अधिक घट जाता है जिसके कारण उत्तरी गोलार्ध में शीतलहर चलती है।

वायुदाब–

तापमान का वायुदाब पर सीधा प्रभाव रहता हैं उत्तर–पश्चिम के भागों में इस समय वायुदाब बढ़कर 1019 मिलीबार हो जाता है जो उच्च वायु केन्द्र का द्योतक है जिससे प्रतिचक्रवात दशायें उत्पन्न होती है। यहां से हवाएं दक्षिण में निम्न वायुदाब (महासागर) की ओर चलती है। इस समय भूमध्य सागर से चक्रवात पूर्व की ओर चलकर उत्तर भारत में पहुंचकर उत्तर–पश्चिमी भाग में वर्षा करते हैं।

वर्षा–

शीत ऋतु सामान्य रूप से शुष्क होता है। शीत ऋतु की विशेषता भूमध्य सागर से उत्पन्न पश्चिमी विक्षोभ का अंतरवाह है। इन विक्षोभ की बारंबारता दिसंबर से मार्च तक होती है। इस समय उत्तर–पश्चिम भारत में कुछ वर्षा पश्यिमी विक्षोभ से होता है जो दिसम्बर से फरवरी के मध्य में सक्रिय होते हैं। यह रबी की फसल के लिए लाभ व्यापक होते हैं। बंगाल की खाड़ी में अक्टूबर और नवम्बर में बनने वाले अवदाब से कोरोमण्डल के कुछ भाग में भी वर्षा होती है। इसके अलावा भारत का उत्तर– पूर्वी भाग भी शीत ऋतु में कुछ वर्षा प्राप्त करता है जिसमें अरुणाचल प्रदेश, नागालैंड तथा आश्रम शामिल है जहां वर्षा 50 से मी रिकॉर्ड करते हैं।

2. ग्रीष्म ऋतु–

उत्तरी भारत में मार्च से मध्य जून के बीच स्पष्ट ग्रीष्म ऋतु देखने को मिलता है। इस समय सूर्य कर्क रेखा पर लम्बवत चमकता है जिससे परिध्रुवीय वातचक्र कमजोर होने लगता है। उत्तर–पश्चिम में निम्न वायुदाब अधिक तापमान के कारण जेट स्ट्रीम हिमालय के दक्षिण में होने के कारण ऊपर वायुमण्डल में गतिक चक्रवात ही क्रियाशील रहता है। इससे धरातलीय निम्न दाब आरोही प्रवाह और वर्षा नहीं कर पाता है।

तापमान–

इस ऋतु में तापमान लगातार बढ़ता रहता है। अप्रैल तक प्रायद्वीपीय क्षेत्र का औसत अधिकतम तापमान 40^0Cथी। पहुंच जाता है। उत्तर–पश्चिम भाग में औसत अधिकतम तापमान 42^0Cपहुंच जाता है। श्री गंगानगर में 54^0Cसे भी अधिक तापमान प्राप्त किया गया है। दक्षिण भारत में उत्तर की तुलना में तापमान कम रहता है। पूर्वी भारत और पहाड़ी क्षेत्रों में भी तापमान कम पाया जाता है। औसत दैनिक तापान्तर तटीय भागों में कम तथा आन्तरिक भागों और उत्तर–पश्चिम में अधिक पाया जाता है।

वायुदाब एवं पवने–

शीत ऋतु एवं दक्षिण–पश्चिम मानसून के मध्य संक्रमण के कारण ग्रीष्म ऋतु में वायुदाब और पवने संचार अस्थिर रहते हैं। सूर्य कर्क रेखा पर लम्बवत चमकने के कारण निम्न दाब का क्षेत्र दक्षिण–पूर्व से उत्तर–पश्चिम की ओर खिसकने लगता है। उत्तर भारत में दिन के समय गर्म व शुष्क पछुआ पवने तीव्र गति से चलती हैं। जिन्हें लू कहते हैं। जहां ये उष्ण एवं शुष्क स्थनीय हवायें समुद्री आर्द्र पवनों से मिलती है प्रचंड स्थानीय तूफान बन जाते हैं जिनसे वर्षा और ओले पड़ते हैं।

आर्द्रता एवं वर्षा–

देश के मध्यवर्ती भाग में वायु शुष्क पाई जाती है जिसमें आपेक्षिक आर्द्रता 30 प्रतिशत या कम मिलती है। उत्तर–पश्चिम भाग में 2.5 सेमी0 से भी कम मैदानी भाग में 5–15 सेमी, मालाबार तट पर 15–25 और असम में 50 सेमी से अधिक वर्षा प्राप्त होती है।

3. वर्षा ऋतु–

ग्रीष्म ऋतु के अन्त तक आरोही वायु युक्त एक तीव्र निम्न दाब का निर्माण पश्चिम राजस्थान के क्षेत्र में हो जाता है। उष्ण कटिबन्धीय जेट स्ट्रीम की दक्षिणी शाखा कमजोर पड़ जाती है तथा यह हिमालय के दक्षिण से मध्य

जून तक पीछे हट जाती है जिसके कारण सतही तापीय निम्न दाब पर एक गत्यात्मक चक्रवात बनता है। ITCZ उत्तर की ओर बढ़ता है मध्य जून तक 25^0C उत्तरी अक्षांश पर पहुंच जाता है जिसके कारण विषुवत रेखीय पछुआ हवाएं उपमहाद्वीप में प्रविष्ट कर जाती हैं। तिब्बत के पठार के तापीय उष्मन से उद्‌भव पूर्वी जेट स्ट्रीम द्वारा हिन्द महासागरीय उच्च दाब को बल मिलता है जिससे अण्टार्कटिक परिध्रुवीय वातचक्र द्वारा प्रेरित दक्षिण–पूर्वी व्यापारिक पवने दक्षिण–पश्चिम मानसून के रूप में परिणत हो जाती है। इस ऋतु के दौरान देश के अधिकतर हिस्से में आसमान बादलों से ढका रहता है। इस ऋतु के दौरान सापेक्षिक आर्द्रता सामान्य तौर पर 65 प्रतिशत से अधिक होती है। असम तथा केरल में सबसे अधिक सापेक्षिक आर्द्रता दर्ज की जाती है।वर्षा ऋतु में सापेक्षिक आर्द्रता 80 प्रतिशत से अधिक रहती है।

तापमान–

मानसून के आगमन से पहले जून में तापमान अधिकतम हो जाता है। कुछ स्थानों पर 46^0Cसे भी अधिक हो जाती है। जून माह का औसत दैनिक अधिकतम तापमान जोधपुर एवं इलाहाबाद में 40^0C, नई दिल्ली में 39^0C, चेन्नई में 38^0C,कोलकाता में 33^0C, कोच्चि का औसत तापमान उत्तर–पश्चिम तथा कोरोमण्डल तट पर 30^0C से अधिक पाया जाता है। उत्तरी मैदान में 25^0Cके बीच रहता है।

मानसून का आगमन–

भारत की आकृति के कारण दक्षिण–पश्चिम मानसून पवने विभाजित होकर दो प्रमुख शाखा के रूप में देश में प्रवेश करती है। तीव्र गर्जन, चमक के साथ वर्षा की शुरूआत होती है जिसे मानसून प्रस्फोट कहते हैं। अरब सागरीय शाखा 1 जून के आस–पास केरल तट से आगे बढ़ती हुई 10 जून तक मुम्बई पहुंचती है। जून के मध्य तक मध्य भारत में फैल जाता है। बंगाल की खाड़ी की शाखा 20 मई तक अण्डमान–निकोबार द्वीपों में और 1 जून तक त्रिपुरा और मिजोरम में पहुंच जाता है। 7 जून तक कोलकाता, 15 जून तक वाराणसी पहुंच जाती है। जून के अन्त तक सम्पूर्ण देश छा जाता है। मानसून का निवर्तन सितम्बर के मध्य से उत्तर–पश्चिम से प्रारम्भ होता है और नवम्बर के अन्त तक देश के समूचे भाग से हट प्रभाव जाता है।

वर्षा का वितरण–

मौसम तथा वर्षा की मात्रा को अनेक चक्रवती गर्थ प्रभावित करते हैं जो बंगाल की खाड़ी तथा अरब सागर की माध्यम से देश में प्रवेश करते हैं। मानसून अवधि के दौरान 20 से 25 चक्रवात का विकास होता है जिसमें कुछ अधिक तीव्र होते हैं जिसके द्वारा तटवर्ती क्षेत्र में काफी नूकसान पहुंचाते हैं। चक्रवात उसे

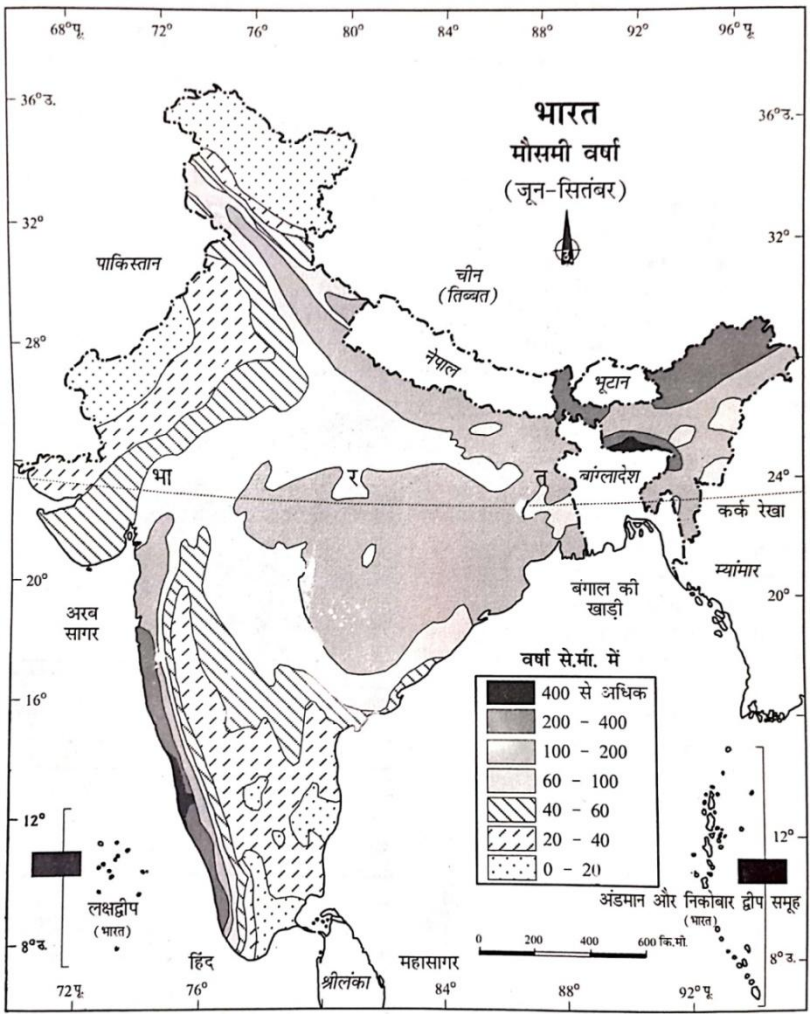

चित्र 6

भारी वर्षा होती है जिसकी मात्रा तटीय क्षेत्रों से दूर जाने पर घटती जाती है। इन दिनों जम्मू–कश्मीर, लद्दाख तथा तमिलनाडु के कुछ भाग को छोड़कर समूचे भारत में वर्षा होती है। पश्चिमी तट, सह्याद्रि, मेघालय, अरुणाचल प्रदेश, सिक्किम एवं दार्जिलिंग पहाड़ियों में 200 सेमी से अधिक वर्षा प्राप्त होती है। पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, पू0 बिहार, छत्तीसगढ़, तराई क्षेत्र तथा उत्तराखण्ड में वर्षा 100–200 सेमी पायी जाती है। राजस्थान, पं0 गुजरात, द0 आन्ध प्रदेश, कर्नाटक पठार, तमिलनाडु, हरियाणा, पंजाब और जम्मू–कश्मीर के भागों में वर्षा की मात्रा 50 सेमी0 से कम है। अन्य क्षेत्र में 50 से 100 सेमी0 वर्षा की मात्रा पायी जाती है।

4. शरद ऋतु–

सितम्बर के अन्त तक सूर्य की किरण भूमध्यरेखा पर लम्बवत चमकती है। जिसके कारण उत्तर–पश्चिम का निम्न वायुदाब का गर्त कमजोर होकर दक्षिण की ओर खिसक जाता है। अक्टूबर में उत्तरी बंगाल की खाड़ी में स्थित हो जाता है। इससे मानसून कमजोर पड़ने लगता है तथा पं0 राजस्थान से पीछे हटने लगता है। सितम्बर के अन्त तक मानसून पंजाब तथा समीची भाग से हट जाता है जिससे मौसम साफ व सुहावना हो जाता है।

तापमान–

इसमें तापमान में गिरावट आने लगता है और दिसम्बर तक शीत ऋतु का प्रभाव स्थापित हो जाता है। अक्टूबर माह में देश के अधिकांश भाग का औसत तापमान 25–27.5^{0}Cके बीच पाया जाता है।

वायुदाब एवं पवनें–

इस समय उ0–पं0 में अस्थित निम्न दाब क्षेत्र क्षीण होने लगता है। पूर्व की ओर खिककर बंगाल की खाड़ी के उत्तर में केन्द्रित हो जाता है। धीरे–धीरे दक्षिण में खिसककर दिसम्बर के अन्त तक भूमध्यरेखीय निम्न दाब में विलीन हो जाता है। नवम्बर तक उत्तर–पश्चिम भारत में एक उच्च दाब का केन्द्र स्थापित हो जाता है जिससे गंगा के मैदान में हवाएं उत्तर–पश्चिम या पश्चिम से प्रवाहित होती है। असम एवं प0 बंगाल में हवायें पूर्व से प्रायद्वीपीय भाग में उत्तर–पूर्व से और पूर्वी तट के सहारे उत्तर–पश्चिम से चलती है।

आर्द्रता एवं वर्षा–

इस ऋतु में मेघाच्छादन और आर्द्रता की मात्रा कम पाई जाती है। तमिलनाडु में लौटते मानसून से वर्षा होती है। इस ऋतु में वर्षा का होना चक्रवातों की देन है। इन उष्ण कटिबन्धीय चक्रवात से तटीय क्षेत्र अधिक प्रभावित होते हैं। चक्रवातों की बारम्बारता अरब सागर की अपेक्षा बंगाल की खाड़ी में अधिक देखने को मिलता हैं।

2.6 सारांश–

आप इस द्वितीय इकाई में मानसून, मानसून उत्पत्ति के कारणों मानसून की प्राचीन एवं नवीन संकल्पनाओं तथा मौसमी दशाओं का अध्ययन किया है। अब आप समझ गये होंगे कि मानसून भारत में कब जन्म लेता है और कब निवर्तन हो जाता है, मानसून की प्रवृत्ति कैसी है, मानसून की उत्पत्ति में कौन–

कौन अन्य कारक बल प्रदान करते है। मानसून का प्रभाव किस क्षेत्र में अधिक है तिब्बत का पठार तथा हिन्द महासागर का महत्व।

2.7 शब्द सूची–

Monsoon	मानसून
Monsoon Expedition	मानसून अभियान ,
Monshoon trough	मानसून गर्त
Snow Line	हिम–रेखा
Tropical Zone	उष्ण कटिबन्ध
Tsunami	सुनामी

2.8 परीक्षापयोगी प्रश्न–

1. भारत में प्रति चक्रवात दशाएं विद्यमान होती है–

   (क) मार्च से जून (ख) दिसम्बर से फरवरी

   (ग) फरवरी से मई (घ)मई से सितम्बर

2. मानसून वर्षा की जो विशेषता नहीं है वह है–

   (क) मौसमी वर्षा (ख) अनिश्चित तथा अनियमित वर्षा

   (ग) वर्षा का असमान वितरण

   (घ) वर्षा होने वाले दिनों की निरन्तरता

3. भारत के कोरोमण्डल तट पर सर्वाधिक वर्षा होती है–

   (क) जनवरी–फरवरी में (ख) जून–सितम्बर में

   (ग) मार्च–मई में (घ)अक्टूबर–नवम्बर में

4. भारत में शरदकालीन वर्षा कहां होती है–

   (क) तमिलनाडु–कर्नाटक (ख) पंजाब–राजस्थान

   (ग) पंजाब–तमिलनाडु (घ)उड़ीसा–बिहार

5. शीत ऋतु में तमिलनाडु में होने वाली वर्षा का प्रकार है–

(क) चक्रवाती (ख) संवहनीय

(ग) पर्वतीय (घ)प्रति चक्रवाती

2.9 उपयोगी पुस्तकें–

प्रो0 जगदीश सिंह– भारत : भौगालिक आधार एवं आयामा, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर।

प्रो0 आर0सी0 तिवारी भारत का भूगोल, प्रवालिका प्रकाशन।

डॉ0 बी0सी0 जाट, भारत का भूगोल, पंचशील प्रकाशन, जयपुर

सिंह, आर0एल0– इण्डिया : रीजनल जियोग्राफी एन0जी0एस0आई0, गोरखपुर।

Nag, P. and Sengupta, 8- Geography of India, Gorakhpur, Concept Publishing company, New Delhi.

2.10 अभ्यास प्रश्न–

प्र0–1 :मानसून उत्पत्ति से सम्बन्धित तापीय संकल्पना को स्पष्ट कीजिए।

प्र0–2 : भारतीय मानसून पर तिब्बत पठार का प्रभावों का वर्णन कीजिए।

प्र0–3 : मानसून पर जेट स्ट्रीम के योगदान का वर्णन कीजिए।

प्र0–4 : भारतीय मानसून की उत्पत्ति से सम्बन्धित चिर सम्मतकालीन संकल्पना का वर्णन कीजिए।

प्र0–5 : भारतीय मौसमी दशाओं का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।

MAGO-102 भारत का भूगोल

इकाई 3– जलवायु प्रदेश एवं एल–निनो, ला–निनो

इकाई की रूपरेखा–

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 जलवायु प्रदेश

3.4 एल–निनो

3.5 एल निनो एवं मानसून

3.6 ला–निनो

3.7 ला–निनो एवं एल–निनो का प्रभाव

3.8 सारांश

3.9 शब्द सूची

3.10 परीक्षोपयोगी प्रश्न

3.11 उपयोगी पुस्तके एवं संदर्भ

3.12 अभ्यास प्रश्न

3.1 प्रस्तावना–

भारत भूगोल की यह तृतीय इकाई है इसमें आप भारत का जलवायु प्रदेश, जलवायु प्रदेश का वर्गीकरण, एल–निनो, एल–निनो का कारण, परिणाम, उत्पत्ति क्षेत्र, ला–निनो, ला–निनो का उत्पत्ति कारण, ला– निनो से एल–निनो की स्थिति तथाएल–निनो एवं ला–निनो के प्रभावों का अध्ययन करेंगे। जलवायु वर्गीकरण में प्रमुख विद्वानों (ब्लाडिमोर कोपेन, थार्नथ्वेट, आर0 एल0 सिंह, जी0टी0 ट्रिवार्था तथा बी0एल0 सी0 जॉनसन) का अध्ययन करेंगे, एल निनो का मानसून पर प्रभाव, वायुमण्डलीय दशाओं पर प्रभाव, एल–निनो एवं ला–निनो से

उत्पन्न समस्या का अध्ययन करेंगे।

3.2 उद्देश्य–

भारत भूगोल के इस इकाई का आप अध्ययन करने बाद–

- भारत के जलवायु प्रदेशों का वर्गीकरण समझ सकेंगे।
- कोपेन, थार्नथ्वेट, आर0एल0 सिंह, ट्रिवार्था का जलवायु प्रदेश का वर्गीकरण एवं आधार समझ सकेंगे।
- एल–निनो एवं ला–निनो को समझ सकेंगे।
- एल–निनो, एवं ला–निनो का मानसून से सम्बन्ध समझ सकेंगे।
- एल–निनो एवं ला–निनो का प्रभाव समझ सकेंगे।

3.3 जलवायु प्रदेश–

भारतीय जलवायु को उष्ण मानसून के अन्तर्गत शामिल किया जाता है लेकिन देश का वृहद आकार, स्थलाकृतिक विभिन्नता, सागरीय प्रभाव, वायुदाब पेटियों का खिसकाव आदि के कारण उप प्रादेशिक स्तर पर जलवायु में भिन्नता पायी जाती है। भारतीय जलवायु प्रदेशों का निर्धारण कई विद्वानों ने किया है यहां कुछ प्रमुख विद्वानों का उल्लेख किया गया है–

ब्लाडिमिर कोपेन–

भारतीय जलवायु का क्रमबद्ध अध्ययन सर्वप्रथम ई0 व्लैनफोर्ड (1889) ने किया, जिन्होंने यहां की जलवायु में विश्वव्यापी जलवायु भिन्नताओं का संकेत दिया। बाद में कोपेन द्वारा विश्व की जलवायु का व्यवस्थित वर्गीकरण प्रस्तुत किया गया। इनके अनुसार भारत को तीन प्रमुख जलवायु प्रदेशों में– आर्द्र-A, शुष्क-B, तथा अर्द्ध शुष्क-C एव D में बांटा। पुनः इनको वर्षा एवं तापमान के आधार पर उपभागों में S,W,m,w,h,g,f,c,t एवं s अक्षरों का प्रयोग करके वर्गीकरण किया है। कोपेन ने भारत को 9 जलवायु प्रदेशों में बांटा है।

Aw (उष्ण कटिबन्धीय सवाना तुल्य)–यह उष्ण कटबन्धीय सवाना घास के मैदानों और मानसूनी पर्णपाती वनस्पति क्षेत्रों से सम्बन्धित है। यहां मई सबसे गर्म तथा शीत माह का मापमान 18^0C से अधिक पाया जाता है। यहां शीत शुष्क होती है। यह प्रायद्वीप के अधिकांश भाग, पं0 बंगाल तथा झारखण्ड में पाया जाता है। यह प्रदेश Amw से अधिक उष्ण होता है क्योकि यह सागर तट से दूर रहता है। इस प्रदेश में तापमान की समानता पायी जाती है। ग्रीष्म काल में यहा वर्षा होती है। यहां औसत वार्षिक वर्षा 60 से 200 सेमी के बीच होती है।

Amw(उष्ण कटिबन्धीय मानसून तुल्य)–

यहां शीत काल की शुष्कता की अवधि छोटी होती है तथा ग्रीष्म काल व वर्षा काल में वर्षा होती है। यह उष्णकटिबंधीय जलवायु है यहां ठंड के माह में 18 डिग्री सेल्सियस से अधिक तापमान रहता है। इसका विस्तार दक्षिणी कोकण, मालाबार तट, पश्चिमी घाट, तमिलनाडु पठार, त्रिपुरा और मिजोरम में पाया जाता है। यह प्रदेश सहयाद्री पर्वत का पश्चिमी भाग है मानसूनी पवनों की अरब सागरीय शाखा के एकदम सामने पड़ता है। कर्क रेखा के दक्षिण में होने के कारण तापमान ऊंचा रहता है।

As (उष्ण कटिबन्धीय आई)–

उष्णकटिबंधीय जलवायु का एक भाग है जहां वर्षा शीतकाल में होती है। यहां ग्रीष्म ऋतु शुष्क होती है इसमें कोरोमण्डल तट शामिल है। यहां लौटते हुए मानसून से वर्षा होती है। नवंबर से जनवरी के मध्य चक्रवाती रूप में वर्षा होती है। वर्षा 60 से 200 से. मी. तक होती है।

BShw (अर्द्धकटिबन्धीय स्टेपी तुल्य)–

यहां औसत वार्षिक तापमान 18^0C से अधिक पाया जाता है। शीत ऋतु होने के कारण जिस कारण आर्द्र–शुष्क दशाएं बनी रहती हैं। वर्षा कम होती है। इसमें कर्नाटक, तमिलनाडु के वृष्टिछाया क्षेत्र, पूर्वी राजस्थान और पश्चिमी हरियाणा का कुछ भाग शामिल है। प्रायद्वीप के पश्चिमी घाट के पूर्व विभाग में अवस्थिति कर्नाटक राज्य इसका प्रमुख क्षेत्र है।

BWhs (उष्ण मरुस्थली जलवायु)–

यहां शुष्क उष्ण कटिबंधीय मरुस्थली जलवायु पायी जाती है जहां का औसत वार्षिक तापमान 18 डिग्री सेल्सियस से अधिक होता है तथा शीत शुष्क होती है जिसमें ऊँचा तापमान, अधिक तापान्तर तथा बहुत कम वर्षा पायी जाती है। इसका विस्तार पश्चिमी राजस्थान में है। यहां औसत वार्षिक वर्षा 200 सेमी से कम होती है जिसके कारण मरुभिद वनस्पति का विस्तार पाया जाता है।

Cwg (मध्य तापीय/गंगा तुल्य)–

इसमें शीत शुष्क होती है। वर्षा सबसे शुष्क माह का दस गुना होता है। शीत माह का तापमान 18^0C से कम तथा गर्म माह का औसत तापमान 18^0Cसे अधिक रहता है। इसकी प्रमुख विशेषताएं वर्षा के पूर्व गर्मी बढ़ जाती है। यहां गंगा के मैदान में फैला है। इसके अलावा गुजरात, राजस्थान, मध्य प्रदेश, असम, नागालैंड तथा मेघालय में भी फैला है।

Dfc (शीतल आर्द्र जाड़े की जलवायु)–

यह शीतोष्ण जलवायु वर्ग का है। जाड़े की ऋतु शीतल और आर्द्र होती है।सिक्किम और अरुणांचल प्रदेश क्षेत्र में फैला है। यहां उष्णतम माह का तापमान 22 डिग्री सेल्सियस से नीचे लेकिन 1 से 3 माह तक 10 डिग्री सेल्सियस से ऊपर होता है। यह हिमालय के उत्तरी पूर्वी भाग में फैला है यहां शुष्क में भी कम से कम 3 सेमी वर्षा हो जाती है।

E (ध्रुवीय या पर्वतीय जलवायु)–

यह एक ध्रुवी प्रकार की जलवायु है जहां सबसे गर्म महीने का तापमान 10 डिग्री सेल्सियस से कम रहता है। यह जम्मू कश्मीर हिमाचल प्रदेश तथा उत्तराखण्ड में फैला पाया जाता है। सबसे गर्म माह का औसत तापमान 10^0Cसे कम पाया जाता है। लद्दाख में 20 सेमी से कम वर्षा होती है। हिमाचल प्रदेश तथा उत्तराखंड में वर्षा 100 से 200 सेमी तक भी होती है।

ET (टुण्ड्रा तुल्य)–

यह ध्रुवीय जलवायु प्रदेश का ही एक भाग है। यहां सबसे गर्म माह का तापमान 0^0C से 10^0C के मध्य पाया जाता है। इसका विस्तार उत्तराखण्ड के पहाड़ी भाग में है।

सी0डब्ल्यू थार्नथ्वेट–

इन्होंने वर्षण प्रभाविता सूचकांक, तापीय दक्षता सूचकांक तथा वर्षा के मौसमी सान्द्रण के आधार विश्व जलवायु का वर्गीकरण (1931, 1933 एवं 1947) करने का प्रयास किया है। इनके जलवायु वर्गीकरण में से लगभग भारत में 12 प्रकार की जलवायु पाई जाती है।

AAr उष्ण कटिबन्धीय अति आर्द्र जलवायु–

इसमें उच्च तापमान, अधिक वर्षा, वर्षभर वर्षा तथा सदाबहार वर्षा वन की विशेषता पायी जाती है। यह त्रिपुरा, पश्चिमी घाट, मिजोरम, गगां का डेल्टा, असम तथा दक्षिणी मेघालय में पाया जाता है।

BA'w उष्ण कटिबन्धीय आर्द्र जलवायु–

यहां शीत ऋतु में वर्षा में कमी देखी जाती है तथा ग्रीष्म काल में पर्याप्त वर्षा होती है। इसका विस्तार पश्चिमी घाट के कुछ भाग और पूर्वी पं0 बंगाल में है।

BB'w समशीतोष्ण आर्द्र जलवायु–

इसमें जाड़े के मौसम में आर्द्रता कम पायी जाती है तथा वर्षा ग्रीष्म काल में होती है। मेघालय, असम, मणिपुर और नागालैण्ड में पायी जाती है।

CA'w उष्ण कटिबन्धीय उपार्द्र जलवायु–

इसमें शीत शुष्क होती है जिसके कारण उपार्द्र जैसी जलवायु पाई जाती है। इसका विस्तार प्रायद्वीप के अधिकांश भाग, गंगा मौदान के दक्षिणी भाग में मिलता है। यह देश का सबसे बड़ा जलवायु प्रदेश है।

CA'w' उष्णकटिबंधीय उपार्द्र जलवायु–

इस में शीत ऋतु में वर्षा होती है जिसमे तमिलनाडु का अधिकतर भाग शामिल है

CB'w समशीतोष्ण उपार्द्र जलवायु–

यहां शीत शुष्क होती है तथा ग्रीष्म आर्द्र होती है। इसमें गंगा ब्रह्मपुत्र का मैदान शामिल है। यहां वर्षा की पर्याप्त मात्रा पाई जाती है जिसके कारण इसको घास प्रदेशों में शामिल किया जाता है।

DA'w उष्ण कटिबंधीय अर्द्धशुष्क जलवायु–

यहां शीतकाल में वर्षा की कमी पायी जाती है तथा ग्रीष्म काल में वर्षा होती है। इसका प्रभाव कच्छ एवं द0पू0 राजस्थान में पाया जाता है।

DB'd समशीतोष्ण अर्द्ध शुष्क जलवायु–

इस जल जलवायु में प्रत्येक माह या वर्षभर आर्द्रता की कमी रहती है। इसमें सहयाद्रि वृष्टि छाया भाग शामिल है।

DB'w समशीतोष्ण अर्द्ध शुष्क जलवायु–

इसमें शीत शुष्क होती है तथा ग्रीष्म काल में वर्षा होती है। उ0प्र0, राजस्थान, पंजाब और द0–पं0 हरियाणा इसमें शामिल है। यह जलवायु प्रदेश स्टेपी जलवायु प्रदेश के सदृश्य है।

D' टैगा तुल्य जलवायु–

इसमें तापीय दक्षता सूचकांक कम (16– 31) होता है। हिमाचल प्रदेश से अरुणाचल प्रदेश तक हिमालय के निचले ढाल के सहारे फैला है। यहां पर अपेक्षाकृत लंबी शीत ऋतु मिलती है वह तापमान भी कम पाया जाता है।

EA'd उष्ण कटिबन्धीय शुष्क जलवायु–

यहां वर्ष भर वर्षा की कमी पायी जाती है। इसके अन्तर्गत राजस्थान का थार मरुस्थल शामिल है।यहां वाष्पीकरण अधिक होता है। अवरोध के अभाव के कारण वर्षा की अभाव पाया जाता है।

E' टुण्ड्रा तुल्य जलवायु–

यह प्रदेश उन जलवायु प्रदेशों में मिलती है जहां वर्षभर तापमान हिमांक से नीचे रहता है और शीतकाल में सदैव हिमपात होता रहता है। इसमें तापीय दक्षता सूचकांक 1–15 पाया जाता है। इसका विस्तार उंचाई वाला हिमालय व लद्दाख में देखने को मिलता है।

जी0टी0 ट्रिवार्था–

इन्होंने कोपेन के वर्गीकरण में संशोधन करके 1945 में जलवायु की जननिक विशेषताओं को अधिक महत्व दिया। इन्होंने भारत की जलवायु को 4 प्रमुख 7 गौंड़ भाग में बांटा–

(क) उष्ण कटिबन्धीय जलवायु (A)-

1. उष्ण कटिबन्धीय वर्षा जलवायु (Am)-इसमें औसत वार्षिक तापमान 27^0Cतथा वार्षिक वर्षा 250 सेमी0 से अधिक होती है। पश्चिमी घाट, त्रिपुरा तथा दक्षिणी असम का भाग शामिल है। इसमें शुष्कता स्पष्ट रूप से मिलती है।

2. उष्ण कटिबन्धीय वर्षा जलवायु (Am)-इसका विस्तार प्रायद्वीपीय भारत और मिजोरम में पाया जाता हैं इसमें औसत वार्षिक तापमान 27^0C तथा वर्षा 100 सेमी0 होती है।

(ख)शुष्क जलवायु (B)-

3. उष्ण कटिबन्ध स्टेपी तुल्य जलवायु (BS)- इसमें वार्षिक तापमान का औसत 27^0C से अधिक तथा वर्षा 100 सेमी0 से कम होती है। पश्चिमी घाट का वृष्टिछाया भाग में विस्तार पाया जाता है। इसमें तमिलनाडु का आंतरिक क्षेत्र, कर्नाटक, महाराष्ट्र तथा आंध्रप्रदेश का पश्चिमी भाग शामिल है।

4. उपोष्ण कटिबन्ध स्टेपी तुल्य जलवायु (Bsh)- यह अर्द्ध शुष्क जलवायु का क्षेत्र है। इसमें गुजरात, पूर्वी एवं मध्यवर्ती राजस्थान और दक्षिणी हरियाणा

शामिल है। यहां औसत वार्षिक तापमान 27 डिग्री सेल्सियस से अधिक तथा वर्षा 50 से मी से 100 से मी के मध्य होती है।

5. उष्ण कटिबन्ध मरुस्थलीय जलवायु (Bwh)- इसका विस्तार कच्छ और पश्चिमी राजस्थान में हैं यहां तापान्तर अधिक पाया जाता है। वार्षिक वर्षा 12.5 सेमी0 से भी कम होती है। यहां वनस्पति के रूप में कटीली झाड़ियां अधिक पाई जाती है।

(ग) शीतोष्ण जलवायु(C)-

6. आर्द्र उपोष्ण जलवायु (Caw)- इसका विस्तार गंगा के मैदान से असम तक फैला हुआ है। यहां शीत ऋतु में औसत तापमान 18^0Cसे कम तथा ग्रीष्म ऋतु में 46^0C से 48^0C तक पाया जाता है। औसत वार्षिक वर्षा 63 सेमी है जो पूर्वी भाग में बढ़कर 250 सेमी से भी अधिक हो जाता है।

(घ) पर्वतीय जलवायु (H)-

7. पवर्ततीय जलवायु (H)- इसमें कश्मीर से लेकर अरुणांचल प्रदेश तक का हिमालयी क्षेत्र शामिल है। यहां जून का तापमान 15^0C से 17^0C तथा शीत में 8^0C से कम पाया जाता है। यहां ठंडी में वर्षा पश्चिमी विक्षोभ से भी होता है।

आर0एल0 सिंह–

इन्होंने भारत की जलवायु को 10 भागों में बांटा है जो वार्षिक वर्षा की मात्रा पर निर्भर है। इसका वर्गीकरण केन्ड्रयू और स्टाम्प की विधि का संशोधन है।

1. अति आर्द्र उत्तर–पूर्व–

इसमें सिक्किम, उत्तरी पश्चिम बंगाल और उत्तर–पूर्व भारत (त्रिपुरा को छोड़कर) शामिल है। यहां 200 सेमी0 से अधिक वर्षा प्राप्त होती है तथा जुलाई एवं जनवरी माह का तापमान क्रमशः 25^0C–33^0Cएवं 11^0C–25^0C के बीच पाया जाता है।

2. आर्द्र सहयाद्रि एवं पश्चिमी तट– इसमें समस्त पश्चिमी तट शामिल है। यहां वार्षिक 200 सेमी0 से अधिक तथा तापमान 18^0C–32^0Cतक पाया जाता है।

3. आर्द्र दक्षिण–पूर्व– इसमें छोटा नागपुर, पं0 बंगाल, उड़ीसा पठार, दक्षिणी छत्तीसगढ़ और पूर्वी आन्ध्र प्रदेश शामिल है। वर्षा 100–200 सेमी के मध्य तथा तापमान जुलाई में 26^0C–34^0Cएवं जनवरी में 12^0C–27^0C तक पाया जाता है।

4. उपार्द्र संक्रमण– इसका विस्तार मध्य गंगा, पूर्वी उत्तर प्रदेश और पं0 बिहार में पाया जाता है। यहां वर्षा 100–200 सेमी तथा तापमान जुलाई में 26^0C–41^0C एवं जनवरी का 9^0C–24^0Cपाया जाता है।

5. उपार्द्र तटीय– इसका विस्तार कोरोमण्डल तट के भाग में है। यहां वर्षा 75–150 सेमी होता है। तापमान मई में 28^0C–38^0Cएवं जनवरी में 20^0C–29^0C मिलता है।

6.उपार्द्र महाद्वीपीय– इसमें उत्तरी गंगा का मैदान शामिल है। यहां वर्षा 75–150 सेमी तथा तापमान जुलाई में 26^0C–41^0C एवं जनवरी में 7^0C–23^0Cपाया जाता है।

7. अर्द्ध शुष्क उपोष्ण– इसमें पूर्वी राजस्थान, हरियाणा और पंजाब के क्षेत्र शामिल है। यहां वर्षा 25 से 100 सेमी0 होती है। औसत तापमान 24 डिग्री से 41 डिग्री सेल्सियस पाया जाता है।

8. अर्द्ध शुष्क उपोष्ण– इसमें मध्य और पश्चिमी प्रायद्वीप का भाग शामिल हैं यहां वर्षा 50–100 सेमी पाया जाता है। पूर्वी कर्नाटक, पश्चिमी आंध प्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र, पश्चिम मध्य प्रदेश में इसका प्रभाव है।

9. शुष्क– इसमें कच्छ, पं0 राजस्था, द0प0 हरियाणा का क्षेत्र शामिल है। यहां वर्षा 25 सेमी से कम तथा तापमान जून माह में 28^0C–45^0Cऔर जनवरी में 50^0C–22^0Cपाया जाता है।

10. पश्चिम हिमालय– इसमें जम्मू कश्मीर, हिमाचल प्रदेश उत्तराखण्ड का पहाड़ी भाग शामिल है। यहां वर्षा 150 सेमी0 तथा तापमान 5^0C–30^0Cपाया जाता है।

वी0एल0सी0 जॉनसन– इन्होंने 1969 में भारत के जलवायु को 6 प्रकारों में बांटा है

1.केरल–असम प्रकार– इसमें शुष्क ऋतु छोटी होती है, शीत ऋतु का अभाव पाया जाता है। इसमें मालाबार तट और देश का उत्तर–पूर्वी भाग शामिल है। यहां शीत ऋतु का अभाव पाया जाता है तथा तापांतर भी कम पाया जाता है।

2.कोरोमण्डल तट प्रकार– इसमें तमिलनाडु का क्षेत्र शामिल है। यहां वर्षा शीत ऋतु में चक्रवात के रूप में होती है। यहां पर जून–जुलाई के महीने में दक्षिण–पश्चिम मानसूनी हवा मैं अवतलन की प्रवृत्ति देखी जाती है।

3.मध्य भारतीय प्रकार– इसमें भारत का अधिकांश भाग शामिल है। शीत ऋतु शुष्क तथा साफ रहा है। बसन्त ऋतु भी शुष्क रहता है। मध्य जून से मध्य सितम्बर तक द0प0 मानसून से भारी वर्षा होती है। इसे वर्षा की मात्रा के आधार पर कई उपभागों में बांटा जा सकता है–

अ. कोंकण तट– औसत वार्षिक वर्षा 178 सेमी से कम होती है।

ब. पूर्वी मध्य भारत– 100 सेमी की सम वर्षा रेखा इस क्षेत्र को शुष्क क्षेत्र से पृथक करती है।

स. पश्चिमी मध्य भारत– यहां वर्षा 60 से 100 सेमी कीमत होती है।

द. वृष्टि छाया क्षेत्र– यह औसत वार्षिक वर्षा 60 सेमी से कम होती है।

य. अर्द्ध मरुस्थल– यहां 60 सेमी से कम वर्षा की मात्रा पाई जाती है।

4. पंजाब प्रकार–

यह मध्य भारत प्रकार का उपभाग है जिसमें थोड़ी–बहुत वर्षा शीत ऋतु में हो जाती है। यहां ग्रीष्म ऋतु अधिक गर्म तथा शीत ऋतु अधिक शीत पाई जाती है।

5. मरुस्थलीय प्रकार–

इसमें पश्चिमी राजस्थान क्षेत्र शामिल है जहां वर्षा बहुत कम पायी जाती है। जिसके कारण जलवायु शुष्क पाई जाती है।

6. हिमालयी प्रकार–

इसमें कशमीर हिमाचल प्रदेश, सिक्किम, उत्तराखण्ड और भूटान शामिल है। यहां वर्षभर हिमवर्षा के रूप में वर्षा होती रहती है। यहां ग्रीष्म ऋतु सुहावनी तथा शीत ऋतु बहुत ठंड भरी होती है।

केंड्रयू तथा एल0 डी0 स्टाम्प–

उन्होंने भारत को दो जलवायु प्रदेशों उपोष्ण कटिबंधीय एवं उष्णकटिबंधीय भागों में बांटा है जिसका निर्धारण जनवरी माह कि 18 डिग्री सेल्सियस समताप रेखा जो भारत के मध्य भाग में कर्क रेखा के समानांतर पाई

जाती है। वर्षा के आधार पर उपोष्ण कटिबंध जलवायु को पांच तथा उष्णकटिबंधीय जलवायु को 6 उप प्रदेशों में विभाजित किया है।

(क) उपोष्ण कटिबंधीय (महादीपीय) भारत–

हिमालय प्रदेश–

इस प्रदेश पर समुद्र का कोई प्रभाव नहीं होता है। यहां 2450 मीटर की ऊंचाई पर जाड़े का तापमान 4 डिग्री सेल्सियस से 7 डिग्री सेल्सियस और गर्मी का तापमान 13 डिग्री सेल्सियस से 18 डिग्री सेल्सियस के मध्य पाया जाता है वर्षा की मात्रा पश्चिमी से पूरब की ओर बढ़ती जाती है। पश्चिमी भाग में 125 सेमी वर्षा कथा पूर्वी भाग में 200 सेमी से अधिक वर्षा पाई जाती है।

उत्तर–पश्चिमी पठार–

यहां 16 डिग्री सेल्सियस तापमान ठंडी में पाया जाता है। सबसे गर्म माह का औसत तापमान 34 डिग्री सेल्सियस रहता है। यहां वर्षा 40 से मी होती है।

उत्तर–पश्चिमी शुष्क मैदान–

यहां शीत ऋतु का तापमान 13 डिग्री से 24 डिग्री सेल्सियस के मध्य पाया जाता है परंतु ग्रीष्म काल में बढ़कर 40 डिग्री सेल्सियस पहुंच जाता है। यहां वार्षिक वर्षा 5 सेमी से भी कम पाया जाता है। इसमें राजस्थान, कच्छ तथा दक्षिण–पश्चिमी हरियाणा शामिल हैं।

मध्यम वर्षा का क्षेत्र–

यहां शीत ऋतु तथा ग्रीष्म ऋतु का तापमान क्रमशः 15 डिग्री सेल्सियस से 17.2 डिग्री सेल्सियस तथा 35 डिग्री सेल्सियस पाया जाता है। वार्षिक वर्षा की मात्रा 40 से 80 सेमी के मध्य आया जाते हैं। इसका विस्तार पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, दिल्ली, पूर्वी राजस्थान तथा मध्यप्रदेश में पाया जाता है।

संक्रमण मैदान–

यहां औसत तापमान शीत ऋतु में 16 डिग्री से 18 डिग्री सेल्सियस के बीच तथा गर्मी का 35 डिग्री सेल्सियस पाया जाता है। वार्षिक औसत वर्षा 100 से 150 सेमी के बीच पाया जाता है।

(ख) उष्णकटिबंधीय भारत –

अत्यधिक वर्षा का क्षेत्र–

यहां वार्षिक वर्षा की मात्रा 100 से 200 सेमी के बीच पाया जाता है। इसका विस्तार पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, झारखंड छत्तीसगढ़, कुछ मध्य प्रदेश के क्षेत्र, पूर्वी महाराष्ट्र तथा उत्तर–पूर्वी आंध्र प्रदेश के भागों में पाया जाता है।

मध्यम वर्षा का क्षेत्र–

इसका विस्तार पश्चिमी घाट के पूर्वी भाग में पाया जाता है। यह वर्षा का वार्षिक मात्रा 75 सेमी से कम एवं औसत तापमान ग्रीष्म काल में 32 डिग्री सेल्सियस तथा शीत ऋतु में 18 डिग्री से 24 डिग्री सेल्सियस के बीच पाया जाता है।

कोंकण तट–

यहां वार्षिक वर्षा की मात्रा 200 सेमी पाई जाती है इसका विस्तार गोवा में नर्मदा नदी के मुहाने तक पश्चिमी घाट के सारे पाया जाता है।

मालाबार तट–

यहां वार्षिक वर्षा की मात्रा 500 से मी पाई जाती है औसत वार्षिक तापमान 27 डिग्री सेल्सियस पाया जाता है। यह वर्षा अरब सागरी शाखा से होती है।

तमिलनाडु–

औसत वार्षिक वर्षा 100 से 150 सेमी पाई जाती है जो नवंबर दिसंबर में लौटते मानसून से होती है। यहां शीत युद्ध का औसत तापमान 24 डिग्री सेल्सियस पाया जाता है।

3.4 एल–निनो

एल–निनो एक उप–सतही गर्म जलधारा है जो सुव्यवस्थित एवं एक ही मार्ग अनुसरण करते हुए बहता है। इसका सम्बन्ध विषुवत रेखा पवन प्रवाह से है तथा यह अपने उत्पत्ति कारक के साथ–साथ परिवर्तित होता रहता है। यह दक्षिण अमेरिका के पश्चिमी तट तथा प्रशान्त महासागर के पूर्वी भाग निकट प्रवाहित होता है। यह समय के साथ वायुदाब तथा पवन संचार में परिवर्तन से यह प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होती है। यह विश्व जलवायु को प्रभावित करती है। इसकी उत्पत्ति 3 वर्ष से 8 वर्ष के अन्तराल पर होती है।

एल–निनो क्रिसमस के दौरान उत्पन्न होती हैं इसका नामकरण EL-Ninoनाम स्पेनिश भाषा के शब्द पर किया गया है जिसका अर्थ 'शिशु ईसा' (The boy child, Jesus) ।यह प्रशान्त महासागर से पेरू–इक्वाडोर के तट के सहारे

दक्षिण दिशा की ओर प्रवाहित होता हैं इसका प्रवाह दिशा बदलता रहता है। ऐसा अनुभव के द्वारा ज्ञान होता है जो अर्द्ध–चक्रीय सदृश्य परिलक्षित होता है। इससे इस तट पर विभिन्न प्रकार के मौसमी एवं सामाजिक बदलाव दिखता है।

एल–निनो का कारण–

जब यह धारा अपना रूप बदलकर प्रकट होती है तो एक विशेष प्रकार की भौगोलिक परिघटना रूप धारण करके प्रकट होती है। इसके जनन की प्रक्रिया तथा मूल कारणों का अभी तक कोई ठोस जानकारी नहीं प्राप्त हुई है। कुछ महत्वपूर्ण वायुमण्डलीय परिघटनाओं तथा एल–निनो घटना के मध्य कुछ रोचक सहसम्बन्ध अवश्य स्थापित किये गये है जिनमें दक्षिणी अमेरिकी के पश्चिमी तट या प्रशान्त महासागर के पूर्वी तट के सहारे अन्तः सागरीय भूकम्पीय गतिविधियाँ शामिल हैं जो पृथ्वी के मध्य महासागरीय कटक पर सर्वाधिक तीव्र गति से प्रवाहित होने वाली व्यवस्था हैं यह और अन्य संयोजन अभी तक कारण सहित वैज्ञानिक रूप से सिद्ध नहीं हुआ है।

एल–निनो का परिणाम–

एल–निनो पिछले कुछ वर्षों के दौरान पेरू के तट पर नियमित रूप से सामान्य से भारी वर्षा होती है क्योंकि गर्म सागर से प्रवाहित होने वाली वायु संचरण से तीव्र वाष्पीकरण होने लगता है जिससे वायुमण्डल में आर्द्र की अधिकता होने लगती है। जब यह हवा पर्वतीय ढाल पर चढ़ती है तो तीव्र वर्षा करती है। एल–निनो के समय पेरू के तटवर्ती भाग में तीव्र वर्षा होना सामान्य है। यहां एण्डीज पर्वतीय क्षेत्र में भूस्खलन तथा आकस्मिक बाढ़ का जन्म हो जाता है।

ठण्डी पेरू या हम्वोल्ट की धारा गहरे सागर से पोषण युक्त खाद्य सामग्री का जल के साथ ऊपर उठाती हैं जो मछलियों का प्राथमिक भोजन है इसमें एन्कोवी मछली प्रमुख है। वर्ष के अन्त में एल–निनो, ठण्डी पेरू का स्थान ले लेती है जिससे इस तट पर भारी वर्षा होती है। इसी समय भारत, आस्ट्रेलिया, इण्डोनेशिया एवं फिलीपीन्स में भयानक सूखा पड़ता है।

एल–निनो से एक तरफ जल प्राप्ति से किसानों की चारागाहों को जल मिलता है तो वहीं दूसरी तरफ पेरू के मछुआरों को भारी हानि होती है। क्योंकि तापमान में परिवर्तन होने तथा विषम प्रकृति की वर्षा होने से मछलियाँ मर जाती हैं जहां जीवाश्म अपघटन अधिक होता है क्योंकि प्रकाश के अभाव में प्लैंकटन नष्ट हो जाती है जिससे भोजन के अभाव में मछलियां मर जाती है।

3.5 एल–निनो एवं मानसून–

एल –निनो से मानसून प्रभावित होती है जिसकी जानकारी सर्वप्रथम गिल्वर्ट वाकर ने 1924 में दी है। इनके अनुसार सागरीय सतह के तापमान से वायुदाब एवं पवन प्रवाह प्रभावित होती है। यह विचारधारा कर्क रेखा एवं मकर रेखा के मध्य प्रशान्त महासागर एवं हिन्द महासागर के सतही जल पर निर्भर करता है। इन्होंने बताया कि इन महासगरों के मापमान में परिवर्तन होता रहता है जब प्रशान्त महासागर पर उच्च वायुदाब होता है, तो हिन्द महासागर पर निम्न वायुदाब पाया जाता है। यह स्थिति भारतीय मानसून के लिए अनुकूल होती है। इसे वाकर ने दक्षिणी दोलन कहा है। इसको वाकर चक्र भी कहते हैं।

एल–निनो के आने के समय दक्षिणी–पूर्वी प्रशान्त का वायुदाब गिर तथा पश्चिमी प्रशान्त महासागर के इण्डोनेशिया एवं उत्तरी आस्ट्रेलिया के पास वायुदाब में वृद्धि हो जाती है। एल–निनो के खत्म हो जाने से इन प्रदेशों में वायुदाब पुनः कम हो जाती है। इस बदलते वायुदाब प्रतिरूप को दक्षिणी दोलन कहते हैं। इसका जनन इन महासागरों में उष्णता के कारण होता है जो 7 वर्षों में होता है। इस परिघटना को प्रायः एन्सों(El-Nini/Southern Oscillation, ENSO)कहते हैं। इण्डोनेशिया का सागरीय सतह सामान्यतया पेरू से एक मीटर ऊँचा है लेकिन एल–निनो के समय लगभग समान हो जाता है। इसी से दक्षिणी प्रशान्त महासागर में वायुदाब की कमी आती है क्योंकि व्यापारिक हवायें कमजोर हो जाती हैं जिससे दक्षिणी दोलन प्रभावित होती है।

3.6 ला–निनो–

इसका जनन उष्ण कटिबन्धीय पश्चिमी प्रशान्त महासागर में होता है जिसका निर्धारण 1986 ई0 में किया गया तथा इस परिघटना का नामकरण ला–निनो इसी वर्ष किया गया। इसको एल–निनो की छोटी बहन कहा जाता है। ला–निनो पश्चिमी प्रशान्त महासागर के उमण से जुड़ा हुआ है। ला–निनो के सक्रिय होने पर निम्न घटनायें प्रमुख रूप से घटित होती है–

- ला–निनो के सक्रिय होने पर दक्षिणी दोलन तथा वाकर परिसंचरण सक्रिय एवं संवर्द्धित हो जाती है।

- इस घटना से पेरू के पास पूर्वी प्रशान्त महासागर में ठण्डी जल राशि ऊपर आ जाती है जिससे मौसम शुष्क हो जाता है। मछलियों की भरमार हो जाती है।

- इसके सक्रिय होने से द0 अमेरिका के पश्चिमी तट के पास एल–निनो निष्क्रिय हो जाता है जिससे यहां शुष्क मौसम का साम्राज्य हो जाता है।

- इस समय पश्चिमी प्रशान्त महासागर की सतही जल का तापमान बढ़ जाता है। जिससे मौसम अधिक आर्द्र हो जाता है। इस समय दक्षिणी एवं दक्षिणी–पूर्वी एशिया में मानसून अधिक प्रबल हो जाती है जिससे यहां वर्षा सामान्य से अधिक होती है।

3.7 एल–निनो एवं ला–निनो का प्रभाव–

इसका सर्वाधिक प्रभाव उत्तरी गोलार्द्ध के उष्ण एवं उपोष्ण कटिबन्धीय भागों पर पड़ता हैं 1982–83 एल–निनो घटना का प्रभाव निम्न देखने को मिलता है–

1. पेरू के तट पर भारी वर्षा तथा मछली व्यवसाय में कमी,
2. दक्षिणी एवं दक्षिणी–पूर्वी एशिया में प्रचण्ड सूखा
3. USA के पूर्वी भाग में शरद कालीन तापमान में वृद्धि,
4. अलास्का एवं कनाडा के उत्तरी–पश्चिमी भाग में सामान्य ताप में वृद्धि,
5. मैक्सिको, न्यूजीलैण्ड, आस्ट्रेलिया तथा द0पू0 अफ्रीका में सूखा प्राकेप,
6. प्रशान्त महासागर के तापमान में वृद्धि से प्रवाल विरंजन, जिससे प्रवालों का बड़े पैमाने पर विनाश,
7. पूर्वी में USA इन्सेफैलाटिस रोग का प्रकोप।

3.8 सारांश–

आपने इस तृतीय इकाई में जलवायु प्रदेश, एल–निनो तथा ला–निनो का अध्ययन किया हैं। आप समझ गये होंगे कि जलवायु प्रदेश क्या है, जलवायु प्रदेश का वर्गीकरण कौन–कौन है, ब्लाडिमोर कोपेन, सी0 डब्ल्यू थार्नथ्वेट, जी0टी0 ट्रिवार्था, आर0एल0 सिंह एवं बी0एल0 सी0 जॉनसन का वर्गीकरण, एल–निनो का कारण तथा एल–निनो एवं ला–निनो का प्रभाव।

3.9 शब्द सूची–

जलवायु प्रदेश	Climatic Regions	एल–निनो	El-Nino
मानसून	Monsoon	मानसून अभियान	Monsoon Expedition
प्राकृतिक प्रकोप	Natural Hazard	ला–निनो	Law-Nino
दक्षिणी दोलन	Southern Osillation	तापीय दक्षता	Thermal Efficiency

वाकर कोशिका Walker Cell

3.10 परीक्षोपयोगी प्रश्न–

1. कोपेन भारत को कितने जलवायु प्रदेशों में बांटा है–

(क) 4 (ख) 9 (ग) 10 (घ) 15

2. थार्नथ्वेट ने भारत को कितने प्रदेशों में बांटा है।

(क) 10 (ख) 12 (ग) 15 (घ)8

3. कोपेन ने भारत के कोरोमण्डल के लिए किस सांकेतिक शब्द का प्रयोग किया।

(क) Cwg (ख) Am (ग) As (घ) Aw

4. कोपेन ने मध्य गंगा के मैदान के लिए किस जलवायु संकेत का प्रयोग किया।

(क) Aw (ख) As (ग) Cwg (घ) Am

5. एल–निनो धारा का प्रभाव कहां दिखता है।

(क) अर्जेन्टीना (ख) ब्राजील (ग) नेपाल (घ) पेरू

6. एल–निनो है–

(क) गर्म जलधारा (ख) स्थानीय हवा (ग) चक्रवात (घ)भूकम्प

उत्तरमाला– 1–ख, 2–ख, 3–ग, 4–ग, 5–घ, 6–क

3.11 उपयोगी पुस्तकें व संदर्भ–

1. प्रो0 जगदीश सिंह– भारत : भौगालिक आधार एवं आयामा, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर।
2. प्रो0 आर0सी0 तिवारी भारत का भूगोल, प्रवालिका प्रकाशन।
3. डॉ0 बी0सी0 जाट, भारत का भूगोल, पंचशील प्रकाशन, जयपुर
4. सिंह, आर0एल0– इण्डिया : रीजनल जियोग्राफी एन0जी0एस0आई0, गोरखपुर।
5. डॉ0 वीरेंन्द्र सिंह चौहान एवं अलका गौतम : भारत का विस्तृत भूगोल,
6. Nag, jP. and Sengupta, 8- Geography of India, Gorakhpur, Concept

Publicshing company, New Delhi.

3.12 अभ्यास प्रश्न–

1. ब्लाडिमोर कोपेन का जलवायु प्रदेश का वर्णन कीजिए।
2. थार्नश्वेट महोदय का जलवायु प्रदेश का वर्णन कीजिए।
3. आर0एल0 सिंह का जलवायु प्रदेश का वर्णन कीजिए।
4. एल–निनो एवं ला–निनो की व्याख्या कीजिए।
5. एल–निनो एवं मानसून के सम्बन्ध की व्याख्या कीजिए।
6. ला–निनो की व्याख्या करते हुए इसके प्रभावों का वर्णन कीजिए।

MAGO-102 भारत का भूगोल

इकाई–4 मिट्टी : प्रकार एवं वितरण, वनस्पति प्रकार एवं वितरण

इकाई की रूपरेखा–

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 मृदा

4.4 भारतीय मृदा का वर्गीकरण

4.5 भारतीय मृदा का प्रकार एवं वितरण

4.6 प्राकृतिक वनस्पति

4.7 सारांश

4.8 शब्द सूची

4.9 परीक्षोपयोगी प्रश्न

4.10 उपयोगी पुस्तकें एवं सन्दर्भ

4.11 अभ्यास प्रश्न

4.1 प्रस्तावना–

भारत भूगोल की यह तृतीय इकाई है, इसमें आप मृदा, मृदा का वर्गीकरण, मृदा का संगठन, मृदा का प्रकार एवं वितरण वाले कारक, वनस्पति का वर्गीकरण, वनस्पति को प्रभावित करने वाले कारक, वनस्पति पर ऊचाई का प्रभाव, मृदा में प्रमुख पदार्थ, कृषि के उपयोगी, कृषि हेतु उपयुक्त मृदा तथा अल्पाइन वनस्पति का अध्ययन करेंगे। भारत की मृदा में आवश्यक तत्वों का अध्ययन करेंगे। आर्थिक दृष्टि से उपयेगी वनों, सदाबहार वन से लेकर मरुस्थलीय वन का अध्ययन तथा पर्वतीय वन से लेकर तटवर्ती वन का अध्ययन करेंगे। भारतीय मृदा के प्रमुख प्रकारों, उनके संगठनात्मक ढाचों, अवनयन, वितरण एवं उपयोगिता का अध्ययन करेंगे।

4.2 उद्देश्य–

भारत भूगोल के इस इकाई का आप अध्ययन करने के बाद–

- भारत के मृदा का प्रकार एवं वितरण को समझ सकेंगे
- मृदा के संगठन एवं प्रमुख ढाचों को समझ सकेंगे
- भारत की वनस्पति का प्रकार एवं वितरण समझ सकेंगे
- हिमालयी वनस्पति को समझ सकेंगे
- वनस्पति को प्रभावि करने वाले तत्व को समझ सकेंगे

4.3 मिट्टी

मिट्टी प्रकृति प्रदत्त एक बहुमूल्य संसाधन है जो पृथ्वी के ऊपरी सतह पर एक परत के रूप में पायी जाती है। मिट्टी महीन रूप से विभाजित शैलखण्डों का चूर्ण होता है जिसमें विभिन्न प्रकार के घुलनशील तत्व भी पाये जाते हैं जो पेड़–पौधे के विकास में सहायक होती है। जहां पर मृदा में उर्वरक व पोषक तत्वों की भरमार होती है वहां कृषि उत्पादन अधिक होता है। जिसके परिणामस्वरूप वहां सघन जनसंख्या निवास करती है लेकिन जहां पर मृदा में उर्वरा शक्ति का अभाव पाया जाता है वहां जनसंख्या बहुत रिल पायी जाती है। लोगों का रहन–सहन का स्तर काफी नीचे होता है।

यह धरातल पर असंघिटत पदार्थों की ऊपरी परत है जिसे अपक्षय मृदा के निर्माण में पर्यावरण के विभिन्न साधन योगदान व सहयोग प्रदान करते हैं जिसमें मूल चट्टान, उच्चावच, वनस्पति, जलवायु, अपवाह, जैव पदार्थ इत्यादि है। मृदा में विभिन्न प्रकार के कण शामिल होते हैं। जिसमें कलिलीय मृदा या सबसे बारीक कण से बजरी एवं गुटिका तक के आकार वाले कण शामिल होते हैं।

मृदा निर्माण–

भारत में जलवायविक विविधता पायी जाती है जिसके प्रभाव से यहां मृदा भी कई प्रकार की मिलती है। भारत की मृदा में भिन्नता लाने वाले कारकों में जलवायु, उच्चावच तथा प्राकृतिक वनस्पति एवं जीव–जन्तुओं की प्रमुख भूमिका है जिसका विवरण निम्नवत है–

यथार्थ पदार्थ–

मृदा निर्माण में यथार्थ या मूल पदार्थ वे हैं जो अपरदन एवं अपक्षय से प्राप्त होते हैं जिसका प्रभाव मृदा रंग, गठन, रवों की संरचना तथा मृदा में खनिजों की मात्रा पर पड़ता है।

उच्चावच–

इसका मृदा निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका है जहां पर ढाल अधिक पाया जाता है वहां पर मृदा की गहराई कम पायी जाती है तथा जहां पर ढाल कम पाया जाता है वहां पर मृदा की गहराई अधिक पायी जाती है। इसी कारण उत्तरी मैदान में इसकी गहराई अधिक पायी जाती है।

जलवायु–

यह मृदा निर्माण का प्रमुख कारक है जिसको प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से अन्य कारक भी प्रभावित करता है। मूल पदार्थ का अपक्षय तथा जीवाणुओं कची क्रियाशीलता प्रभावित होती है। तापमान तथा वर्षा उसका प्रमुख तत्व हैं।

जैविक पदार्थ–

इसमें प्राकृतिक वनस्पति एवं जीवाणुओं को शामिल किया जाता है। मृदा में जीवाश्म तथा नाइट्रोजन का संचयन भी होता है। वनस्पति मृदा अपरदन को रोकता है तथा सड़े–गले जीवश्म मृदा को उर्वर बनाते हैं।

4.4 भारतीय मृदा का वर्गीकरण

भारतीय मृदा का वर्गीकरण पिछले 100 वर्षों से कई विद्वानों एवं संस्थाओं ने किया है जिसमें लेदर एवं बोय लेकर (क्रमशः 1898 एवं 1893) के आनुभाविक वर्गीकरण के आधार पर भारती की चार प्रकार की मृदा का वर्गीकरण किया। श्चेकाल्स्काया (1932) ने इसी मृदा विज्ञान संस्थान से प्रेरणा प्राप्त करके भारत की मिट्टी को 16 वर्गों में बांटा। राष्ट्रीय एटलस संगठन, कोलकाता (1957) ने देश की मृदा को 6 प्रमुख और 11 गौण भागों में बांटा। भारतीय कृषि अनुसंधार परिषद (आई0सी0ए0आर0) 1963 में राय चौधरी द्वारा देश की मिट्टी को 7 प्रमुख एवं 17 उपभागों में बांटा। कुछ समय पहले भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने भारत की मृदा को 8 प्रमुख और 27 गौड़ भागों में बांटा।

4.5 भारतीय मृदा का प्रकार एवं वितरण–

भारत की भू–वैज्ञानिक संरचना, धरातलीय उच्चावच, जलवायु तथा प्राकृतिक वनस्पति की विभिन्नता के कारण विभिन्न क्षेत्रों में भिन्न–भिन्न प्रकार की मृदा पायी जाती है।

1. जलोढ़ मृदा–

यह मृदा देश के 14.25 लाख वर्ग किमी0 (43.4 प्रतिशत) पर पश्चिम में सतलुज नदी से पूर्व में ब्रह्मपुत्र घाटी तक फैला है। अन्य विस्तार में नर्मदा, ताप्ती, कावेरी, कृष्णा, गोदावरी तथा महानदी में भी पाया जाता है। इनका निर्माण हिमलाय एवं प्रायद्वीपीय नदियों द्वारा लाये गये मलवा के जमाव से हुआ है। इसका रंग हल्का धूसर एवं भस्मी धूसर जैसी होती है तथा इनकी रचना रेतीली से गादी, दोमट तक है। इस मृदा में फास्फोरिक एसिड, पोटाश, चूना तथा जैव पदार्थ की प्रचुरता पायी जाती है। लेकिन इसमें नाइट्रोजन एवं ह्यूमस की कमी पायी जाती है। सिंचाई की मदद से इसमें गेहूँ, चावल, गन्ना, कपास, जूट, मक्का, तिलहन, फल एवं शाक–सब्जियों की खेती की जाती है। इसी कारण इस क्षेत्र को गेहूँ एवं चावल के कटोरे के रूप में जाना जाता है। इस क्षेत्र में घनी जनसंख्या पायी जाती है। क्योंकि इनके पोषण हेतु खाद्य पदार्थों की आपूर्ति हो जाती है। इस मृदा को दो उपभागों में बांटा जा सकता है– प्रथम– नवीन जलोढ़ मृदा, जिसको खादर भी कहा जाता है। इसका विस्तार नदी के बाढ़ वाले भाग में पाया जाता है।, यहां प्रति वर्ष बाढ़ से नवीन परत का निर्माण होता है। द्वितीय– प्राचीन जलोढ़ जिसे बांगर मृदा भी कहते हैं। यह बाढ़ वाले भाग से दूर कुछ ऊँचाई वाला भाग होता है। इसमें चूना युक्त कंकड़ भी अधिक पाये जाते हैं। शिवालिक के गिरपद के क्षेत्र में गुटिकायुक्त मृदा को भाषर कहते हैं। इसके और दक्षिण में दलदली एवं गादी मृदा वाले क्षेत्र को तराई कहा जाता है।

2. काली मृदा–

इसे कपास मृदा, रेगुड़ मुदा एवं ट्रापिकल सेरनोज मृदा आदि के नामों से जाना जाता है। इसका निर्माण दक्कन लावा के अवसादों से हुआ है। इसका देश में 49.8 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र (15 प्रतिशत) पर विस्तार है। यह महाराष्ट्र, प0 मध्य प्रदेश, गुजरात, कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश, राजस्थान, उत्तर प्रदेश तथा तमिलनाडु में फैला हुआ है।

इस मृदा का रंग गहरा काला से हल्का कालातक पाया जाता है। कुछ भागों में चेस्टनट के सदृश्य दिखाई देती है। इस मृदा में चूना, कैल्शियम, पोटाश

अलयूमिनियम, लोहा, और मैग्नीशियम कार्बोनेट की अधिकता पायी जाती है। नाइट्रोजन, फास्फोरस तथा जैव पदार्थ की कमी पायी जाती है। काली मृदा में जल धारण करने की क्षमता अधिक होती है। यह भगीने पर चिपचिपी तथा सूखने पर कठोर एवं दरारयुक्त हो जाती है। इस मृदा को स्वतः जुताई वाली मृदा भी कहते हैं। यह मृदा कपास, अरहर, फलीदार फसल तथा रसदार फल के लिए उपयुक्त होती है।

यह मृदा काफी उर्वर होती है तथा कपास की कृषि के लिए उपयुक्त होती है इसके अलावा इसमें मूंगफली, दलहन, गन्ना, तम्बाकू व तिलहन की कृषि भी की जाती है। इसमें जल धारण की क्षमता अधिक होती है। यह मृदा एक अन्तर्कटिबन्धीय मृदा है। इस प्रकार की मृदा में प्रादेशिक भिन्नता पायी जाती है। महाराष्ट्र में हल्के रंग की पतली जमाव की काली मृदा पायी जाती है। पश्चिमी घाट के सहारे मृदा काफी मोटी संगठन वाली एवं बजरी सदृश मिलती है। मध्य प्रदेश में गहरी काली मृदा पायी जाती है। कपास उत्पादक के सम्पूर्ण क्षेत्र में गहरी काली मृदा मिलती है।

3. लाल मृदा– यह मृदा देश के 6.1 लाख वर्ग क्षेत्र (13.5 प्रतिशत) पर फैला हुआ है। इसका अधिकांश विस्तार प्रायद्वीपीय भाग में है। यह मृदा काली मृदा को उत्तर, दक्षिण एवं पूरब से घेरे हुए है। कर्नाटक, पश्चिमी तमिलनाडु, द0 महाराष्ट्र, छत्तीसगढ़, आन्ध्र प्रदेश, छोटा नागपुर का पठार एवं उड़ीसा में इस मृदा का वितरण पाया जाता है। यह छिटपुट रूप में पं0 बंगाल, उत्तर प्रदेश, राजस्थान के जनपदों में पाया जाता है। फेरिक आक्साइड तत्व के कारण इसका रंग लाल होता है। इस लाल मृदा के नीचे इसका रंग पीत के समान हो जाता है। इसमें चूना, मैग्नीशियम, फास्फेट, नाइट्रोजन, ह्यूमस और पोटाश की कमी पायी जाती है। इस मृदा में गेहूँ, चावल, कपास, आलू, दाल, तम्बाकू, ज्वार, अलसी, मूंगफली तथा फल की खेती की जाती है।

आकारिकी के आधार पर मृदा को दो वर्गों में बांटा जा सकता है– लाल लोमी मृदा तथा लाल मृदा। लाललोमी मृदा मृतिका युक्त जल वृत्त, ढेलानुमा संरचना वाली होती है। लोहे का अंश अधिक होने पर इसका रंग लाल होता है। मृदा कण फेरिक आक्साइड से कोटेड होते हैं। जब यह मृदा जलयोजित होती है तो पीले रंग की हो जाती है। इसमें गहरी मृतिका पायी जाती है। तमिलनाडु की लाल मृदा का निर्माण वहां की लाल ग्रेनाइट के अपक्षय का परिणाम है जबकि छोटा नागपुर प्रदेश लाल मृतिका में अम्लीयता की अधिकता पायी जाती है। इस मृदा में अधिकांशतः मोटे अनाज की खेती की जाती है।

4. लैटेराइट मृदा–

इस मृदा का निर्माण सर्वप्रथम 1905 में वुकानन महोदय द्वारा किया गया। लैटेराइट नाम लैटिन भाषा के 'Later'शब्द से लिया गया है जिसका अर्थ 'ईंट' है। यह मृदा भीगने पर मक्खन की भांति कोमल लेकिन सूखने पर कठोर हो जाता है। यह मानसूनी वर्षा वाली उष्ण कटिबन्धीय जलवायु की मृदा है। लौह आक्साइड के कारण इसका रंग लाल दिखाई देता है। यह प्रायद्वीपीय भारत के पठारी भाग पर विकसित हुई है।

सहयाद्रि, पूर्वी घाट, विन्ध्य पहाड़ी, सतपुड़ा तथा राजमहल पहाड़ियों के शखरों पर इस मृदा का पर्याप्त किास हुआ है। यह भारत के 1.22 लाख वर्ग किमी0 (3.7 प्रतिशत) क्षेत्र पर फैसला हैं यह केरल, कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, पं0 बंगाल, उड़ीसा, झारखण्ड, मेघालय तथा असम के कुछ जनपदों में भी पाया जाता है। लोहा, पोटाश एवं एल्युमिनियम की अधिकता तथा नाइट्रोजन, चूना, फास्फोरस एवं जैव पदार्थ की कमी इस मृदा में पायी जाती है। इसमें कपास, चावल, रागी, दाल, गन्ना, चाय, कहवा और काजू आदि की कृषि की जाती है।

लेटेराइट मृदा का निर्माण उष्णार्द्र क्षेत्रों में होती है जहां अधिक वर्षा के कारण ऊपरी भाग से सिलिका एवं जीवाश्म का अपवहन हो जाता है तथा यह तत्व निचले संस्तरों में जमा हो जाते हैं। इस प्रक्रिया को निक्षालन कहते हैं। जिसके बाद ऊपरी संस्तर में एल्यूमीनियम एवं लोहा शेष बच जाता है। कहीं–कहीं एल्यूमीनियम इतनी मात्रा में बच जाती है जिसका उपयोग बाक्साइट के अयस्क के रूप में होने लगता है।

5. पर्वतीय मृदा–

यह मृदा हिमालय की घाटियों एवं ढालों पूर्वी एवं पश्चिमी घाट तथा प्रायद्वीपीय भारत में नीलगिरी, सतपुड़ा, इलायची की पहाड़ियों में पायी जाती है। पर पायी जाती है। यह 2700 मीटर से 3000 मीटर की ऊँचाई पर फैली है। यह एक अपरिपक्व मृदा है जिसमें कार्बन, नाइट्रोजन की अधिकता पायी जाती है। इसका गठन गादी दुमट से दुमट, रंग गहरा भूरा होता है। असम, दार्जिलिंग, उत्तराखण्ड, कश्मीर एवं हिमाचल प्रदेश में देवदार, अल्पाइन, देवदार के क्षेत्र में पाया जाता है। देश में दो प्रकार की पर्वतीय मृदा पायी जाती है– प्रथम भूरी वन मृदा तथा दूसरा पोडजोलिक मृदा। भूरी वन मृदा का पीएच मान 6 से 7 होता है जबकि पोडजोलिक मृदा का पीएच मान 5 से 6 होता है। पहाड़ी भाग में झूम कृषि जनजातियों द्वारा की जाती है जिसमें वन की कटाई बड़े पैमाने पर की गयी है। जिसके कारण यह क्षेत्र गम्भीर भूमि समस्या से ग्रसित हो रहा है।

6. मरुस्थलीय मृदा–

इसका विस्तार शुष्क और अर्द्धशुष्क जलवायु दशाओं में पाया जाता है। राजस्थान, पंजाब, सौराष्ट, कच्छ तथा हरियाणा में लगभग 142000 वर्ग किमी0 क्षेत्र पर फैली है। इसका आकार रेतीली से बजरीयुक्त तक होती है। नाइट्रोजन और ह्यूमस की कमी होती है।रेत की मात्रा पूर्व से पश्चिम की ओर बढ़ती जाती है। इसमें घुलने वाले लवण की मात्रा अधिक होती है। नमी और जैव पदार्थ की कमी पाई जाती है। इसमें ज्वार–बाजरा, रागी तथा मोटे अनाज पैदा किए जाते हैं।

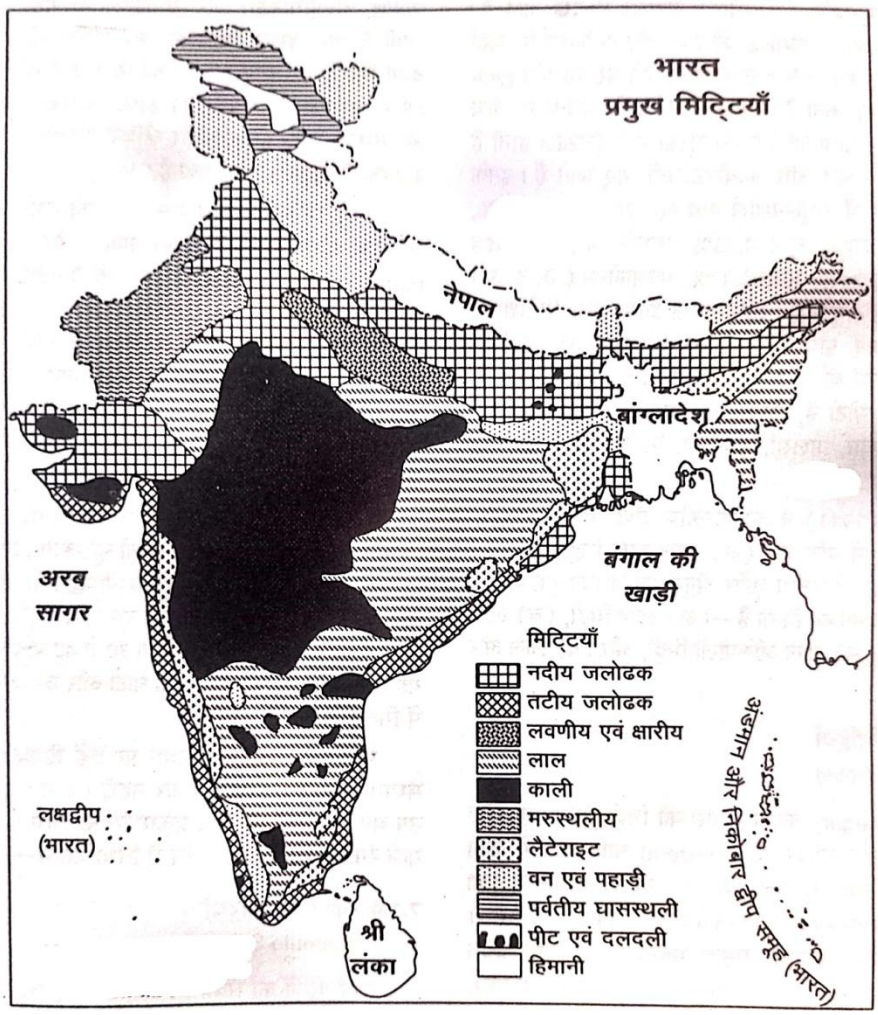

चित्र 1

7. वन मृदा–

यह हिमालय में शंकुधारी वन क्षेत्रों में पायी जाती है जो 3000 मीटर से 3150 मीटर के बीच में मिलती है। इसका कुछ जमाव छिटपुट में पश्चिमी घाट

तथा तराई के क्षेत्रों में पायी जाती है। यह मृदा पेड़–पौधे के पत्तियों से ढके रहते हैं तथा सड़ने–गलने से यह काली रंग की हो जाती है जो नीचे की ओर लाल होती है। इसमें पोटाश, फास्फोरस एवं चूने की कमी होती है। इसमें अम्लीय दशाओं में पाडजोल से लेकर कम अम्लीय के बीच परिवर्तन देखने को मिलता है। इसमें चाय, कहवा, मसालों, गेहूँ, चावल, मक्का, जौ, आदि की खेती की जाती है।

8. लवणीय एवं क्षारीय मृदा–

यह महाराष्ट्र, पंजाब, हरियाणा, बिहार, उत्तर प्रदेश तथा राजस्थान के शुष्क क्षेत्र में 68000 वर्ग किमी0 क्षेत्र पर फैली है। इसमें कैल्शियम, सोडियम केशिका क्रिया द्वारा धरातल के ऊपर आ जाते हैं जो सफेद का दिखाई देता है। इस प्रकार के अनुपजाऊ क्षेत्र को रेह, कल्लर, ऊसर, राकर, चोपन एवं धुर कहते हैं। नहर सिंचाई वाले क्षेत्रों में इस मृदा का विस्तार में वृद्धि हो रहा है। इसमें नाइट्रोजन एवं चूने की कमी पायी जाती है। इसमें गेहूँ, गन्ना, कपास तथा तम्बाकू की खेती की जाती है।

9. पीतमय एवं दलदली मृदा–

यह आर्द्र क्षेत्रों में जैव पदार्थ से सम्पन्न होती है। यह भारी वर्षा से डूब जाती है। यह काली एवं अम्लीय मृदा होती है। लवण एवं ह्यूमस की अधिकता तथा पोटाश एवं फास्फोरस की कमी पायी जाती है। यह मृदा केरल के कोट्टायम एवं अलप्पुणा जनपद के कुछ क्षेत्रों में पाया जाता है। दलदली मृदा उत्तरी बिहार, तमिलनाडु के तट, पश्चिम बंगाल, उड़ीसा तथा उत्तराखण्ड के कुछ भाग में पाया जाता है।

10. तराई मृदा– यह पंजाब, उत्तर प्रदेश, बिहार एवं पश्चिम बंगाल में विस्तृत है। यह मृदा शिवालिक गिर पद के सहारे पाया जाता है। यह मृदा अधिक उपजाऊ होती है। यहां घने वन का विस्तार पाया जाता है।

11. कंकाली मृदा–

यह विन्ध्य बलुआ पत्थर और लद्दाख में पायी जाती है। इसका रंग पीत से गहरा भूरा होता है। इसमें मोटा अनाज पैदा किया जाता है क्योंकि यह एक अप्रौढ़ मृदा है।

भारतीय मृदा की समस्या निम्न कारणें से भारतीय मृदासमस्याओं से ग्रसित है– मृदा अपरदन, भूवैज्ञानिक अपरदन एवं जलीय अपरदन है। जलीय अपरदन में वर्षा बूंद अपरदन, परत अपरदन, नलिका अपरदन, अवनलिका

अपरदन तथा सरिता तटीय अपरदन आदि हैं। वायु अपरदन, समुद्र अपरदन, मानवीय अपरदन तथा कुछ विशेषीकृत अपरदन है।

4.6 प्राकृति वनस्पति के प्रकार एवं वितरण–

भारत की जलवायु एवं धरातलीय बनावट के विविधता के कारण यहां आर्द्र सदाबहार वन से लेकर शुष्क कांटेदार तक के वन पाये जाते हैं। भारतीय वन का अनेक विद्वानों ने समय–समय पर अपना वर्गीकरण प्रस्तुत किया गया है। इनमें एच0जी0 चैपियन, श्वीनफर्थ, कार्ल ट्राल, सी0जी0 काल्डर, जी0 एस0 पुरी आदि का वर्गीकरण महत्वपूर्ण है। इनमें चैम्पियन का वर्गीकरण काफी महत्वपूर्ण है जिसमें उन्होंने भारत की कुल 116 वनस्पति प्रदेशों में बांटा है। बाद में पुरी एवं सेठी ने संशोधन करके कुल 16 वनस्पति प्रदेशों बांटा। इन सभी वन्स्पति प्रदेशों का वर्गीकरण करने वाले लेखकों के विचारों की व्याख्या निम्नवत है–

1. उष्ण कटिबन्धीय सदाबहार वनस्पति–

इसमें उष्ण कटिबन्धीय आर्द्र एवं अर्द्ध सदाबहार वनस्पति प्रदेशों को शामिल किया जाता है। इस प्रकार के वनस्पति 200 वर्षा वाले क्षेत्रों में मिलते हैं। यहां वनस्पति के साथ–साथ सघन वन एवं लतायें भी पायी जाती हैं। असम, त्रिपुरा मणिपुर, मेघालय व नागालैण्ड, पश्चिमी घाट तथा अण्डमान निकोबार द्वीप समूह में इसका विस्तार पाया जाता है। ये वनस्पति 300 सेमी0 वर्षा वाले भागों में पाया जाता है। पश्चिमी घाट के पवनोभिमुखी ढाल पर इस प्रकार के वन का विस्तार मिलता है क्योंकि यहां भारी मात्रा में वर्षा होती है। यहां के वृक्ष 30 से 60 मीटर लम्बे व सीधे होते हैं जिस पर लतायें फैली होती हैं। महोगनी, साल, रबड़, एबोनी, पलास, ताड़, वैत, तलसर आदि प्रमुख हैं।

उष्ण कटिबन्धीय सदाबहार वन सदा हरे–भरे रहते हैं। सघन वन होने के कारण इनके नीचे घास का अभाव पाया जाता हैं यह क्षेत्र इलायची, काली मिर्च, लौंग और मसालों के बगानों के लिए अनुकूल है। पश्चिमी घाट देश का सर्वाधिक जैव विविधता से सम्पन्न प्रदेश है, इसे जैव विविधता के हॉट स्पॉट में गिना जाता है। इसमें सदाबहार एवं पर्णपाती दोनों प्रकार का वन पाया जाता है। यहां के वृक्षों का कागज निर्माण में अधिक प्रयोग किया जाता है।

2. उष्ण कटिबन्धीय आर्द्र पर्णपाती वनस्पति–

इसका विस्तार देश के उन भागों में मिलता है जहां वर्षा 100–200 सेमी0 के आस–पास होती है। इस प्रकार के वन सघन तो पाये जाते हैं लेकिन लम्बे नहीं होते हैं। इस प्रकार वन वर्ष में एक ग्रीष्म ऋतु से पूर्व अपनी सम्पूर्ण पत्तियां

गिरा देती है। चन्दन, साल, शीशम, महुआ, सागौन, आंवला, जामुन व खैर के वृक्ष मिलते हैं जो आर्थिक दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण होते हैं। वृक्षों के बीच में खुला–खुला स्थान होता है। जहां धास भूमि मिलती है। यह वन हिमालय की तलहटी में भाबर एवं तराई के क्षेत्र, सहाद्री पर्वत के पूर्वी ढाल पर तथा उत्तर–पूर्वी भारत के अनेक क्षेत्रों में मिलता है। इनकी लम्बाई 24–36 मीटर तक होती है। ये वन कठोर, टिकाऊ, महंगी होने के कारण मांग बहुत होती है। इन वनों की लकड़ी का प्रयोग रेलवे स्लीपर एवं भवन निर्माण में प्रयोग किया जाता है।

3. उष्ण कटिबन्धीय शुष्क पर्णपाती वनस्पति–

यह तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश, तेलंगाना, कर्नाटक, द0प्र0 उत्तर प्रदेश, पूर्वी राजस्थान, दक्षिणी पंजाब, हरियाणा, तराई, महाराष्ट्र, छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश, बिहार, झारखण्ड आदि राज्यों के उन भागों में पाया जाता है जहां वर्षा 50–100 सेमी0 वार्षिक होती है। इसमें वृक्ष न तो सघन होते हैं न तो ऊँचे होते हैं। ग्रीष्म ऋतु से पूर्व वर्ष में एक बार अपनी पत्तियां गिरा देती है। इनकी छाल मोटी होती है ताकि शुष्कता से बच सके। बबूल, सीरस, आम, सागौन, शीशम, कीकर, नीम, पलास, तेन्दु, खैर, बेर, पीपल, महुआ व हल्दू आदि के वृक्ष इसमें पाये जाते हैं। तमिलनाडु के कुछ भाग में अधिक तापमान तथा आर्द्रता होने के कारण शुष्क सदाबहार वनस्पति पाये जाते हैं।

4. उष्ण कटिबन्धीय कांटेदार वनस्पति–

इस प्रकार के वन उन क्षेत्रों में मिलता है जहां पर50 सेमी0 से कम वर्षा होती है। वर्षा की कमी के कारण वृक्षों की वृद्धि कम होती हैं, पत्तियां भी कम होती हैं तथा कांटेदार होती हैं, जो झाड़ियों के रूप में मिलती है। इन वनस्पतियों के जड़ें लम्बी होती है तथा छाल चिकनी होती है। इस प्रकार के पेड़ों को मरुद्भिद पादप कहते हैं। नागफनी, बबूल, खेजड़ी, कत्था, थूहड़, खजूर, कैर व घासें प्रमुख हैं इनका विस्तार राजस्थान का पश्चिमी शुष्क भाग व अरावली मध्य प्रदेश तथा आन्तरिक प्रायद्वीपीय भारत का पश्चिमी घाट के पूर्व में स्थित वृष्टि छाया क्षेत्र में इसके अलावा गुजरात एवं पंजाब के कुछ भाग में भी पाया जाता है।

5. शीतोष्ण कटिबन्धीय वनस्पति–

भारत में शीतोष्ण वनस्पति के तीन वर्ग मिलते हैं। प्रथम–आर्द्र शीतोष्ण वनस्पति है जो पर्वतीय भाग में पाया जाता है। यह हिमालय में 1800–3000 मीटर की ऊँचाई पर मिलती है। इसको सदाबहार वनस्पति भी कहा जाता है।

शिवराय, पालनी, अन्नामलाई, नीलगिरी पहाड़ी भागों में भी पाया जाता है। दूसरा–सामान्य शीतोष्ण कटिबन्धीय वनस्पति व तृतीय–शुष्क शीतोष्ण कटिबन्धीय वनस्पति देश में प्रमुख पर्वतीय भागों में पाया जाता है। इन वनों में मेपुल, देवदार, चीड़, पापलर, ब्लूपाइन, एल्व, स्प्रूस, फर आदि देशज तथा मैग्नोलिया सिनकोना, यूकेलिप्टस विदेशज वृक्ष मिलते हैं।

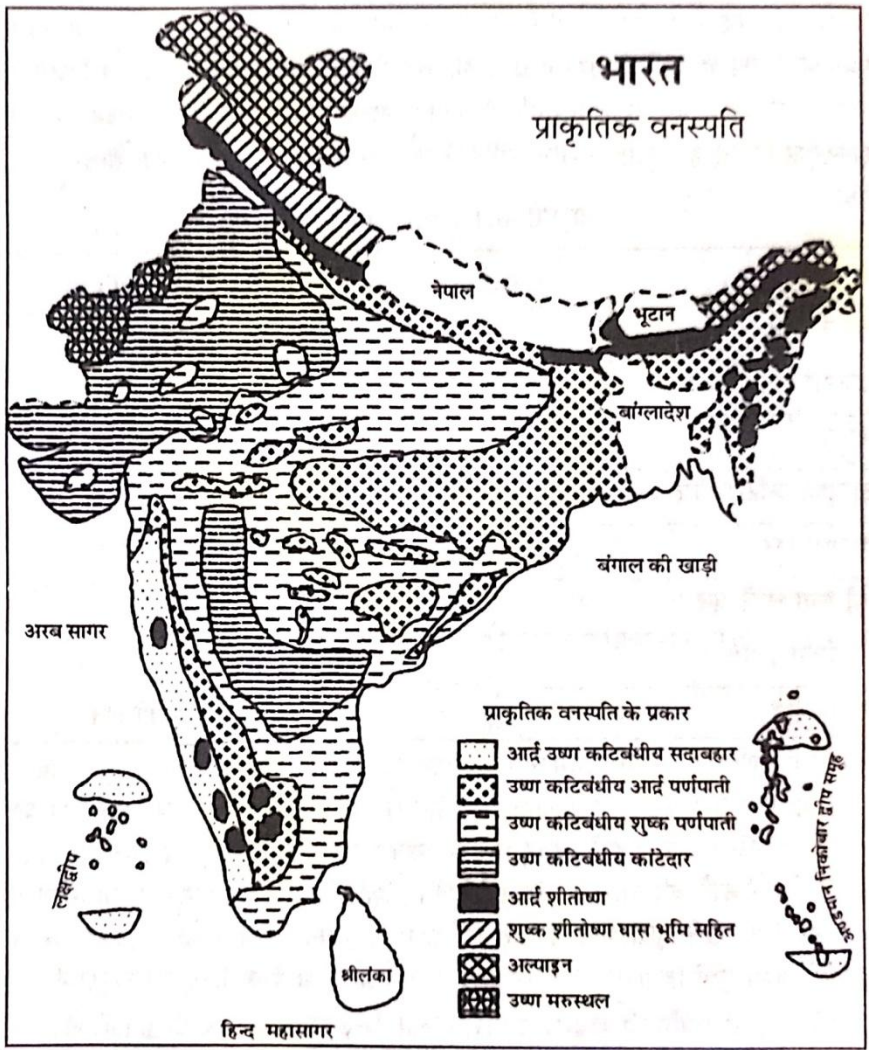

चित्र 2

6. अल्पाइन या पवर्ततीय वनस्पति–

पर्वतीय भाग में उच्चावच में भिन्नता के कारण जलवायिक दशायें भी बदली हैं जिसके परिणामस्वरूप वनस्पति में भी विविधता पायी जाती है। यह विविधता तापमान तथा वर्षा के भिन्नता के कारण है। इसका विस्तार हिमालय, प्रायद्वीपीय भाग तथा पश्चिमी घाट व पूर्वी घाट में है। पर्वतीय वन को दो भागों में विभाजित किया गया है–

(क) दक्षिणी पर्वतीय वनस्पति
(ख) हिमालयी वनस्पति

(क) दक्षिणी पर्वतीय वनस्पति

दक्षिणी भारत की पहाड़ियां सामान्य ऊँचाई वाली है जिकस में मैकाल, सतपुड़ा, विन्ध्याचल, पालनी, अन्नामलाई, नीलगिरी इसके अतिरिक्त पूर्वी घाट एवं पश्चिमी घाट पहाड़ियाँा शामिल है। दक्षिण भारत में 1050–1525 मीटर की ऊँचाई वाले भागों पर आर्द्र पर्वतीय वन मिलते हैं। इसमें पालनी एवं नीलगिरी शामिल है। यहां उष्ण कटिबन्धीय वन सदाबहार वन से भिन्न होते हैं सतपुड़ा, माउण्ट आबू, मैकाले तथा पश्चिमी घाट के शिखरों पर इनके उपवर्ग मिलते हैं। नीलगिरी तथा अरावली में उपोष्ण सवाना वनस्पति मिलती है।

पालनी, अन्नामलाई तथा नीलगिरी की पहाड़ियों पर 1525 मीटर की ऊँचाई वाले वह क्षेत्र जहां 150 सेमी0 से अधिक वर्षा होती है वहां आर्द्र शीतोष्ण वनस्पति मिलती है। दक्षिणी पर्वतीय वनस्पति में बीच–बीच में उर्मिल घास, लाइकेन व फर्न भी पाये जाते हैं।

(ख) हिमालयी वनस्पति–

हिमालय में ऊँचाई के अनुसार विभिन्न प्रकार की वनस्पति पायी जाती है। पूर्वी हिमालय तथा पश्चिमी हिमालय के वनस्पति में भिन्नता पायी जाती है। हिमालय में ऊँचाई के साथ सूर्यातप एवं वर्षा में भिन्नता होने के कारण भी वनस्पति में विविधता पायी जाती है। इस कारण सम्पूर्ण हिमालयी वनस्पति के दो प्रमुख क्षेत्रीय विभाजन किये गये है–

पूर्वी हिमालय की वनस्पति–

यहां की वनस्पति को आर्द्र पर्वतीय वन भी कहते हैं। यहां 200से 255 सेमी0 औसम वर्षा प्राप्त होती है जो पश्चिमी हिमालय की अपेक्षा बहुत अधिक है। इसमें पश्चिम बंगाल, बिहार सिक्किम तथा पूर्वांचल की पहाड़ियां शामिल है। यहां 1000 से 2000 मीटर की ऊँचाई के मध्य आर्द्र शीतोष्ण वन पाये जाते हैं। ओक एवं चेस्टनट यहां प्रमुख रूप से पायी जाती हैं। ऐश एवं चीड़ के वन पाये जाते हैं जो आर्थिक दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण हैं। देवदार हिमालय क्षेत्र में 1700 से 2500 मीटर की ऊँचाई पर पाया जाता है। 2400 मीटर की ऊँचाई पर चेस्टनट, मैपिल, ओक व बर्च के वृक्ष मिलते है। 3660 से 4880 मीटर की ऊँचाई पर अल्पाइन घास मिलती है।

पश्चिमी हिमालय की वनस्पति–

यह क्षेत्र पूर्वी हिमालय की अपेक्षा अधिक शुष्क होता है। यहां 101 से 203 सेमी0 वार्षिक वर्षा होती है। 1000 मीटर पर उष्ण एवं उपोष्ण झाड़ियां पायी जाती है। 1000 से 2000 मीटर की ऊँचाई के मध्य चेस्टनट, पापलर मैपिल, ओक एवं एल्व वृक्ष मिलते हैं। 2000 से 3000 मीटर की ऊँचाई के मध्य आर्द्र–शीतोष्ण वन मिलते हैं। यहां देवदार, चीड़ सिल्वर फर, स्प्रूस, सीडार तथा यू प्रमुख वृक्ष हैं। यहां के देवदार वृक्ष आर्थिक दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण हैं। 3000 से 4500 मीटर की ऊँचाई पर शंकुधारी वन मिलते हैं। शंकुधारी वन 3400 मीटर की ऊँचाई तक ही मिलते हैं। इनसे ऊपर अल्पाइन वन मिलते हैं। 4500 मीटर के ऊपर अल्पाइन शुरू हो जाते हैं। अल्पाइन चारागाह मिलते है जहां घुमक्कड़ी जनजाति पशुचारण करती हैं।

7. ज्वारीय वनस्पति–

यह वनस्पति निदयों के डेल्टाई भागों में पायी जाती है जिसमें गंगा, कृष्णा, महानदी, गोदावरी एवं कावेरी नदियों के डेल्टा। गंगा के डेल्टा में सुन्दरी वन विश्व प्रसिद्ध हैं। इन वनों के लवण सहन क्षमता अधिक होती है। डेल्टा तथा दलदली भागों में यह पाये जाते हैं। इनकी लकड़ी जलावन में काम आती हैं यहाँ, सुन्दरी, ताड़, बेल, नारियल, सोनेरीटा तथा फोनिक्त भी पाये जाते हैं।

4.7 सारांश–

अपने इस चतुर्थ इकाई में मिट्टी, मिट्टी का वर्गीकरण, मृदा का संगठन, मृदा का प्रकार एवं वितरण, वनस्पति का प्रकार एवं वितरण का अध्ययन किया है। आप समझ गये होंगे कि मृदा का निर्माण, मृदा संगठन, मृदा पर किन–किन तत्वों का प्रभाव, भारतीय मृदा के प्रकार, मृदा वितरण, कौन मृदा उपजाऊ है, कौन अनुपजाऊ, वनस्पति का प्रकार, वितरण, हिमालयी वनस्पति, प्रायद्वीपीय वनस्पति तथा तटीय वनस्पति आदि। वन का विकास किन तत्वों से प्रभावित व संवधित होता है। वन का महत्व, वन का आर्थिक उपयोग भी सहझ गये होंगे।

4.8 शब्द सूची–

अल्पाइन वन	Alpine forest	चीका / मृतिका	Clay
निर्वनीकरण	Deforestation	पर्णपाती वन	Deciduous forest
डेल्टा मैदान	Delta Plain	मरुस्थल	Desert
सदापर्णी वन	Evergreen Forest	घास का मैदान	Grassland
अवनालिका अपरदन	Gully Erosion	बीहड़	Ravines
गद	Silt	मृदा प्रदूषण	Soil Pollution

4.9 परीक्षोपयोग प्रश्न–

1. लैटेराइट मृदा का प्रयोग होता है–

(क) कृषि कार्य में (ख) बागवानी में

(ग) भवन निर्माण में (घ) बर्तन निर्माण में

2. कपास की काली मृदा में किसका आधिक्य है–

(क) इलाइट (ख) केओलिनाइट

(ग) क्लोराइट (घ) चूना

3. दक्षिण भारत में ज्वालामुखी से सम्बन्धित है–

(क) मृदा (ख) वन

(ग) बस्ती प्रतिरूप (घ) स्थलाकृति

4. लैटेराइट मृदा में कौन–सी फसल सम्बन्धित है–

(क) गेहूँ (ख) चावल

(ग) बागवानी (घ) कपास

5. गुजरात में कौन–सी मृदा प्रमुख है–
(क) काली मृदा (ख) लैटेराइट मृदा
(ग) लाल मृदा (घ) मरुस्थलीय मृदा
6. उष्ण कटिबन्धीय सदाबहार वन पाये जाते हैं–
(क) अरावली पर्वत (ख) शिलांग पठार
(ग) शिवालिक श्रेणी (घ) प्रायद्वीपीय पठार
7. भारत में मैग्रोव वनस्पति का सर्वाधिक विस्तार है–
(क) गोवा (ख) पं0 बंगला (ग) आन्ध्र प्रदेश (घ) उड़ीसा

8. पश्चिमी घाट की महत्वपूर्ण वनस्पति–

(क) चन्दन (ख) देवदार (ग) चीड (घ) सागौन

उत्तरमाला–1–ग, 2–क, 3–क, 4–ग, 5–क, 6–ख, 7–ख, 8–घ

4.10– महत्वपूर्ण पुस्तकें/संदर्भ

1. प्रो0 जगदीश सिंह– भारत : भौगालिक आधार एवं आयामा, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर।
2. प्रो0 आर0सी0 तिवारी भारत का भूगोल, प्रवालिका प्रकाशन।
3. डॉ0 बी0सी0 जाट, भारत का भूगोल, पंचशील प्रकाशन, जयपुर
4. सिंह, आर0एल0–इण्डिया : रीजनल जियोग्राफी एन0जी0एस0आई0, गोरखपुर।
5. Nag, P. and Sengupta, 8- Geography of India, Gorakhpur, Concept Publicshing company, New Delhi.

4.11 अभ्यास प्रश्न

1. काली एवं लाल मृदा का वर्णन कीजिए।
2. पर्वतीय एवं दलदली मृदा का वर्णन कीजिए।
3. भारततीय मृदा का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
4. भारतीय वनस्पति का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
5. अल्पाइन एवं पर्वतीयय वनस्पति का वर्णन कीजिए।

MAGO-102 भारत का भूगोल

इकाई–5 सिंचाई, बहुउद्देशीय परियोजना, जलागम क्षेत्र विकास

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना

5.2 उद्देश्य

5.3 सिंचाई

5.4 सिंचाई के स्रोत

5.5 बहुउद्देशीय परियोजना

5.6 जलागम क्षेत्र विकास

5.7 सारांश

5.8 शब्द सूची

5.9 परीक्षोपयोगी प्रश्न

5.10 महत्वपूर्ण पुस्तके/संदर्भ

5.11 अभ्यास प्रश्न

प्रस्तावना–

भारत भूगोल के इस इकाई के अन्तर्गत आप सिंचाई की क्यों आवश्यकता होती है, सिंचाई का कौन–कौन प्रमुख साधन हैं, भारत में कौन सिंचाई साधन किस क्षेत्र में अधिक उपयोगी होंगे, नलकूपों की वृद्धि के कारण, कौन सिंचाई का सस्ता एवं टिकाऊ साधन, बहुउद्देशीय परियोजना के विकास का कारण, बहुउद्देशीय परियोजना के कार्य, देश के विभिन्न बहुउद्देशीय परियोजनाओं परिचय, जलागम क्या है तथा इसका विकास का अध्ययन करेंगे। सिंचाई साधनों में नहर, नलकूप तथा तालाब का अध्ययन करेंगे, बहुउद्देशीय परियोजनाओं की स्थापना के कारणों तथा जलागम क्षेत्र विकास को समझ सकेंगे।

सिंचाई साधनों एवं बहुउद्देशीय परियोजना का भारत में महत्वपूर्ण स्थान है क्यांकि भारत एक कृषि प्रधान देश है जहाँ कृषि के लिए विद्युत तथा सिंचाई की आवश्यकता होती है। इसके अभाव में कृषि कार्य नामुमकिन है।

5.2 उद्देश्य–

भारत भूगोल के इस इकाई का अध्ययन करने उपरान्त आप–

- भारत के प्रमुख सिंचाई स्रोतों को समझ सकेंगे।
- सिंचाई साधनों से उत्पन्न समस्या को समझ सकेंगे।
- बहुउद्देशीय परियोजना के निर्माण के कारणों को समझ सकेंगे।
- बहुउद्देशीय परियोजना के कार्यों को समझ सकेंगे।
- जलागम क्षेत्र विकास को समझ सकेंगे।

5.3 सिंचाई–

पौधों को कृत्रिम विधि के माध्यम से जल उपलब्ध करवाना ही सिंचाई कहलाता है। कृत्रिम सिंचाई की आवश्यकता ऐसे प्रदेश में होती है जहां का वातावरण उष्ण और अनियमित वर्षा वाला हो, भारत इसमें से एक है। जहां पौधों को सिंचाई की आवश्यकता होती है। भारत में प्राचीन समय से कुओं, तालाबों और नहरों के माध्यम से सिंचाई करते चला आ रहा है। सिंचाई के माध्यम से वर्ष में तीन फसलें उगाई जा सकती हैं। भारत में सिंचाई की आवश्यकता उष्ण जलवायु, वर्षा की असमानता, वर्षा की अनिश्चितता, वर्षा की अनियमितता, मौसम का मौसमीपन, फसलों की बहुलता, फसलों की विशिष्टता, मृदा की प्रकृति एवं व्यापारिक फसलों के कारण है।

5.4 सिंचाई के स्रोत–

भौमिकीय संरचना, उच्चावच, सतही एंव भौमजल स्तर, मृदा और जलवायु की दशाओं के कारण भारत में सिंचाई के माध्यम हैं जिसमें कुआं, नलकूप, नहर एवं तालाब आदि शामिल है। भारत में सर्वाधिक सिंचाई कुआंव नलकूप के माध्यम से किया जाता है। इसके बाद नहरों के माध्यम से किया जाता है। भारत के मैदानी भाग में नलकूप, कुआँ, तथा नहरों के माध्यम से सिंचाई की जाती है जबकि दक्कन के क्षेत्रों में कठोर मृदा एवं भूजल स्तर का काफी नीचे पाये जाने के कारण तालाबों के माध्यम से सिंचाई की जाती है। वर्तमान समय में निजी पम्पसेटों के माध्यम से सिंचाई की जाती है। वर्तमान समय में निजी पम्पसेटों की संख्या काफी बढ़ गयी है जिससे लोग सिंचाई के साथ अन्य कार्य हेतु भी उपयोग करते हैं। अतः वर्तमान समय में नलकूपों के माध्यम से भारत में बड़े पैमाने पर सिंचाई की जाती है। भारत में निम्न सिंचाई के साधन है–

1. तालाब–

भारत के दक्षिणी प्रायद्वीप के पूर्वी भाग में तालाबों द्वारा सिंचाई बड़े पैमाने पर की जाती है। यहाँ का धरातल कठोर होने के साथ ऊबड़–खाबड़ भी है जिससे वर्षा काल के जल को एकत्र करके तालाब बना लिया जाता है। लेकिन कुछ भागों में गड्ढा बनाकर तालाब का रूप दिया जाता है जिसमें उड़ीसा, पश्चिम बंगाल एवं बिहार शामिल है जिसका उपयोग सिंचाई के अलावा पेयजल के रूप एवं मत्स्य पालन के रूप में करते हैं। भारत में तमिलनाडु राज्य तालाब के माध्यम से सबसे ज्यादा सिंचाई करता है। भारतीय सांख्यिकी वार्षिक पत्रिका वर्ष 2018 के अनुसार तमिलनाडु में तालाबों द्वारा 17.56 प्रतिशत भाग शुद्ध सिंचित है। इसके अलावा क्रमशः केरल, पं0 बंगाल, आन्ध्र प्रदेश, उड़ीसा का स्थान आता है।

तालाबों द्वारा सिंचाई तमिलनाडु में परम्परागत चला आ रहा है। यहां कुल लगभग 24 हजार तालाब पाये जाते हैं। तालाबों के माध्यम से तिरुचिरापल्ली, तिरुअन्नामलै, वेल्लौर, तिरुवल्लूर, कांचीपुरम, विल्लुरपरम्, रामनाथपुरम्, मदुरै, सलेम, तंजावूर और कोयम्बतूर जनपद लाभान्वित है। आन्ध्र प्रदेश का वारंगल एवं नेल्लौर जनपद भी तालाब सिंचाई के लिए महत्वपूर्ण है। भारत में ऐसे बहुत से तालाब हैं जो सिंचाई के लिए प्रसिद्ध है साथ–साथ पेयजल के रूप में भी योगदान देते हैं। जिसमें राजस्थान का जयसमन्द, राजसमन्द एवं बालसमन्द, आन्ध्र प्रदेश का निजामसागर तथा कर्नाटक का कृष्णराज सागर है। इसके अलावा भी देश में बहुत से छोटे तालाब पाये जाते हैं जिसमें सिंचाई एवं मत्स्य पालन का कार्य किया जाता है। हाल के वर्षों में निजी नलकूप एवं नहरों के प्रचलन के कारण नये तालाबों का निर्माण एवं पुराने तालाबों जीर्णोद्धार के लिए सरकारी योजनाएं चलाई जा रही हैं।

तालाबों के माध्यम से सिंचाई की कुछ मूलभूत समस्याएं भी है। तालाब निचला भूभाग होता है जिसमें रेत का जमाव हो जाता है तालाबों में वर्ष भर जल भरा नहीं होता है। शीत ऋतु एवं ग्रीष्म ऋतु में सूख जाते हैं, तालाब का अधिकांश जल जमीन द्वारा सोख लिया एवं वाष्पीकरण हो जाता है तालाब वाला क्षेत्र काफी उपजाऊ होता है जिस पर कृषि कार्य किया जा सकता है; तालाब से जल सिंचाई हेतु निकालना काफी खर्चीला होता है। तालाब भूजल स्तर का स्रोत, वर्षा जल का संग्राहक, पेयजल और जल क्रीड़ा आदि हेतु लोकप्रिय बनाया जाना परम आवश्यक है, इसके लिए सरकारों द्वारा विभिन्न प्रकार की योजनायें भी चलायी जा रहीं हैं।

2. नलकूप/कुआँ–

कुआं अधिकांशतः मानव द्वारा निर्मित धरातल में एक छिद्र है जिससेपेयजल एवं सिंचाई के लिए जल निकलता है। यह प्राचीन काल से ही लोकप्रिय एवं भरोसेमन्द है। भारतीय सांख्यिकीय वार्षिक बुक के अनुसार कुआं और नलकूप द्वारा 42 मिलियन हेक्टेयर शुद्ध कृषित क्षेत्र। कुआं व नलकूपों का विकास उन भागों में लोकप्रिय है जहां भूजल स्तर 15 मीटर से अधिक गहरा न हो। सबसे अधिक कुओं का विकास उत्तरी मैदानी भाग में विकसित हुआ है। उत्तर प्रदेश में कुओं एवं नलकूपों के माध्यम से 78 प्रतिशत शुद्ध सिंचित क्षेत्र की सिंचाई होती है। बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान, महाराष्ट्र, पंजाब, गुजरात तथा तमिलनाडु राज्यों में भी इन्हीं स्रोत से सिंचाई की जाती है।

वर्तमान समय में भारत में यह साधन काफी लोकप्रिय है। इसका प्रारम्भ गंगा के मैदानी भाग में बोरिंग के माध्यम से शुरू किया गया है। निजी नलकूप एक कृषक के लिए एक बड़ा उपयोगी कम खर्चीला, सुविधाजनक एवं भरोसेमंद साधन हैं। उत्तर प्रदेश में इनकी संख्या सर्वाधिक है इसके कुछ जनपद में नलकूपों की सख्या बहुत अधिक है। पंजाब एवं हरियाणा में भी इसकी संख्या काफी अधिक है जिससे यहां भूजल स्तर 90से 150 मीटर तक चला गया है।

इसके अतिरिक्त राजस्थान, बिहार के गंगा के मैदान, मध्य प्रदेश में नर्मदा घाटी व गुजरात में नलकूपों द्वारा सिंचाई होगी। हरित क्रान्ति का सफल होने में इसका महत्वपूर्ण स्थान था।

नलकूपों व कुंओं के माध्यम से सिंचाई में कई कठिनाइयाँ है। पहाड़ी व पर्वतीय भाग में कुआं खोदना कठिन काम है। भू–जलस्तर देशभर में एक समान नहीं पाया जाता है। भू–जल स्तर का अधिक दोहन से भूजल स्तर का काफी नीचे गिर जाना, जिससे कुआं सूख जाता है। किसी योजना के भूजलस्तर का लगातार दोहन से आने वाले दिनों के लिए संकट उत्पन्न हो रहा है। नलकूप चलाने हेतु सस्ते, बिजल व डीजल नहीं मिल पा रहा है आदि समस्याएं पैदा हो रही हैं।

3.नहर–

नहर भारत में सिंचाई साधन के रूप में दूसरा महत्वपूर्ण स्थान रखता है जिसमें 24 प्रतिशत शुद्ध सिंचित क्षेत्र लाभान्वित होता है। भारत विश्व में सबसे बड़ा नहर तन्त्र व्यवस्था रखता है। जिसकी सम्पूर्ण लम्बाई एक लाख से अधिक है। नहरे दो तरह की होती है। **प्रथम** वे नहर जो बांध या वैराज से निकाली जाती है। देश की अधिकांश गहरे इसी प्रकार की हैं। **द्वितीय** वे नहर जो बिना

किसी बांध या बैराज से निकाली जाती है। देशकी अधिकांश नहरें इसी प्रकार की है। नहरों द्वारा उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, बिहार एवं राजस्थान में सिंचाई कार्य किया जाता है जो नित्यवाही नदी से निकलती है। देश में 60 प्रतिशत से अधिक नहरें पंजाब, मध्य प्रदेश, बिहार, उत्तर प्रदेश, आन्ध्र प्रदेश, हरियाणा तथा राजस्थान में पायी जाती है। इसके अतिरिक्त महाराष्ट्र, कर्नाटक, उड़ीसा, तमिलनाडु एवं छत्तीसगढ़ में 23 प्रतिशत से अधिक नहर हैं। देशकी कुछ नहरें इस प्रकार हैं–

1. उत्तर प्रदेश एवं उत्तराखण्ड की नहरें–

इसका अधिकांश भाग गंगा–घाघरा दोआब और बुन्देलखण्ड का पश्चिमी भाग है यहां 20 प्रतिशत भाग नहरों नदी द्वारा सींचा जाता है। इन नहरों से 70 लाख हे0 कृषित क्षेत्र सींचा जाता है। ऊपरी गंगा, निचली गंगा (लम्बाई 100 किमी0), पूर्वी यमुना नहर (लम्बाई 1440 किमी), आगरा नहर (लम्बाई 1600 किमी), शारदा नहर, रामगंगा नहर, केन नहर (कुल लम्बाई 640 किमी), माताटीला बांध की नहरें (लम्बाई–713 किमी0), रिहन्द परियोजना की नहरें, धसान नहर, मध्य गंगा नहर, (लम्बाई–115 किमी0) आदि प्रमुख नहरे हैं।

2. राजस्थान–

राजस्थान की जलवायु शुष्क और अर्द्ध–शुष्क है। यहां वर्षा बहुत कम होती है जिसके कारण नहरे यहां के लिए वरदान साबित होती है। नहर के माध्यम से रेतीली भूमि में कृषि की जा रही है। राज्य में सिंचाई के लिए निम्न नहरें– गंग नहर (सतलुज नदी से निर्माण) 1280 किमी लम्बी है। चम्बल परियोजना की नहरें–गंगी सागर एवं राणा सागर से नहर का निर्माण होता है। जवाई परियोजना की नहरें– (निर्माण जवाई नदी से) जो 120 किमी0 लम्बी है। ओट्टू पोषक नहर– घघ्घर नदी से निकलती है। गंगा नगर जनपद को सींचती है। हनुमानगढ़ नहर– भाखड़ा नहर समूह से सम्बन्धित है। इंदिरा गांधी नहर– इसका निर्माण हरिके वैराज के पास व्यास एवं सतलुज नदी के संगम से है। मुख्य नहर की कुल लम्बाई 649 किमी0 है। इसके अलावा पार्वती, गुढ़ा, मोरेल, कालीसिस एवं मेज नहरे हैं।

3. पंजाब एवं हरियाणा की नहरें–

पंजाब एवं हरियाणा की मृदा उपजाऊ तो हैं लेकिन वर्षा की कमी पायी जाती है। वर्षा की इस कमी को नहरे बना कर किया गया है। यहां की अधिकांश नहरे नित्यवाही, सिन्धु नदी तन्त्र से किया गया है। यहां नलकूपों की संख्या अधिक होने पर भी पंजाब में 32 प्रतिशत एवं हरियाणा में 45 प्रतिशत

शुद्ध सिंचित क्षेत्र नहरों द्वारा सींची जाती है। इस क्षेत्र की प्रमुख नहरों में ऊपरी बारी दोआब नहर–रावी नदी से निकाली गई है। इसकी कुल लम्बाई 4900 किमी है। पश्चिमी यमुना नहर–यमुना नदी से निकाली गई है। कुल लम्बाई 3229 किमी है। सरहिन्द नहर–उद्‌गम सतलुज नदी से कुल लम्बाई 6115 किमी0 हैं सरहिन्द पोषक नहर– 142 किमी0 लम्बी है। भांखड़ा–नांगल परियोजना की नहरे– देश की सबसे बड़ी नहर तंत्र है। मुख्य नहर की लम्बाई–174 किमी है। बिस्त दोआब नहर– यह 154 किमी लम्बी है। गुड़गांव नहर– यमुदा नदी से निकाली गई है। पूर्वी ग्रे नहर– यह सतलुज नदी से निकाली गई है। व्यास परियोजना की नहरें– यह व्यास नदी से निकाली गई है।

4. बिहार की नहरें–

यहां नहरों की कुल सिंचाई में 26 प्रतिशत का योगदान है। यहां की प्रमुख नहरों में सोन नहर– सोन नदी से निकाली गई है। कोसी परियोजना की नहरे– कोसी नदी से निकाली गई है। गंडक परियोजना की नहरें, त्रिवेणी नहर, तेनूघाट परियोजना की नहर आदि है।

5. पश्चिम बंगाल की नहरें–

इस राज्य के दक्षिण–पश्चिम भाग में नहरों की जरूरत पड़ती है क्योंकि यह एक आर्द्र राज्य है। राज्य का 11 प्रतिशत क्षेत्र नहरों द्वारा सींचा जाता है। यहां की प्रमुख नहरें इस प्रकार हैं– दामोदर परियोजना नहरे–दामोदर नदी घाटी के अधीन बनाया गया है। मयूराक्षी परियोजना कीनहरे– मयूराक्षी नदी से निकाली गई है। कांगसावती परियोजनाकी नहरे, मेदिनीपुर नहर– यह 520 किमी लम्बी नहर है। कोसी नदी से निकाली गई है। एडन नहर, फरक्का परियोजना की नहरे।

6.उड़ीसा की नहरे–

यहां की प्रमुख नहरें इस प्रकार की है– हीराकुण्ड परियोजना की नहरे। यह महानदी पर बांध बनाकर निकाली गई है। इस परियोजना से लगभग 3 लाख हे0 भूमि की सिंचाई की जा रही हैं महानदी डेल्टा परियोजना की नहरें तालकण्डा नहर, सलान्दी नहर।

7. मध्य प्रदेश एवं छत्तीसगढ़ की नहरे–

इन राज्यों की प्रमुख नहरें इस प्रकार हैं– महानदी परियोजना की नहरें– महानदी के बांध से निकलती है, बेनगंगा नहर– 45 किमी0 लम्बी तथा बेनगंगा नदी से निकाली गई है, तन्दुला नहर, चम्बल परियोजना की नहरे, बरना

परियोजना की नहरे–नर्मदा के सहायक नदी बरना पर बांध बनाकर निकाली गई है, तवापरियोजना की नहरें– तवा नदी से निकाली गई है, हलाली परियोजना की नहरें, बारगी परियोजना की नहरे, मोला बांध की नहरे आदि हैं।

8. महाराष्ट्र की नहरें–

कुछ प्रमुख नहरों का विवरण निम्नवत है– मूठा नहर परियोजना– मूठा नदी पर बैराज बनाकर निकाली गई है, गोदावरी की नहरें– गोदावरी नदी से निकाली गई है, नीरा नहर, प्रवरा नदी की नहरें, भीमा परियोजना की नहरें– कृष्णा नदी पर बांध बनाकर निकाली गई है, जायकवाड़ी परियोजना की नहरें– गोदावरी पर बांध बनाकर, कुकाड़ी परियोजना की नहरें आदि प्रमुख नहरें हैं जो सिंचाई के काम में प्रयोग की जाती हैं।

9. गुजरात की नहरें–

वर्षा की कमी के कारण कृत्रिम सिंचाई साधनों की आवश्यकता होती है। जिसमें नहरें प्रमुख हैं। गुजरात की नहरें इस प्रकार हैं– उकाई परियोजना की नहरें–तापी नदी पर बने बैराज के पास से निकाली गयी हैं। काकड़ापारा परियोजना की नहरें–तापी नदी पर बने बांध से निकाली गई है। नर्मदा परियोजना की नहरें, माही परियोजना की नहरें, दान्तीवाड़ा परियोजना की नहरें, पानमवराज की नहरें, करजन वराज की नहरें, साबरमती परियोजना की नहरें, रूद्रमाता नहर तथा औखत नहर।

10. आन्ध्र प्रदेश की नहरें–

यहां पर अपर्याप्त वर्षा, समतल और उपजाऊ मैदान होने के कारण नहर सिंचाई की सम्भावना बढ़ जाती है। राज्य की नहरें निम्नलिखित है– गोदावरी डेल्टा की नहरें, कृष्णा डेल्टा की नहरें, नागार्जुन सागर परियोजना की नहरें, तुंगभद्रा परियोजना की नहरें, रामपद सागर की नहरें, कृष्णा–पेन्नार परियोजना की नहरे, निजाम सागर की नहरें, पेन्नारा नहर आदि है।

11. कर्नाटक की नहरें–

यहां नहरों द्वारा 35.52 प्रतिशत शुद्ध सिंचित क्षेत्र सींचा जाता है। यहां की प्रमुख नहरें निम्नवत हैं– घाट प्रभा परियोजना की नहरे, मालप्रभा परियोजना की नहरें, तुंगभद्रा नदियों पर बांध बनाकर निकाली गई है, भद्रा परियोजना की नहरें– भद्रा नदी पर बांध बनाकर निकाली गई है। ऊपरी कृष्ण परियोजना की नहरें– कृष्णा नदी पर बांध बनाकर निकाली गई है।

12. तमिलनाडु की नहरें–

तमिलनाडु का ग्रीष्म ऋतु अधिकांश रूप से शुष्क रहता है जिसके कारण नहरों की आवश्यकता होती है। यहां की प्रमुख नहरों का विवरण निम्नवत है। कावेरी डेल्टा की नहरें– राज्य की सबसे लम्बी नहर है जो 6400 किमी लम्बी है, मैटूर बांध की नहरें– कावेरी नदी से निकाली गई है, निचली भवानी परियोजना की नहरें भवानी नदी से निकाली गई है, पेरियार परियोजना की नहरें– पेरियार नदी पर बांध बनाकर निकाली गई है, कटलाई नहर, मणिमूथर परियोजना की नहरें तथा परम्बिकुलम–अवियार परियोजना की नहरें आदि हैं।

13. केरल की नहरें–

यहां की प्रमुख नहरें निम्नवत हैं– मलामपुजा परियोजना की नहरें, बलयार परियोजना की नहरें, मंगलम् परियोजना की नहरें तथा पेरियार नहर आदि हैं। केरल की इन नहरों से मालाबार के अधिकांश भागों में सिंचाई की जाती है।

5.5 बहुउद्देशीय परियोजनाएँ–

बहुउद्देशीय परियोजनाओं से तात्पर्य ऐसी योजना से है जिसका उद्देश्य किसी एक उद्देश्य या लक्ष्य को प्राप्त करना नहीं है वरन् बहुत से उद्देश्यों, जैसे–बिजली, सिंचाई, बाढ़ नियन्त्रण, जलमार्गों का विकास, औद्योगीकरण को बढ़ावा, शुद्ध पेयजल की व्यवस्था, मत्स्य पालन, पर्यटन, भू–अपरदन को रोकना, आदि की प्राप्ति करना है। भारत सरकार की बहुउद्देशीय परियोजना संयुक्त राज्य अमेरिका की टेनेसी घाटी योजना की अपार सफलता से प्रभावित होकर भारत ने अनेक नदी घाटी योजनाएं तैयार की है। भारत की प्रमुख परियोजनाएं निम्न प्रकार की हैं–

दामोदर घाटी परियोजना– दामोदर नदी झारखण्ड के छोटा नागपुर पठार से निकलकर प0 बंगाल में हुगली में गिर जाती है। वर्षा ऋतु में इसके ऊपरी घाटी में बाढ़ आती रहती है। इसी वजह से 1948 में दामोदर घाटी निगम की स्थापना की गई। इसका मुख्य उद्देश्य बिहार एवं प0 बंगाल के निवासियों का जीवन स्तर को ऊँचा करना तथा घाटीवर्ती भाग का विकास करना दामोदर नदी घाटी के अन्तर्गत 8 बांध एक अवरोधक बांध जल विद्युत उत्पादन केन्द्र तथा नहरों का निर्माण का लक्ष्य रखा गया था।

प्रथम चरण में तिलैया, मैथान, पंचेत और कोठार, दुर्गापुर के अवरोधक, बोकारो, चन्द्रपुरा और दुर्गापुर में तटीय गृहों का निर्माण तथा 1300 किमी0 लम्बी विद्युत तार लाइने खींचने का कार्य प्रस्तावित किया गया था। इनका संक्षिप्त

विवरण इस प्रकार है–

तिलैया बांध– यह बांध हजारीबाग जिले के बराकर नदी पर बनाया गया है। यह बांध 340 मीटर लम्बा तथा 37 मीटर ऊँचा है। बांध के निर्मित जलाशय में 305 लाख टन जल संग्रह किया जा सकता है।

कोनार बांध– कोनार नदी पर बनाया गया है। यह 885 मीटर लम्बा तथा 48 मीटर ऊँचा है। यह बांध मुख्य रूप से बोकारो विद्युत संयन्त्र को ठण्डा जल पहुंचाने के लिए है।

मैथान बांध– बराकर नदी पर इसका निर्माण किया गया है। 4357 मीटर लम्बा एवं 56 मीटर ऊँचा है। इस बांध का निर्माण बाढ़ नियन्त्रण हेतु किया गया है लेकिन विद्युत का भी निर्माण किया जाता है।

पंचेत पहाड़ी बांध– दामोदरनदी परबनाया गया है। यह 2.5 किमी लम्बा एवं 45 मीटर ऊँचा है। इसका निर्माण पुरुलिया (प0 बंगाल) तथा धनबाद (झारखण्ड) की सीमा परकिया गया है। इस पर 40 हजार किलोवाट क्षमता वाला जल–विद्युत की स्थापना किया गया है। वर्ष 1959 में यह बनकर तैयार हो गया था।

दुर्गापुर अवरोधक बांध– दामोदर नदी पर बना है। 672 मीटर लम्बा तथा 12 मीटर ऊँचा है। इस बांध के दोनों तरफ नहर निकाली गई है। इस बांध से निकाली गयी नहरों को परिवहन के रूप में प्रयोग किया जाता है।

बोकारो तापीय विद्युत–पहले हजारीबाग (झारखण्ड) जिला के बोकारो नामक स्थान पर 150 मेगावाट का विद्युत गृह की स्थापना किया गया है। इसके बाद 75 मेगावाट विद्युत क्षमता की एक और इकाई का निर्माण किया गया।

चन्द्रपुरा तापीय विद्युत गृह–यह चन्द्रपुरा नामक स्थानजो हजारीबाग जिले में स्थित है। यहां तीन इकाईयां लगाई गई हैं। जो 104–104 मेगावाट क्षमता वाली है।

दुर्गापुर तापीय विद्युत गृह– यहां 150 मेगावाट विद्युत संयन्त्र की स्थापना की गई है। यह तापीय विद्युत गृह वर्धमान (प0 बंगाल) जिला में स्थित है।

द्वितीय चरण–

इस चरण में निम्न बांध का निर्माण हुआ–

अघर बांध– दामोदर नदी पर बना है। इसके निकट एक विद्युत गृह है।

बर्मो बांध– दामोदर नदी पर 28 हजार किलोवाट जल विद्युत गृह तथा एक लाख किलोवाट तापीय विद्युत स्थापित करने का प्रावधान है।

बाल पहाड़ी बांध– बराकर नदी पर बना है। इस बांध पर 20 हजार मेगावाट का एक विद्युत गृह का निर्माण किया गया है।

बोकारो–बोकारो नदी पर बना है।

भाखड़ा नांगल परियोजना–

यह भारत की सबसे बड़ी बहुउद्देशीय परियोजना है। पंजाब, हरियाणा तथा राजस्थान की संयुक्त परियोजना है। इसका मुख्य उद्देश्य राजस्थान में सिंचाई के लिए जल पहुंचाना, जल विद्युत उत्पादन करना आदि है। इस योजना के लिए निम्नलिखित कार्य किए गए हैं–

भाखड़ा बांध– यह 235 मीटर ऊँचा तथा सीधा बांध है। इस पर गोविन्द सागर है जो 85 किमी0 लम्बा तथा 8 किमी0 चौड़ा है। यह बांध संसार का सबसे सीधा बांध है।

नांगल बांध– यह 29 मीटर ऊँचा, 315 मीटर लम्बा तथा 121 मीटर चौड़ा है। यह भाखड़ा बाधं के जल को संतुलित करता है। इसका निर्माण कंकरीट के माध्यम से किया गया है।

नांगल जल विद्युत नहर– यह बायें भाग से निकाली गई है जो पक्की हैं। यह नहर नदी के समानान्तर प्रवाहित होती है।

विद्युत शक्ति गृह– नांगल विद्युत नहर पर तीन जल विद्युत शक्ति गृह बनाया गया है।

भाखड़ा नहर प्रणाली– यहां से विद्युत नहर निकाली गई है, जिनका मुख्य उद्देश्य पंजाब, हरियाणा एवं राजस्थान के क्षेत्रों में सिंचाई व्यवस्था करना। इसमें निम्नलिखित प्रमुख नहरें हैं–

1. **भाखड़ा नहर–** 1954 में बनी 1173 किमी लम्बी है। पंजाब के भटिण्डा एवं फिरोजपुर तथा राजस्थान के बीकानेर जिला में सिंचाई कार्य किया जाता हैं। यह नहर प्लास्टरयुक्त एवं बिना प्लास्टर की है।
2. **बिस्त दोआब नहर–**इसके माध्यम से पंजाब के जालन्धर एवं होशियारपुर एवं पूर्वी पंजाब में सिंचाई की जाती है। इस नहर की कुल लम्बाई 3360 किमी0 है।

3. **सरहिन्द नहर–** इस नहर के माध्यम से पूर्वी पंजाब में सिंचाई कार्य किया जाता है।

4. **नरवान शाख नहर–** यह 104 किमी लम्बी तथा प्लास्टर युक्त है। इसका मुख्य उद्देश्य सिरसा शाखा को जल प्रदान करना तथा हरियाणा में सिंचाई सुविधा प्रदान करना। इसके अलावा विद्युत गृह का भी निर्माण किया गया है।

चम्बल परियोजना–

चम्बल नदी मध्य प्रदेश में महू स्थान के निकट विन्ध्य श्रेणी से निकलती है। चम्बल नदी के क्षेत्र के विकास हेतु एवं विभिन्न उद्देश्य की पूर्ति हेतु 1953 में चम्बल परियोजना की शुरुआत हुई जो 1970 में पूर्ण हो चुकी है। यह मध्य प्रदेश तथा राजस्थान राज्य का सम्मिलित योजना है। इसका विकास तीन चरणों में हुआ है।

प्रथम चरण– इसमें गांधी सागर बांध, कोटा अवरोधक बांध, विद्युत गृह लाइने व कोटा सिंचाई बांध की नहरों का निर्माण किया गया।

द्वितीय चरण–इसमें रावत भाटा के पास राणा सागर बांध, विद्युत केन्द्र (चार इकाई) तथा राजस्थान में सिंचाई हेतु नहरों का का निर्माण किया गया है।

तृतीय चरण–इसमें जवाहर सागर पिक–अप बांध तथा तीन विद्युत उत्पादक इकाईयों का निर्माण कार्य शामिल है।

रिहन्द परियोजना–

यह उत्तर प्रदेश की अब तक की सबसे बड़ी परियोजना है, जो पपरी (उत्तराखण्ड) में बनाया गया है। रिहन्द नदी सोन की सहायक है। वर्षा ऋतु में इस नदी में भयंकर बाढ़ आती है। ग्रीष्म ऋतु में सूखा का भी चपेट रहता है। यह परियोजना चहुँमुखी विकास हेतु सन् 1952 में निर्माण कार्य शुरू हुआ जो 1966 में पूर्ण चुकी इस परियोजना का प्रारूप निम्नलिखित है–

रिहन्द बांध–

यह बांध रिहन्द नदी के आर–पार बनाया गया है। बांध से निर्मित जलाशय का क्षेत्रफल 466 वर्ग किमी0 है। यह जलाशय गोविन्द बल्लभ पंत सागर के नाम से जाना जाता है।

ओबरा बांध–

रिहन्दनदी पर बनायह बांध संतुलन का कार्य करता है। विद्युत गृहरिहन्द बांध के दायें 3 लाख किलोवाट विद्युत क्षमता वाला एक शक्ति गृह बनाया गया है जिसमें 6 इकाईयां स्थापित की गई हैं। प्रत्येक इकाई की उत्पादन क्षमता 50 हजार है।

तुंगभद्रा परियोजना–

यह कर्नाटक तथा आन्ध्र प्रदेश की संयुक्त परियोजना हैं जो तुंगभद्रा नदी पर निर्मित किया गया है। यह नदी असंतुलित जलप्रवाह, वर्षा ऋतु में नदी में बाढ़, अन्य ऋतु में सूखा आदि समस्या से पीड़ित रहता है। इस समस्या के निराकरण हेतु इस परियोजना का निर्माण किया गया है। इस परियोजना के तीन निम्नलिखित कार्य हैं–

तुंगभद्रा बांध– यह कर्नाटक के बेल्लारी जनपद में बना है जो तुंगभद्रा नदी पर है। इसका निर्माण ग्रेनाइट पत्थर तथा सीमेन्ट से किया गया है।

विद्युत गृह– दो विद्युत गृह का निर्माण किया गया है। पहला मुनीयबाद में 27 हजार किलोवाट, दूसरा– हास्पेट के पास 9 हजार किलोवाट तथा तीसरा भी 9000 किलोवाट क्षमता वाली चार इकाईयां बनायी गयी हैं।

नहरें– बांध के दोनों तरफ तीन नहर निकाली गई हैं एक नहर से कर्नाटक तथा आन्ध्र प्रदेश में 3.2 लाख हेक्टेयर भूमि की सिंचाई की जाती है। दूसरी से बेल्लारी एवं कुर्नूल में 60 लाख हेक्टेयर भूमि।

हीराकुण्ड परियोजना–

यह प्रायद्वीपीय भारत की एक महत्वपूर्ण नदी है। यह नदी बाढ़ के लिए प्रसिद्ध है। वर्षा ऋतु के अतिरिक्त माह में सूखा का प्रकोप। यहां का चहुंमुखी विकास के लिए इस परियोजना की शुरूआत की गई।

परियोजना का प्रारूप–

यह योजना दो चरणों में पूरा हुई है इसके माध्यम से निम्नलिखित निर्माण किया गया है–

हीराकुण्ड बांध–

महानदी पर उड़ीसा के हीराकुण्ड नामक स्थान पर यह बांध बनाया गया है। यह 4.8 किमी0 लम्बा तथा 61 मीटर ऊँचा हैं इस बांध से बना जलाशय का

क्षेत्रफल 750 किमी0 है तथा इसमें 8100 लाख घन मीटर जल एकत्र किया जा सकता है।

नहरें–इससे तीन नहरें निकाली गई हैं। मुख्य नहरों की लम्बाई 147 किमी0 है। बाध के बाये तरफ से सेसब एवं सम्भलपुर तथा दायी तरफ से बरगढ़ नहर निकाली गई है।

विद्युत शक्ति गृह– जिसकी क्षमता 123000 किलोवाट है इससे 4 शक्ति उत्पादन यंत्र लगाये गये हैं। 24000 किलोवाट की तीन इकाईयां लगाई गई हैं। हीराकुण्ड बांध पर भी दो यंत्र लगाये गये हैं। इस परियोजना में मत्स्य पालन, सिंचाई, विद्युत उत्पादन, बाढ़ नियंत्रण तथा परिवहन आदि कार्य के लिए किया जाता है।

कोसी परियोजना–

कोसी नदी भारत में नेपाल की सीमा से आकर बिहार में प्रवेश करती है। यह नदी अपने बाढ़ तथा मार्ग परिवर्तन के लिए सुप्रसिद्ध है इसी कारण इसे बिहार का शोक भी कहते हैं। यह नदी गंगा नदी में मिल जाती है। वर्षा माह में यह नदी बड़े पैमाने पर फैलकर चलती है। इस नदी जब प्रवाह को नियन्त्रित करने तथा जल को सिंचाई के लिए उपयोग हेतु कोसी परियोजना का निर्माण किया गया। इस परियोजना का निर्माण कार्य अग्रलिखित है–

हनुमान नगर अवरोधक बांध– यह कंकरीट से निर्मित है। यह 1.2 किमी0 लम्बा तथा 72 मीटर ऊँचा है।

बाढ़ तट बंध– कोसी नदी के प्रवाह को स्थिर करने हेतु हनुमान नगर अवरोधक बांध के दोनों तरफ तटबन्ध बनाये गये हैं ताकि तटबंध को नदी काट न सके।

नहरे–सिंचाई सुविधा के विस्तार हेतु निम्न नहर का निर्माण किया गया– पूर्वी कोसी नहर, पश्चिमी कोसी नहर तथा राजपुर नहर आदि हैं। इन नहरों के माध्यम से नदी जल का नियंत्रण किया जाता है साथ–साथ सिंचाई सुविधा का विस्तार भी किया गया है।

विद्युत शक्ति गृह– कोसी नदी पर 6 करोड़ रूपये के लागत से 20 मेगावाट का एक जल विद्युत गृह निर्माण किया गया है। इस योजना से उत्तरी बिहार के बाढ़ तथा सूखा पर नियन्त्रण, मृदा कटाव एवं मलेरिया प्रकोप को रोका जा सकेगा। इससे 8 लाख हे0 भूमि को सिंचाई की सुविधा तथा 20 लाख किलोवाट विद्युत शक्ति उत्पादित की जा सकती है।

नागार्जुन सागर परियोजना–

कृष्णा नदी क्रियान्वित है। इस नदी से निचले क्षेत्रों में बाढ़ तथा सूखा का प्रकोप बना रहता है। इस योजना की शुरूआत विद्युत उत्पादन, बाढ़, सूखा, सिंचाई, पर्यटन तथा मछली पलन के उद्देश्य से किया गया है। इस परियोजना के निम्नलिखित मछली पालन के उद्देश्य से किया गया है। इस परियेाजना के निम्नवत भाग हैं–

नागार्जुन बांध–

आन्ध्र प्रेदश के कोण्डाग्राम में बनाया गया है। इसकी लम्बाई 1350 मीटर तथा ऊँची 92 मीटर है। बांध से निर्मित जलाशय में 1156 करोड़ घन मीटर जल धारण करने की क्षमता है।

विद्युत गृह–

बांध के पास ही निर्माण किया गया है। यहां दो इकाइयां बनाई गई हैं। जो 50 मेगावाट क्षमता की है।

नहरे– बांध के दोनों तरफ से नहर निकाली गई है। बाएं किनारे से 170 किमी0 नहर निकाली गई है जो 3 लाख हे0 भूमि की सिंचाई करेगा। बांध के दायें भाग से जवाहर नहर से 1500 घन मीटर जल प्रति सेकेण्ड की गति से प्रवाहित होती है। इस परियोजना से बाढ़ पर नियन्त्रण पाया गया है तथा सिंचाई व्यवस्था में सुधार आया है। बांध के बायें भाग से लाल बहादुर शास्त्री नहर निकाली गयी है।

नर्मदा घाटी विकास योजनाएं–

यह नदी अमरकंटक से निकलकर मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र एवं गुजरात से बहती है। नर्मदा नदी तथा उसकी सहायक नदी के जल के समुचित उपयोग हेतु इस परियोजना का निर्माण किया गया है। इस योजना का काम दो चरणों में पूरा हुआ है–

वर्गी डायवर्शन परियोजना– इस योजना की रूपरेखा योजना आयोग द्वारा 1984 में किया गया था। इससे नहर निकालकर आस–पास क्षेत्रों को सिंचाई सुविधा प्रदान करना है। इससे रीवां तथा सतना में सिंचाई की जा सकेगी। यह नर्मदा नदी के दायें तट पर स्थित है।

नर्मदा सागर परियोजना– 1984 में प्रस्तावित। इससे 1.40 लाख हे0 सिंचाई होगी तथा 1000 मेगावाट विद्युत उत्पादन में वृद्धि होगी।

ओंकारेश्वर परियोजना–इस पर पूर्वी निमाड़ जिले में एक बांध बनाया गया, बांध के दोनों तरफ से नहर निकालकर 144000 हे0 भूमि की सिंचाई की जा सकती है। 520 मेगावाट का विद्युत गृह स्थापित किया गया है।

महेश्वर परियोजना– मध्य प्रदेश में नर्मदा नदी पर प्रस्तावित अन्तिम परियोजना है जिससे केवल विद्युत उत्पादन किया जायेगा। इस योजना में खरगोन जिले के मण्डलेश्वर गांव पास इसी नदी पर एक बांध बनाया जा रहा है।

मान योजना– मान नदी पर 633 मीटर लम्बा है। इस बांध से दोनों तरफ नहर निकाली गई है।

जोबट योजना– हथली नदी पर बनाना प्रस्तावित है।

व्यास परियोजना– हरियाणा, राजस्थान तथा पंजाब की संयुक्त परियोजना है जो दो चरणों में बनकर तैयार होगी–

प्रथम चरण–

भांखड़ा बांध के ऊपर के क्षेत्र में 61 मीटर का ऊँचा बांध व्यास नदी पर बनाया जायेगा। 660 मेगावाट का एक विद्युत गृह भी बनाया जायेगा। एकत्रित जल से पंजाब एवं हरियाणा में सिंचाई की जायेगी।

द्वितीय चरण–

व्यास नदी पर दूसरा बांध बनाया जायेगा। इससे राजस्थान, पंजाब तथा हरियाणा में सिंचाई हो सकेगी।

बगलिहार परियोजना– चिनाब नदी पर जम्मू कश्मीर स्थापित है। इसका 450 मेगावाट विद्युत उत्पादन की क्षमता है। इस परियोजना पर पाकिस्तान अपनी आपत्ति विश्व बैंक के समक्ष दर्ज की थी, विश्व बैंक ने एक जांच कमेटी भेजी थी जिसने भारत को अनुमति प्रदान की थी।

टिहरी बांध परियोजना– यह परियोजना प्रथम चरण में 1000 मेगावाट विद्युत उत्पादन के 2006 में लोकार्पण किया। इसमें कुल चार तटबाइन 250–250 मेगावाट की लगी है। इसके अलावा 400 मेगावाट की कोटेश्वर जलविद्युत परियोजना तथा 1000 मेगावाट की टिहरी पम्प, स्टोरेज प्लांट परियोजना है।

5.6 जलागम क्षेत्र का विकास–

मृदा कटाव वाले भागों में ऊपरी क्षेत्र में वनस्पति आवरण में वृद्धि करके

जल संरक्षण के साथ कृषि कृषि हेतु समोच्च जुताई, पट्टीदार फसलें तथा भूमि को सदैव आवरण वनस्पति से ढंके रहना आवश्यक है। पंजाब शिवालिक में सूखेमाजरी, मध्य प्रदेश में झबुआ, महाराष्ट्र में रालेगांव, सिद्धी तथा राजस्थान में अरवारी जलागम क्षेत्र के विकास एवं प्रबन्धन के प्रसिद्ध क्षेत्र हैं। यहां ऊपरी भाग में वृक्षारोपण करके तथा वृक्षों के आस–पास गड्ढा बनाकर जल को भूमिगत होने के लिए प्रेरित करते हैं। भूमिगत जल नीचे बने जलाशय में एकत्र हो जाते हैं जो सिंचाई के काम आते हैं। इस प्रकार मृदा अपरदन रोकने के साथ–साथ कृषि उत्पादकता में भी वृद्धि होती है।

जलागम क्षेत्र का विकास हेतु सामुदायिक सहभागिता एवं सहयोग अनिवार्य है। सर्वप्रथम इन क्षेत्रों में खुला पशुचारण पर रोक लगा दिया जाना चाहिए। तीव्र ढाल वाले भागों में वृक्षारोपण किया जाना चाहिए, वृक्ष के आस–पास गड्ढा बनाया जाये, नालों में जगह–जगह छोटे–छोटे बांध बनाकर सतह जल प्रवाह को रोका जाना चाहिए जिससे लघु जलाशयों का निर्माण भी हो सके। हल की जुताई करके पट्टीनुमा अधिक एवं कम सघनता में उगने वाली फसल लगाई जाये ताकि अपरदित मृदा घास में फंसकर रूक जाये, फसलों का इसी भांति से किया जाता है कि वह धान तथा गन्ना जैसी प्रचुर जल शोषक न हो। इस प्रकार अपरदन प्रवण मृदा स्थित हो जाती है। शुष्क कृषि पद्धति से उगाई गयी फसलों की उत्पादकता में वृद्धि होती है। इस प्रकार 500 से 5000 हेक्टेयर पर विस्तृत अपरदन प्रवण क्षेत्र में जलागम विकास से उत्पादन में वृद्धि राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय अभिकारणों द्वारा दिया जा रहा है।

मृदा एवं जल संरक्षण का उद्देश्य–

मृदा एवं जलसंरक्षण उपायों के निम्नलिखित उद्देश्य हैं–

जल एवं मृदा संरक्षण के लिए निम्न उद्देश्य इस प्रकार हैं–

1. भूमि की उत्पादकता में सुधार करके स्थायी रूप से लोगों की आवश्यकताओं को पूरा किया जाना है।

2. भूमि उपयोग को भूमि क्षमता के अनुसार बढ़ावा।

3. वर्षा के जल संरक्षण तथा भूमि क्षरण की रोकथाम।

4. नमी के क्षेत्र एवं भूमि की क्षमता में वृद्धि।

जल निकासी प्रबन्ध–

1. बड़े पत्थर से जल का संरक्षण कर गड्ढा का विकास करना–जल प्रवाह के

छोटे एवं पनधाराओं के गड्ढ़ों को स्थायी पत्थर के माध्यम से तालाबों एवं नालों को बांधना।

2. बड़े–बड़े पत्थरों को बांधना– तीव्र ढलान पर स्थानीय रूप से उपलब्ध पत्थरों और तारजाली की मदद से बांधों का निर्माण।

3. जल का संचलयन– वर्षा जल का संचयन करने हेतु नालियों के साथ–साथ खोदे गये गड्ढ़े की श्रृंखला।

4. नाली नियंत्रण के उपाय– पेड़–पौधों को लगाकर नाली तक संरक्षण।

5. रिसते तालाबा– रिसाव हेतु तैयार किये गये तालाबों का निर्माण।

6. बनाये गये कुएं– सिंचाई व्यवस्था एवं पीने योग्य जल को उपलबध कराने के लिए वनस्पतियों की वृद्धि तथा स्वयं समतलीय द्वारा।

जल संरक्षण सम्बन्धी सभी उपाय लघु जल निकासी इकाईयों में परियोजना के आधार पर पैकेज के रूप में प्रारम्भ किये जाते हैं। ऐसी लघु जल इकाईयों को सूक्ष्म जलागम क्षेत्र कहा जाता है। इसका क्षेत्रफल 500 से 5000 हे0 तक होता है। वनस्पति के माध्यम से स्थानीय स्तर पर नमी संरक्षण को बढ़ावा देने को अधिक प्राथमिकता दी जानी चाहिए। चारा, ईंधन, इमारती लकड़ी और फलों के वृक्षों को उगाने के लिए विशेष उपाय किये जाने चाहिए। इस प्रकार का उपचार ऊँचे स्थान पर से किया जाना चाहिए तथा धीरे–धीरे नीचे बनाना चाहिए जिससे कम समय में पूरे सूक्ष्म जल विभाजक की कार्यवाही पूरी हो सके।

5.7 सारांश–

आपने इस इकाई में सिंचाई, सिंचाई के स्रोत, बहुउद्देशीय परियोजना तथा जलागम क्षेत्र का विकास का अध्ययन किया है। अब आप समझ गए होंगे कि सिंचाई की आवश्यकता क्यों है, सिंचाई के विभिन्न स्रोत– नलकूप, तालाब एवं नहर विभिन्न बहुउद्देशीय परियोजनाओं, जलागम क्या है? तथा जलागम क्षेत्र का विकास। नलकूप सिंचाई का विस्तार क्यों अधिक हो रहा, नहर सिंचाई का विकास, नहर सिंचाई में समस्यायें, नहर निर्माण के आदर्श दशा, बहुउद्देशीय परियोजना का विकास कारण, लाभ, हानि, जलागम तथा जलागम का विकास कैसे किया जा सकता है।

5.8 शब्द सूची–

सिन्धु जल सन्धि	Indus Water Treaty	भ्रंश घाटी	Rift Valley
जल लग्नता	Water logging	जल प्रदूषण	Water Pollution
जल सम्भाव्यता	Water Potential	जल परिवहन	Water Transport
जलागम	Reservair	सिंचाई	Irrigation,
तालाब	Pond	नहर	Canal
नलकूप	Tubewell.		
बहुउद्देशीय परियोजन	Multipurpose project		

5.9 परीक्षापयोगी प्रश्न–

1. गंगा के मैंदान में सिंचाई के प्रमुख स्रोत–

(क) नहर (ख) तालाब (ग) नलकूप (घ) तालाब–नहर

2. तमिलनाडु में सबसे ज्यादा सिंचाई की जाती है–

(क) नलकूप (ख) नहर (ग) तालाब (घ) कोई नहीं

3.हीराकुण्ड परियोजना किस नदी पर बना है–

(क) महानदी (ख) दामोदर (ग) कावेरी (घ) सतलज

4. इन्दिरा गांधी नहर किसके लिए वरदान है–

(क) पंजाब (ख) हरियाणा–राजस्थान

(ग) राजस्थान (घ)राजस्थान–पंजाब

5. तुंगभद्रा बांध बना है–

(क) केरल (ख) तमिलनाडु (ग) कर्नाटक (घ) उड़ीसा

उत्तरमाला–

1–ग, 2–ग, 3–क, 4–ग, 5–ग

5.10 महत्वपूर्ण पुस्तकें/संदर्भ

1. प्रो0 जगदीश सिंह– भारत : भौगालिक आधार एवं आयामा, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर।
2. प्रो0 आर0सी0 तिवारी भारत का भूगोल, प्रवालिका प्रकाशन।
3. डॉ0 बी0सी0 जाट, भारत का भूगोल, पंचशील प्रकाशन, जयपुर
4. सिंह, आर0एल0– इण्डिया : रीजनल जियोग्राफी एन0जी0एस0आई0, गोरखपुर।
5. Nag, jP. and Sengupta, 8- Geography of India, Gorakhpur, Concept Publicshing company, New Delhi.

5.11 अभ्यास प्रश्न–

1. भारत की प्रमुख सिंचाई साधनों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
2. भातर की नहर सिंचाई साधनों का विशद् वर्णन कीजिए।
3. भारत में नलकूप सिंचाई साधनों का वृद्धि के कारणों का वर्णन कीजिए।
4. नागार्जुन सागर परियोजना तथा व्यास परियोजना का वर्णन कीजिए।
5. हीराकुण्ड परियोजना तथा कोसी परियोजना का वर्णन कीजिए।
6. रिहन्द परियोजना तथा चम्बल परियोजना का वर्णन कीजिए।
7. जलागम क्या है? इसके विकास के लिए योजना बताइए।

इकाई–6 कृषि एवं कृषि प्रदेश, कृषि जलवायु प्रदेश

इकाई की रूपरेखा

6.1 प्रस्तावना
6.2 उद्देश्य
6.3 भूमि उपयोग
6.4 कृषि के प्रकार
6.5 कृषि के निर्धारक
6.6 भारतीय कृषि की विशेषताए
6.7 कृषि समस्याये
6.8 कृषि ऋण
6.9 भारतीय कृषि की विकास प्रवृत्ति।
6.10 कृषि उत्पादकता
6.11 कृषि प्रदेश
6.12 कृषि जलवायुविक प्रदेश
6.13 सारांश
6.14 शब्दसूची
6.15 स्व मुल्यांकन प्रश्न
6.16 सन्दर्भ व उपयोगी पुस्तके
6.17 अभ्यास प्रश्न

6.1 प्रस्तावाना

इस इकाई में कृषि, कृषि प्रदेश एवं, कृषि जलवायु प्रदेश की विस्तृत चर्चा की गयी हैं। कृषि भारत के लोगों का मुख्य व्यवसाय हैं देश की कार्य में लगी जनसख्या का दो–तिहाई भाग अपनी आजीविका कृषि से प्राप्त करता हैं। कृषि भारत के आर्थिक ढाँचे का आधार हैं।कृषि में फसल उत्पादन के अलावा पशुपालन, बागवानी, मत्स्य पालन, रेशम उत्पादन आदि सभी क्रियाओं को सम्मलित करते हैं जो सीधे तौर पर भूमि से जुड़ी हुयी हैं।इस इकाई के अन्तर्गत आप भारतीय कृषि के प्रादेशिकरण अध्ययन, विभिन्न आधारों के माध्यम से करेंगे। इसके अन्तर्गत हम महत्त्वपूर्ण विद्वानों के कृषि प्रदेशों के साथ–साथ कृषि जलवायु प्रदेश का भी अध्ययन विस्तृत रूप से करेंगे।

6.2 उद्देश्य

भारत के भूगोल के अन्तर्गत आने वाले इस ईकाई को पड़ने के बाद आप–

- भारतीय कृषि की प्रमुख विशेषताओं को समझ सकेगे,
- भारत में कृषि के विकास की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे,
- भूमि उपयोग तथा इससे सम्बन्धित अन्य पहलुओं का आशय समझ सकेंगे,

- कृषि के प्रकारों के बारे में जान संकेंगे,
- कृषि के क्षेत्र में हो रही नई प्रौद्योगिकी के विकास के बारे में जान सकेंगे,
- कृषि को विभिन्न प्रदेशों में बाटकर प्रदेश की समानता, विषमता व सूक्ष्म बारीकिया समझ सकेगें,
- कृषि का पर्यावरण के साथ संबंध स्थापित कर सकेंगें,

6.3 भूमि उपयोग

भारत में भूमि उपयोग प्रतिरूप स्थलाकृति, जलवायु, मृदा, मानवीय गतिविधियों प्रौद्योगिक आदानों जैसे अनेकों कारकों का प्रतिफल हैं।वर्तमान समय में जनदबाव एवं परिणामस्वरूप खाद्यानों की मांग, विकासात्मक गतिविधियों और प्रौद्योगिक उन्नति के कारण भूमि उपयोग के प्रतिरूप तथा प्रकार में निरंतर बदलाव देखने को मिला हैं।भारत में भूमि उपयोग संबंधी आँकड़े नौ बड़े वर्गों में उपलब्ध हैं यथा–(1.) वन, (2.) कृष्येत्तर कार्यों में लगी भूमि, (3.) बंजर और खेती अयोग्य भूमि, (4.) स्थायी चारागाह व चराई भूमि, (5) वृक्षों और बागों के अधीन भूमि, (6.) कृषि बेकर भूमि, (7.) वर्तमान परती, (8.) अन्य परती, (9.) शुद्ध बोया गया क्षेत्र। यह सर्वविदित हैं कि भारत के 328.726 मिलियन हेक्टेयर भौगोलिक क्षेत्र में से केवल 307.82 मिलियन हे0 (93.64.%) क्षेत्र के बारे में ही भूमि उपयोग के आँकड़े प्राप्त हैं।उपर्युक्त प्रतिवेदित क्षेत्र (307.82 मि0हे0) का 45. 52 प्रतिशत भाग शुद्ध बोया गया क्षेत्र के अन्तर्गत, 23.32 प्रतिशत भाग वन के अन्तर्गत, 14.25 प्रतिशत कृषि हेतु अनुपलब्ध भूमि के अन्तर्गत, 4.90 प्रतिशत वर्तमान परती, 4.05 प्रतिशत कृष्य बेकार भूमि, 3.33 प्रतिशत स्थायी चारागाह, 3. 60 प्रतिशत अन्य परती, 1.01प्रतिशत वृक्षों तथा बागों के अधीन भूमि के अन्तर्गत सम्मिलित हैं।

6.3.1 शुद्ध बोया गया क्षेत्र

भारत जैसे देश में शुद्ध बोया गया क्षेत्र का विशेष महत्व हैं। विश्व में इसका औसत 32% हैं जबकि भारत में 45.52% हैं (2014–2015)। भारत में प्रति हेक्टेयर कृषि भूमि पर 8 व्यक्तियों का गुजारा होता हैं परन्तु जनाधिक्य के कारण भारत में प्रति व्यक्ति कृषि भूमि का औसत केवल 0.13 हे0 हैं जबकि आस्ट्रेलिया (3.39 हे0) में सर्वाधिक भूमि हैं। स्थानिक तौर पर पंजाब, हरियाणा, पं0.बंगाल, उत्तर प्रदेश, बिहार तथा महाराष्ट्र का 55 प्रतिशत से अधिक प्रतिवेदित क्षेत्र शुद्ध बोया गया क्षेत्र के अन्तर्गत सम्मलित हैं। शुद्ध बोया गया क्षेत्र के अन्तर्गत भारत के कुल प्रतिवेदित क्षेत्र (307.82 मि0हे0) का 45.52 प्रतिशत (140. 13 मि0हे0) हैं।

6.3.2 वन

वर्तमान समय में केवल 24.62 प्रतिशत प्रतिवेदित क्षेत्र पर वनों का फैलाव पाया जाता हैं। जो 1952 की वननीति के 33.3 प्रतिशत लक्ष्य से बहुत कम हैं। NRSA के अनुसार वास्तविक वन 67.71 मि0हे0 एवं संघन वन केवल 38.72 मि0हे0।

6.3.3 कृषि हेतु अनुपलब्ध भूमि

इस प्रणाली में दो तरह की भूमि सम्मिलित होती हैं– पहला– अधिवास, परिवहन मार्ग, नहरे, खदान आदि कृष्येत्तर कार्यों में लगी भूमि तथा दूसरा– पर्वत, मरूस्थल, दलदल, बीहड आदि के रूप में कृषि अयोग्य भूमि।

6.3.4 परती भूमि

यह भूमि भी दो प्रकार की होती हैं– नई परती (1–2 वर्ष) और पुरानी परती (2–5 वर्ष) जिसके अन्तर्गत देश के प्रतिवेदित क्षेत्र का 8.50 प्रतिशत भाग पाया जाता हैं। जहाँ नई परती के क्षेत्र में वृद्धि होती हैं वही पुरानी परती का क्षेत्र कम हो जाता हैं।

6.3.5 अन्य अकृष्टि भूमि

इसमें देश के कुल प्रतिवेदित क्षेत्र का 8.39 प्रतिशत भाग लगा हैं। जिसमें स्थायी चारागाह एवं चराई भूमि (3.33प्रतिशत) वृक्षों और बागों के अन्तर्गत भूमि (1.01 प्रतिशत) और कृष्प बेकार भूमि (4.05 प्रतिशत) सम्मलित हैं।

नोटः–भूमि उपयोग नियोजन और भूमि संसाधनों के भरपूर उपयोग हेतु 1988 में राष्ट्रीय भूमि उपयोग नीति तैयार की गयी थी।

6.4 कृषि के प्रकार

भारत में प्राचीन काल से ही कृषि लोगों का मुख्य पेशा रहा हैं। देश की भौगोलिक, सामाजिक तथा आर्थिक दशाओं में अन्तर के कारण यहाँ कई प्रकार की फसले उगाई जाती रही हैं साथ ही साथ विभिन्न प्रकार की कृषि पद्धतियाँ भी अपनायी जाती रही हैं जो कि निम्नलिखित हैं–

6.4.1 झूम कृषि

यह एक स्थानान्तरणशील पद्धति हैं जिसे भारत के पूर्वोत्तर राज्य व मध्यवर्ती आदिवासी बहुल राज्य में पायी जाने वाली जनजातियों के द्वारा अपनाया

जाता हैं। इसे असम में झूम, केरल में पोनम, आन्ध्र प्रदेश एवं उड़िसा में पोडु, मध्य प्रदेश में बीवार, मशान, पेण्डा, तथा बीरा नामों से जाना जाता हैं।

6.4.2 निर्वाहक धान्य कृषि

इसे प्राच्य धान्य कृषि भी कहा जाता हैं इसमें पुरानी तकनीकों और उपकरणों से छोटे भू–जोतों पर भोजन और अन्य घरेलू जरूरतों के लिए पशुओं की मदद से खेती की जाती हैं। इसमें खाद्यान्नों की कृषि की प्रधानता होती हैं और निर्यात के लिए बहुत कम बचत हो पाती हैं।

6.4.3 व्यापारिक धान्य कृषि

इस नई कृषि पद्धति की शुरूआत, हरियाणा व उत्तर प्रदेश के सुनिश्चित सिंचाई वाले भागों में हुई हैं जिसमें पांरपरिक निर्वाहक कृषि का स्थान व्यापारिक कृषि लेती जा रही हैं।

6.4.4 बगाती कृषि

इसके अन्तर्गत यूरोपीय बाजारों में चाय, कहवा, रबर आदि की माँग की पूर्ति हेतु ब्रिटिश शासन काल में शुरू की गई बागाती कृषि को सम्मिलित करते हैं। प्रारंभ में इन बगानो के मालिक यूरोपीय लोग थे। परन्तु स्वतंत्रता के बाद इनका स्वामित्व भारतीयों के हाथों में आ गया। दार्जलिंग पहाडियों, असम हिमालय, नीलागिरी पहाडियों और उत्तरांचल के कुमाऊँ क्षेत्र में ऐसे बगान उपलब्ध हैं।

हाल के वर्षों में भारतीय कृषि में काफी परिवर्तन हुआ हैं। न केवल इसका दृष्टिकोण व्यापारिक और बाजारू हो रहा हैं वरन् इसमें विविधीकरण बढ़ रहा हैं। आज मत्स्य पालन, रेशम उत्पादन, शहद, उत्पादन, मुर्गीपालन आदि कृषि के भाग बनते जा रहे हैं जिसमें कृषकों की रूचि बढ़ी हैं।

6.5 कृषि के निर्धारक

भारत में कृषि भौतिक, सांस्थनिक और प्रौद्योगिक कारकों के समुच्चय का प्रतिफल होती हैं। नीचे इनका एक संक्षिप्त विवरण दिया जा रहा हैं।

6.5.1 भौतिक कारक

भौतिक कारकों का शस्यप्रतिरूप, शस्यगहनता, कृषि उत्पादकता एवं कृषि प्रकारिकी पर प्रभाव देखा जाता हैं।भौतिक कारकों के अन्तर्गत उच्चावच, जलवायु व मृदा महत्त्वपूर्ण हैं जो प्रमुख रूप से भारतीय कृषि को करते हैं।

6.5.2 सांस्थानिक कारक

सांस्थानिक कारकों के अन्तर्गत सामाजिक संस्थाओं, प्रथाओं, भूधारिता भूस्वामित्व आदि को सम्मलित करते हैं जो खेतों के आकार, उनमें प्रतिरूप, कृषि प्रकार, शस्यभूमि उपयोग, शस्य उत्पादकता आदि को प्रत्यक्ष तौर पर प्रभावित करते हैं।

6.5.3 प्रौद्योगिक कारक

इस प्रकार के कारको का पर्यावरणीय समस्याओं को दूर करने और कृषि में नये परिवर्तनों तथा विकास को लागू करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका रही हैं। इनमें सिंचाई, उर्वरक, उन्नतशील बीजों, कीटनाशकों, कृषि मशीनों, वित्तीय संस्थाओं, शोध संस्थानो आदि की शामिल किया जाता हैं।

6.6 भारतीय कृषि की प्रमुख विशेषताएः–

भारतीय कृषि की प्रमुख विशेषताये निम्नवत हैं यथा–

- भारत के ग्रामीण क्षेत्र में अत्याधिक सघन कृषि की जाती हैं।
- कृषि की जा रही कुल जोतों की तीन – चौथाई जोते सीमांत हैं। जिनका क्षेत्रफल एक हेक्टेयर से कम हैं।
- वर्तमान समय में भारत में कृषि का अधिकतर यन्त्रीकरण हो चुका हैं।
- भारतीय कृषि पूर्णतः मानसून आधारित हैं।
- वर्तमान समय में किसान दवाइयों वाली जड़ी–बूटियों तथा अन्य जड़ी–बूटियाँ एवं सुगन्ध वाले उच्च मूल्य के पौधों की कृषि में अधिक रूचि लेने लगे हैं।

6.7 कृषि समस्याएँ

भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्त्वपूर्ण योगदान हैं फिर भी पश्चिमी देशों के सन्दर्भ में काफी पिछणी हुई हैं। कृषि उत्पादकता कम हैं तथा किसानों की आर्थिक स्थिति अत्यन्त ही दयनीय हैं।यहाँ कतिपय कृषि समस्याओं का उल्लघंन किया जा रहा हैं जिसके कारण देश में कृषि विकास बाधा बनी हुई हैं।

1. कृषकों की गरीबी एवं कर्ज दारी।
2. कृषि में निवेशों की कमी।
3. भू–जोतों का अनार्थिक आकार एवं उसका विखण्डन।
4. बुनियादी सुविधाओं का अभाव।
5. निम्न उत्पादकता।
6. मृदा अपरदन एवं मृदा अवक्रमण।
7. कृषि शोध, शिक्षा एवं प्रशिक्षण सुविधाओं का अभाव।

6.8 कृषि ऋण

ग्राम विकास कार्यक्रमों के शीर्ष स्तर पर प्रतिपादन एवं कार्यान्वयन हेतु RBI ने 12 जुलाई, 1982 को कृषि तथा ग्राम–विकास राष्ट्रीय बैंक (NABARD) की स्थापना की जिसकी आधिकृति पूंजी 500 करोड़ रूपयें हैं। यह बैंक कृषि, लघु उद्योगों, कुटीर उद्योगों, हस्तशिल्प, और गावों में आर्थिक क्रिया कलापों के लिए ऋण उपलब्ध कराता हैं।

6.9 भारतीय कृषि की विकास प्रवृत्ति

स्वतंत्रता के पहले व बाद भारतीय कृषि की स्थिती बहुत दयनीय थी जो कि मुख्यतः पांरपरिक कृषि पद्धति से की जाती थी, उनमें भी खाद्यान्नों की प्रधानता थी। देश के विभाजन के कारण खाद्यानों का एक बड़ा भाग पाकिस्तान में चले जाने के कारण भारतीय उद्योग धन्धे कच्चे माल की कमी के कारण शिथिल पढ गये थे। इसीलिए शायद प्रथम पंचवर्षीय योजना से ही नियोजित विकास के रूप में कृषि को सर्वाधिक प्राथमिकता दी गई। फलस्वरूप देश न केवल खाद्यानों के मामले में आत्मनिर्भर हो सका, सकंट के समय बफर स्टाक बनाया जा सका वरन् निर्यात के लिए अतिरिक्त उत्पादन किया जा सका।1950–51 से 1995–96 के दौरान इसी के तहत खाद्यानों के उत्पादन में 3. 6 तिलहन में 4.35 आलू में 10.35 गन्ना में 4.95, कपास में 4.31 और जूट–मेस्टा में 2.7 गुना की वृद्धि देखी गई।

6.10 कृषि उत्पादकता

कृषि उत्पादकता का सीधा संबंध प्रति हेक्टेयर उत्पादन से होता हैं। यह लागत–आगत के मध्य का अनुपात होता हैं कृषि उत्पादकता कृषि सक्रियता, कृषिगहनता एवं कृषि कुशलता पर निर्भर करती हैं। यदि इनमें कमी आती हैं, तो उत्पादकता भी कम हो जाती हैं।प्रो0 माजिद हुसैन ने सभी फसलों से प्राप्त मुद्रा के आधार पर भारत को पाँच प्रमुख उत्पादकता प्रदेशों में विभाजित किया हैं–

1.अति उच्च उत्पादकता– इसमें गंगा– सतुलज मैदान के पंजाब, हरियाणा गंगा–यमुना पंजाब, दक्षिण बिहार, प0बंगाल, असम के निचले भाग वाले क्षेत्रों के साथ–साथ दक्षिणी भारत के पालघाट, तंजावूर, आन्ध्र प्रदेश का गुण्डूर उड़ीसा का कटक क्षेत्र को भी इसके अन्तर्गत शामिल किया जाता हैं।

2. उच्च उत्पादकता– इस श्रेणी के अन्तर्गत उर्पयुक्त प्रदेशों के सीमान्त क्षेत्रों को सम्मिलित करने के अतिरिक्त आंध्रप्रदेश का तटवर्ती क्षेत्र, तमिलनाडु का तटीय

भाग, गुजरात का सूरत क्षेत्र तथा महाराष्ट्र के कोल्हापुर व सतारा जनपदों को भी शामिल किया जाता हैं।

3. मध्यम उत्पादकता– इसमें उत्तर प्रदेश के सहारनपुर जिले की शिवालिक पहाडियों के सहारे पूरब में विहार के दरभंगा जिले में शामिल करते हुये, मध्य तमिलनाडू, उडीसा का तटीय भाग, मध्य गुजरात, महाराष्ट्र में छिटपुर रूप से, पूर्वी कर्नाटक, पं0 बंगाल की वीरभूमि, बांकुडा व दीनाजपुर जिलों को भी सम्मिलित करते है।

4. निम्न उत्पादकता – इस वर्ग के अन्तर्गत हिमांचल प्रदेश के उत्तरी भाग, उत्तरी पूर्वी बिहार, अर्द्ध रेगिस्तानी राजस्थान, गुजरात का अहमदाबाद क्षेत्र के अलावा द0 भारत के उडीसा, आंध्रप्रदेश, केरल कर्नाटक, महाराष्ट्र व गुजरात के छिट– पुट भागों को सम्मिलित करते हैं।

5. अतिनिम्न उत्पादकता –इस वर्ग में जम्मू लद्दाख, राजस्थान का मरूक्षेत्र, द0 तेलगांना, कर्नाटक का पठारी भाग शामिल किया जाता हैं।

6.11 कृषि प्रदेश

'प्रदेश' भूगोल की एक महत्त्वपूर्ण अवधारणा है, व्हीटलसी (1936) के अनुसार' ''प्रदेश भू–पटल का एक भेदी कृत खण्ड हैं''।कृषि प्रदेश का तात्पर्य एक ऐसे समरूप प्रदेश से हैं जिसमें एक प्रकार के भूमि उपयोग तथा कृषि प्रणाली मिलती हैं अर्थात कृषि भूमि उपयोग एवं शस्य प्रतिरूप में एकरूपता पायी जाती हैं। कृषीय प्रदेश एक गतिशील धारणा हैं, जो स्थान एवं समय के साथ बदलती रहती हैं।अनेक विद्वानों ने भारत को विभिन्न कृषि प्रदेशों में वर्गीकरण का महत्त्वपूर्ण प्रयास किया हैं– यथा– ई सिमकिन्स (1926), डी थार्नस (1956), एल0डी0 स्टाम्प (1956), एम0एस0रंधावा (1958), चेन हान सोग (1959), ओ0एच0के स्पेट व लियरमंथ (1960), रामचन्द्रन (1963), एफ सिद्दीकी (1967), ओ स्लाम्पा (1968), पी0सेन गुप्ता एवं जी सदास्पुक (1968), बी0एल0सी0 जानसन (1989 एवं 1979), आर0एल0 सिंह (1971) एवं जसबीर सिंह (1975) का नाम उल्लेखनीय हैं।इनमें से अधिकतर विद्वानों ने त्रिस्तरीय तंत्र का प्रस्ताव किया हैं।

अ. वृहत कृषि प्रदेश (कृषि मेखला)
ब. मध्यम प्रदेश (कृषि प्रदेश)
स. लघु प्रदेश (शस्य–संयोजन प्रदेश)

1. एम0एस0 रंधांवा (1958)

इन्होने भू–जलवायु विविधता, फसलों की विशेषता तथा पशुधनों के आधार पर भारत को पाँच प्रमुख कृषि प्रदेशों में बांटा हैं यथा–

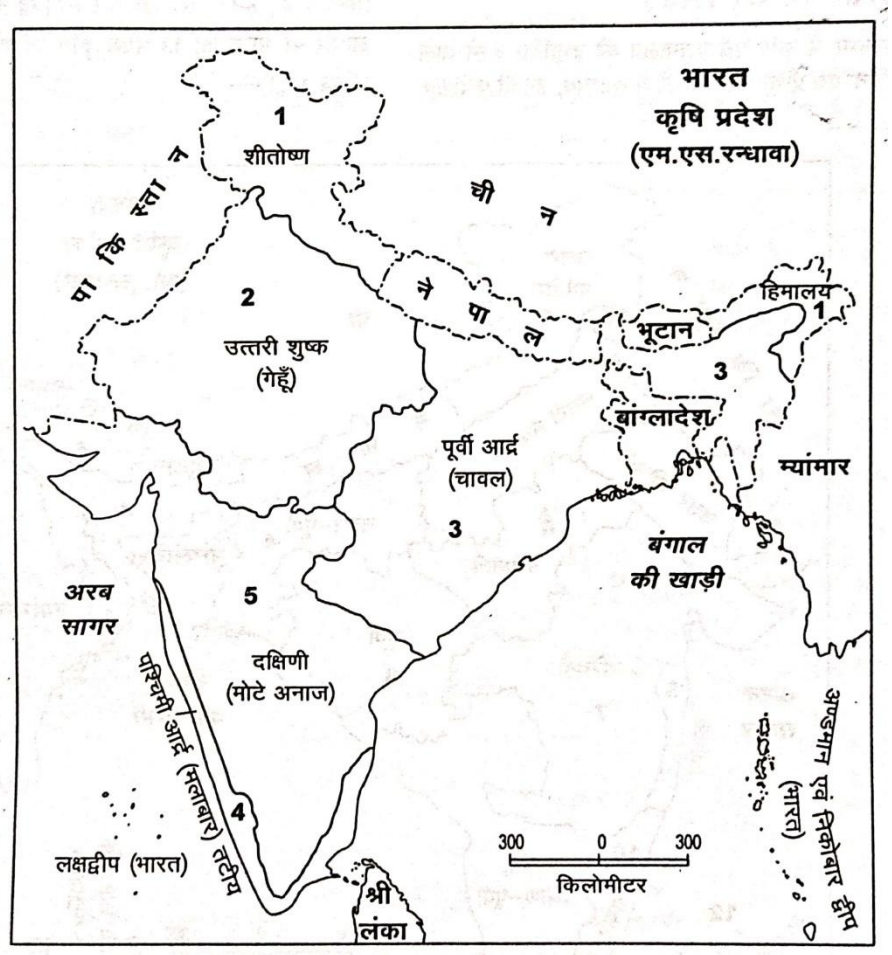

चित्र– 1

(i) शीतोष्ण हिमालय प्रदेश।

(ii) उत्तरी शुष्क (गेहूँ) प्रदेश।

(iii) पूर्वी आदि (चावल) प्रदेश।

(iv) पश्चिमी आदि (मालावार) प्रदेश।

(v) द0 मोटे अनाज का प्रदेश।

2. ओ0 स्लाम्पा (1968)

इनके वर्गीकरण का प्रमुख आधार कृषि तथा प्रादेशिक विशेषताओं, सघनता तथा विकास के स्तर को प्रभावित करने वाले भौतिक, आर्थिक तथा प्रविधिक कारकों का अन्तर रहा। इसके आधार पर इन्होने भारत को कुल 13कृषि प्रदेशों में बाँटा–

(I) उत्तरी पर्वतीय प्रदेश (II) उत्तरी मैदान (III) उत्तर पश्चिमी प्रदेश (IV) उत्तरी पूर्वी प्रदेश(V) उत्तर–पूर्वी सीमान्त प्रदेश (VI) मध्यवर्ती प्रदेश (VII) पश्चिमी प्रदेश (VIII) पूर्वी प्रदेश(IX) कोकंण प्रदेश (X) मालाबार एवं कनारा (XI) दक्षिण पूर्वी प्रदेश(XII) लक्षद्वीप (XIII) अण्डमान निकोबार द्वीप।

3. पी0सेन गुप्ता एवं गलिना सदास्युक (1968)

इनके वर्गीकरण का प्रमुख आधार जलवायु विशेषताए, भू– आकृतिक विशेषताए व फसल संयोजन था। जिन्हे क्रमशः 4 वृहद प्रदेशो, 11 मध्य प्रदेश व 60 सूक्ष्म प्रदेश में विभाजित किया। ये सभी प्रदेश आपस में अर्न्तम्बन्धित थे। इनके अनुसार कृषि प्रदेश निम्नलिखित हैं–

(I) हिमालय मेखला

इस मंजला को इन्होने पश्चिमी हिमालय तथा पूर्वीहिमालय मध्यम प्रदेश में वर्गीकृत किया हैं जिसमें से प्रत्येक को दो सूक्ष्म प्रदेशों में बाँटा हैं।

(II) शुष्क मेखला

इस वृहद प्रदेश को उत्तरी–पश्चिमी शुष्क मैदान व शुष्क प्रायद्वीपीय पठार मध्यम प्रदेश में वर्गीकृत किया हैं। इसमें से पहले का 6 व दूसरे को 5 सूक्ष्म प्रदेशों मे ंविभाजित किया हैं।

(III) उपार्द मेखला

इस वृहद प्रदेश को तीन भागों क्रमशः ऊपरी एवं मध्य गंगा मैदान, उपार्द प्रायद्वीपीय पठारी भाग व उपार्द तटीय मैदान (मध्यम प्रदेश) में विभाजित किया जिसे पुनः क्रमशः 8, 10 व 6 सूक्ष्म प्रदेशों में वर्गीकृत किया हैं।

(IV) आर्द्र मेखला

इस वृहद प्रदेश रूपी मंजला को 4 भागो क्रमशः पूर्वी मैदान, प्रायद्वीपीय पठार, पूर्वी पहाड़ पठार व पश्चिमी घाट में वर्गीकृत किया हैं जिसे पुनः क्रमशः 6, 4, 5 व 6 सूक्ष्म प्रदेशों में विभाजित किया हैं।

4. बी0एल0सी0 जानसन (1969, 1979)

इन्होने शस्य संयोजन तथा प्रमुख फसलों के आधार पर भारत को 15 प्रमुख शस्य संयोजन प्रदेशों में विभाजित किया हैं। इसके अलावा इन्होने स्थानान्तरी कृषि एवं बगाती फसलों की दो अन्य प्रदेश बतलाये हैं।

(I) चावल एकल कृषि (II) चावल–मक्का प्रदेश (III) चावल–गेहूँ प्रदेश (IV) गेहूँ–मक्का प्रदेश (V) गेहूँ–मिलेट प्रदेश (VI) खरीफ–मिलेट प्रदेश (VII) मक्का एवं गेहूँरु/चावल प्रदेश (VIII) कपास –मिलेट प्रदेश (IX) ज्वार प्रदेश (X) ज्वार–तिलहन प्रदेश (XI) ज्वार–चावल प्रदेश(XII) मिलेट–चावल प्रदेश (XIII) कसावा चावल प्रदेश (XIV) आलू–चावल प्रदेश(XV) नारियल प्रदेश

5. आर0एल0 सिंह (1971)

इन्होने प्रमुख फसलों के आधार पर 10 शस्य साहचर्य प्रदेशों की पहचान की तथा इन साहचर्य प्रदेशों को द्वितीय एवं तृतीय कोटि की फसलों के आधार

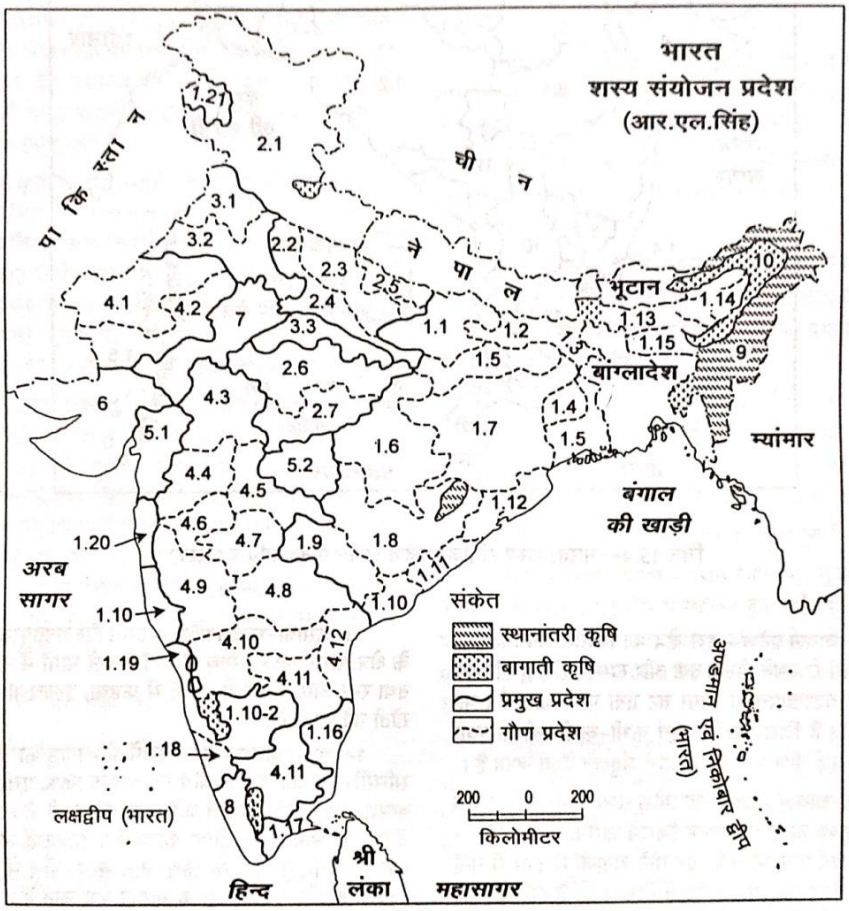

चित्र– 1

पर पुनः उपविभाजित किया इस प्रकार 8 प्रथम क्रम के प्रदेश कोटि की फसलों (चावल, गेहूँ, चना, मोटे अनाज मिलेट, कपास, मूँगफली, मक्का, नारियल) के आधार पर 27 द्वितीय क्रम के प्रदेश, दो कोटि की फसलों के आधार पर 48

तृतीय क्रम के प्रदेश प्रथम तीन कोटि की फसलों के आधार पर सीमाकित किये गये। आर0एल0 सिंह के अनुसार वृहदं प्रदेश निम्नवत हैं–

(I) चावल प्रदेश – 21 तृतीय क्रम के कृषि प्रदेश। (II) गेहूँ प्रदेश – 7 तृतीय क्रम के कृषि प्रदेश।(III) चना प्रदेश – 3 तृतीय स्तर के उप प्रदेश। (IV) ज्वारा–बाजरा (मिलेट प्रदेश) – 12 तृतीय स्तर के उप प्रदेश।(V) कपास प्रदेश – 2 तृतीय स्तर के उप विभाग (VI) मूंगफली प्रदेश (VII) मक्का प्रदेश (VIII) नारियल प्रदेश। (IX) स्थानांतरी कृषि।(X) बगाती कृषि।

6. जसबीर सिंह (1975)

इन्होने प्रमुख तथा गौण फसलों के आधार पर क्रमशः 12 प्रधान व 60 गौण शस्य संयोजन प्रदेशों में विभाजित किया हैं।

12 प्रमुख कृषि प्रदेश निम्नवत हैं–

(I) चावल प्रदेश (II) ज्वार प्रदेश (III) बाजरा प्रदेश(IV) गेहूँ प्रदेश (V) कपास प्रदेश (VI) तिलहन (मूँगफली) प्रदेश (VII) चना प्रदेश (VIII) मक्का प्रदेश (IX) रागी प्रदेश (X) जौ प्रदेश (XI) फलोद्यान प्रदेश (XII) चाय प्रदेश।

6.12 कृषि जलवायुविक प्रदेश

कृषि और जलवायु का आपस में घनिष्ठ संबंध होता हैं। जलवायु एक प्रमुख कारण हैं जिससे क्षेत्र विशेष की वनस्पति प्रभावित होती हैं, यही कारण है कि प्राकृतिक वनस्पति को जलवायु वर्गीकरण में अभिसूचक के रूप में प्रयुक्त किया जाता हैं।

तीव्र गति से बढती जनसंख्या के भरण–पोषण हेतु भारत जैसे विकासशील देश में कृषि विकास को प्रथम प्राथमिकता देना अनिवार्य है।

कृषि जलवायु प्रदेश नियोजन का मुख्य उद्देश्य कृषि और संबंध संसाधनों के वैज्ञानिक उपयोग द्वारा कृषि उत्पादन, आय और रोजगार में वृद्धि करना हैं।

भारत के योजना आयोग (1989) ने कृषि जलवायवीय प्रादेशिक नियोजन के लिए निम्नलिखित चार उद्देश्य निर्धारित किये–

(I) राष्ट्रीय स्तर पर मुख्य मदों की मांग पूर्ति का संतुलन स्थापित करना, जो क्षेत्रों के विभव तथा सम्भावनाओं के सावधानीपूर्वक किये गये विश्लेषण पर आधारित हो।

(II) उत्पादकों की शुद्ध आय का अधिकतम करना।

(III) अतिरिक्त रोजगार, विशेषतः भूमि हीन श्रमिकों के लिए उत्पन्न करना तथा

(IV) राष्ट्रीय प्राकृतिक संसाधनों (जल, जंगल, जमीन) के वैज्ञानिक तथा वहनीय प्रयोग के लिए रूपरेखा तैयार करना।

उपर्युक्त उद्दश्यों की पूर्ति हेतु योजना आयोग तथा NRSA (राष्ट्रीय दूरस्थ सवेदंन एजेन्सी) ने देश को 15 कृषि जलवायु प्रदेशों में बाटा–

(I) पश्चिमी हिमालयी प्रदेश

- इसका फैलाव जम्मूकश्मीर, लद्दाख, हिमाचल प्रदेश व उत्तराखंड राज्य/ केन्द्रशासित प्रदेश में है।
- स्थालिकृतिक विशेषताये प्रभावी है।
- लद्दाख (20 सेमी0 से कम) को छोड़कर समस्त प्रदेश में औसत वार्षिक वर्षा 75 सेमी0 से 150 सेमी होती है।
- इस प्रदेश में सदावाहिनी नदिया स्थित हैं जिनमें से कुछ का उपयोग सिंचाई तथा विद्युत उत्पादन के लिये किया जाता हैं।
- फलोत्पादन, किसानों के लिए नकदी का एक प्रमुख स्रोत हैं।
- धान इस क्षेत्र की प्रमुख फसल हैं जिसे ढालों के सहारे सीढीनुमा खेतों में उगाया जाता हैं मक्का, गेहूँ, आलू, जौ, अन्य प्रमुख फसले है।
- इस प्रदेश के लिए विवेकपूर्ण भूमि उपयोग नियोजन की अवश्यकता हैं।

(II) पूर्वी हिमालय प्रदेश

- इसका विस्तार अरूणांचल प्रदेश, असम की पहाडियों, नागालैण्ड, मेघालय, मणिपुर, मिजोरम, त्रिपुरा, सिक्किम तथा पश्चिम बंगाल के दर्जालिंग जिले में हैं।
- इसके अन्तर्गत कुल कृषि भूमि का लगभग 33 प्रतिशत क्षेत्र स्थानांतरित कृषि या झूम कृषि के तहत आता हैं।
- इस प्रदेश में भी आसमान स्थलाकृति देखी जाती हैं।
- मृदा अपरदन एक अन्य चिंताजनक समस्या हैं, जिस पर नियोजकों का ध्यान आकर्षण करना अनिवार्य हैं।
- इस क्षेत्र में लाल–भूरी किस्म की मिट्टी पाई जाती है जो कम उपजाऊ होती हैं।

(III) सतलज–यमुना मैदान

- यह क्षेत्र पंजाब, हरियाणा, चण्डीगढ, दिल्ली तथा राजस्थान के गंगानगर जिले में फैला हुआ हैं।
- यहाँ की जलवायु की अर्द्धशुष्क विशेषताएँ हैं।
- इस प्रदेश में कृषि की सघनता (16.5प्रतिशत) देश भर में सबसे अधिक हैं।
- कृषि के परिप्रेक्ष्य में यह क्षेत्र देश भर में सबसे उन्नत कृषि प्रदेश हैं।

(**IV**) गंगा का ऊपरी मैदान

- इसका विस्तार पश्चिमी उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड के हरिद्वार एवं उधमसिंह नगर जिले तथा प्रयागराज तक फैला हुआ हैं।
- मृदा बलुई से मृढमय दोमट प्रकार की हैं।
- इस प्रदेश मे कृषि विकसित हैं तथा यहाँ भी हरित क्रांति सफल हैं।

(V) मध्यगंगा मैदान

- इसका विस्तार उत्तर प्रदेश तथा बिहार के अधिकांश भाग में हैं।
- यहाँ जलोढ़ किस्म की मृदा हैं तथा भूमिगत जल की बहुतायत हैं।

(VI) गंगा का निचला मैदान

- इसका विस्तार ब्रह्मपुत्र घाटी, पश्चिम बंगाल (दार्जिलिंग जिले को छोड़कर) तथा पूर्वी बिहार में हैं।
- मृदा जलोढ़ तथा उपजाऊ हैं।
- चावल इस क्षेत्र की प्रमुख फसल हैं। एक ही खेत से किसानों द्वारा हर वर्ष दो या तीन लगातार चावल की फसले (अमन, बोरा, असु) प्राप्त की जाती हैं।

(VII) पूर्वी पठार तथा पहाडियाँ

- इस कृषि जलवायु प्रदेश में छोटानागपुर का पठार शामिल हैं, जिसका विस्तार झारखण्ड, छत्तीसगढ, तथा दण्डकारण्य (ओडिशा) में हैं।
- मृदा लाल तथा पीले किस्म की होती हैं।
- इस क्षेत्र की कृषि मुख्यतः वर्षा आधारित होती हैं।
- जल एकत्रण तथा जलविभाजक का विकास तथा मृदा संरक्षण कृषि को अधिक लाभकारी बना सकते हैं।

(VIII) अरावली–मालवा उच्चभूमि

- इसका विस्तार बुंदेलखण्ड, बघेलखण्ड, महाभारत पठार, मालवा पठार, विंध्याचल पहाड़ शामिल हैं।
- इस प्रदेश की विशेषता अर्द्ध शुष्क जलवायु स्थिती हैं।

- मृदा मिश्रित पीले, लाल तथा काले रंग की होती है।
- यहाँ जलाभाव देखने को मिलता हैं।

(IX) महाराष्ट्र के पठार

- इसका विस्तार मुख्यतः दक्कन के पठार में है।
- यह क्षेत्र काली कपासी या रेगुर मिट्टी का क्षेत्र है़।
- इस क्षेत्र में डेरी उद्योग के विकास, मुर्गीपालन तथा सामाजिक वानकी पर अधिक ध्यान किया जाना चाहिये।

(X) दक्कन का भीतरी प्रदेश

- यह क्षेत्र कर्नाटक, आंध्र प्रदेश तथा तमिलनाडू के उच्च भूमि (उत्तर में अदिलाबाद जिले से लेकर द0 में मदुरई जिले तक) में फैला हुआ हैं।
- यह शुष्क कृषि का क्षेत्र हैं।

(XI) पूर्वी तटीय मैदान

- इस प्रदेश का विस्तार ओडिशा और आन्ध्रप्रदेश, के कोरोमण्डल तथा उत्तरी सरकार तट में हैं।

(XII) पश्चिमी तटीय मैदान

- इस क्षेत्र का विस्तार महाराष्ट्र, कर्नाटक तथा केरल के सीमान्त क्षेत्रों में हैं।
- उत्तर में इसे कोकंण तटीय मैदान तथा दक्षिण में इसे मालावार तटीय मैदान कहा जाता हैं।

(XIII) गुजरात के मैदान तथा पहाडियां

- इस प्रदेश में काढियावाड़ के मैदान एवं पहाडियों तथा माही व साबरमती नादियों की उर्वर घाटिया शामिल हैं।
- यह एक शुष्क तथा अर्द्ध शुष्क क्षेत्र हैं।

(XIV) पश्चिमी राजस्थान

- इस प्रदेश का विस्तार राजस्थान (अरावली के पश्चिम में) तथा उत्तरी गुजरात में हैं।
- बाजरा, दलहन व चारा महत्त्वपूर्ण फसल हैं जिससे इस मरूस्थलीय पारिस्थतिकी में पशुधन महत्त्वपूर्ण हो जाता हैं।

(XV) द्वीपीय प्रदेश

- इस क्षेत्र में अडंमान व निकोबार तथा लक्षद्वीप सम्मलित हैं।
- यह भूमध्यरेखीय एवं उष्ण कटिबंधीय जलवायु होती हैं।

- हल्दी तथा 'कसावा' इस प्रदेश की मुख्य फसले है।

6.12.1 प्राकारिकी के रूप में प्रादेशिक विशिष्टता वर्णन

क्र0सं0	प्राकारिकी	प्रदेश
1	प्रचुर जल एवं मृदा संसाधन, उच्च भूमि उत्पादकता (उपज फसले) भूमि पर समान्य जन दबाव	III
2	प्रचुर जल एवं मृदा संसाधन, मध्यम उत्पादकता स्तर, भूमि पर सामान्य जन भार, भूमि गुणवत्ता के संदर्भ में पर्यावरण अध्ययन।	IV
3	प्रचुर जल एवं मृदा संसाधन, निम्न उत्पादकता स्तर, भूमि पर भारी जनसंख्या दबाव, मृदा समस्याओं में वृद्धि।	V, VI
4	जल एवं भूमि संसाधन की पिपुलता, निर्वाहक कृषि की प्रधानता सहित भूमि की बहुत कम उत्पादकता कम जनसंख्या दबाव, समस्याग्रस्त मृदाओं का भारी अनुपात	VII, VIII
5	मृदा एवंज ल संसाधनों की कम अनुकूलता, कम उत्पादकता, कम से मध्यम जनसंख्या दबाव, मृदा अपरदन एवं जल गुणवत्ता के संबंध में बिगड़ता पर्यावरण।	IX,X
6	प्रचुर जल संसाधन परन्तु अपेक्षतया विपल भूमि, मध्यम उत्पादकता मध्यम से	XI,XII,XV
7	कम अनूकूल जल एवं भूमि संसाधन, निम्न उत्पादकता, कम जनसंख्या दबाव, कमजोर पारिस्थितिक तंत्र।	I, II
8	अर्द्ध शुष्क से शुष्क दशाये, मामूली अच्छी भूमि गुणवत्ता एवं भूमि उत्पादकता साधारण जनसंख्या दबाव।	XIII
9	शुष्क दशाये, वृहत परन्तु कम उपजाऊ मृदा संसाधन, अल्पल्य भूमि उत्पादकता कम जनसंख्या दबाव, कमजोर परिस्थितिक तंत्र।	XIV

6.12.2 कृषि जलवायु प्रदेशों में शस्य विशिष्टीकरण

क्र0सं0	**शस्य समूह**	**प्रदेश**
1	चावल	V,VI,VII,IX
2	गेहूँ	III,IV,V,VIII
3	ज्वार	VIII,IX,X

4	दलहन	III,VIII,IX
5	तिलहन	VIII, IX,X,XIII
6	कपास	III,IX,X,XII
7	गन्ना	IV,V,IX,X
8	फल व सब्जिया	IV,V,VI,VII

6.13 सारांश

इस ईकाई के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता हैं कि किस प्रकार भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्त्वपूर्ण स्थान हैं। साथ ही साथ इसकी भी जानकारी हो जाती हैं कि किस प्रकार भूमि उपयोग का नियोजन किया जा सके जिससे कृषि का एक समग्र विकास हो सके। इस इकाई से यह भी स्पष्ट होता हैं कि भारत के विभिन्न कृषि प्रदेशों के वितरण का आधार क्या हैं तथा किस प्रकार उसका विकास हो, विभिन्न विद्वानों ने अपने मतानुसार व्यक्त किया हैं। भारत में योजना आयोग के द्वारा वर्गीकृत कृषि जलवायु प्रदेशों का आधार उसके 4 प्रमुख उद्देश्य हैं, जो अपने आप में परिपूर्ण हैं।

- भारत के कृषि नियोजन में शस्य संवहन, जल प्रबंधन और मत्स्य विकास पर बल देने की आवश्यकता हैं।
- कृषकों में चावल की उन्नतशील किस्मों को लोकप्रिय बनाकर वर्ष में चावल के दो फसले प्राप्त करना चाहिए।
- पुराने नारियल के पेड़ों की जगह पर नए अधिक उपज देने वाले पेड़ों को लगाना चाहिए।
-

6.14 शब्द सूची

भूमि उपयोग	Land Use
कृषि प्रदेश	Agriculture region
कृषि शाख	Agriculture credit
कृषि आदान	Agriculture input
कृषि उत्पादकता	Agriculture productvity
कृषि जलवायु प्रदेश	Agro climatic region
कृषि वानिकी	Agroforestry
कृषि पारिस्थितिक प्रदेश	Agro ecological region

6.15 स्वमुल्याकंन प्रश्न

1. योजना आयोग के द्वारा भारत को कितने कृषि जलवायुविक प्रदेशों में बाँटा गया हैं।
   (अ) 12 (ब) 13 (स) 14
   (द) 15
2. किस विद्वान ने भारत को 4 वृहद 11 मध्य व 60 सूक्ष्म स्तरीय कृषि प्रदेशों में वर्गीकृत किया।
   (अ) पी0सेन गुप्ता (ब) गालिना सदास्थुर (स) अ और ब (द) रन्धावा ने
3. राष्ट्रीय कृषि नीति की घोषणा कब की गई
   (अ) 2003 (ब) 2004 (स) 2005 (द) 2006
4. भारत में भूमि उपयोग संबंधी आँकडो को कितने वर्गों में उपलब्ध कराया गया हैं।
   (अ) 9 (ब) 5 (स) 4 (द) 10
5. किसने सभी फसलों से प्राप्त मुद्रा के आधार पर भारत को पाँच उत्पादकता प्रदेशों में विभाजित किया हैं–
   (अ) शफी (ब) आर0एल0सिंह (स) आर0सी0तिवारी
   (द) माजिद हुसैन

आदर्श उत्तर

1. द, 2. स 3. ब 4. अ 5. द

6.16 सन्दर्भ/उपयोगी पुस्तके

1. Bansil, P.C., Agricultral Problems of India, New Delhi : Vikas Publication 1974
2. Bhatiya. S.S., "A New Method of Agricultral Eifficiency in UP." In Economic Geography 1967
3. तिवारी.आर.सी., भारत का भूगोल, प्रवालिका पब्लिकेशन, प्रयागराज।
4. तिवारी एवं सिंह, कृषि भूगोल, प्रवालिका पाब्लिकेशन, प्रयागराज।
5. गौतम, अल्का, भारत का वृहद् भूगोल, शारदा पुस्तक भवन, प्रयागराज।
6. हुसैन, माजिद, भारत का भूगोल, मैकग्रा हिल पाब्लिकेशन।

6.17 अभ्यास प्रश्न (सत्रान्त परीक्षा की तैयारी हेतु)

1. भारतीय अर्थव्यवस्था का कृषि एक महत्त्वपूर्ण आधार हैं स्पष्ट कीजिए।
2. भूमि उपयोग से आप क्या समझते हैं? विस्तृत चर्चा कीजिए।
3. कृषि के विभिन्न प्रकारों की व्याख्या कीजिए।
4. कृषि प्रदेश क्या होते है तथा इनके वर्गीकरण की रूप रेखा प्रस्तुत कीजिए।
5. कृषि जलवायु प्रदेश से आप क्या समझते है, स्पष्ट कीजिए।

नोटः– इस ईकाई का अध्ययन कर अभ्यास प्रश्नों के उत्तर स्वयं लिखिये।

इकाई 7– भारत में हरित क्रान्ति, हरित क्रान्ति के पर्यावरणीय प्रभाव

इकाई की रूपरेखा

7.1 प्रस्तावना
7.2 उद्देश्य
7.3 ऐतिहासिक सन्दर्भ
7.4 भारत में हरित क्रान्ति
7.5 भारत में हरित क्रान्ति की विशेषताये
7.6 भारत में हरित क्रान्ति का प्रभाव
7.7 हरित क्रान्ति के पर्यावरणीय प्रभाव।
7.8 द्वितीय हरित क्रान्ति (समस्या से समाधान की ओर)
7.9 भारत में हरित क्रांति के तहत योजनाएं
7.10 हरित क्रांति से जीन क्रांति तक
7.11 सारांश
7.12 शब्द सूची
7.13 स्वमूल्याकंन प्रश्न
7.14 सन्दर्भ/उपयोगी पुस्तके
7.15 अभ्यास प्रश्न

7.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत ईकाई में हम भारत में हरित क्रांति एवं इसके पर्यावरणीय प्रभाव का अध्ययन करेंगे। स्वतंत्रता के बाद देश की प्रमुख समस्याओं में खाद्य सुरक्षा व कृषि का विकास रहा हैं।प्रथम पंचवर्षीय योजना का मुख्य केन्द्र कृषि विकास एवं खाद्य सुरक्षा रहा, इसके बावजूद भी द्वितीय पंचवर्षीय योजना के दौरान देश ने गम्भीर खाद्य कमी का सामना किया हैं। फलस्वरूप इस प्रकार की समस्या से निपटने के लिये जाँच करने व उपचारी सुझाव देने के लिए अमेरिकी विशेषज्ञों के दल को आमान्त्रित किया गया। यह दल USA के कृषि विभाग के डॉ.एस.एफ. जानसन की अध्यक्षता में भारत आया था। इस दल ने "Indian's Food Problem and steps to meet it" (1959) नाम से अपनी रिपोर्ट में सिफारिश की कि भारत को ऐसे क्षेत्रों पर अत्याधिक ध्यान देना चाहिये जहाँ कृषि उत्पादकता बढाने की सम्भावना अधिक हैं। 1960 के ही दशक कृषि विकास के संबंधित दो मुख्य कार्यक्रमों यथा सघन कृषि क्षेत्र कार्यक्रम (IAAP, 1961) तथा सघन कृषि जिला कार्यक्रम (IADP, 1964) प्रारंभ किए गए। उपर्युक्त दोनो ही कार्यक्रमों द्वारा कृषि अनुसंधान और विकास, शिक्षा और विस्तार सेवाओं पर भारी निवेश किया गया परिणामतः भारतीय कृषि में उत्पादकता और उत्पादन में उच्च

वृद्धि को सम्भव बनाया। एक तरफ जहाँ हरित क्रांति समग्र कृषि उत्पादन, उत्पादकता व आय पर्याप्त रूप से बढ़ाई, खाद्य कमी अर्थव्यवस्था को खाद्य पर्याप्तता में रूपातंरित किया वही दूसरी तरफ पर्यावरणीय दृष्टि से हरित क्रांति ग्रामीण अर्थव्यवस्था में कई नकारात्मक प्रभाव भी उत्पन्न किये तथा भौमजल स्तर का अवक्षय, मृदा की गुणवत्ता में कमी आदि।इस इकाई के अन्तर्गत हम भारतीय अर्थव्यवस्था पर हरित क्रांति के सकारात्मक और नकारात्मक प्रभावों पर विस्तार से अध्ययन करेंगे।

7.2 उद्देश्य

इस ईकाई को पढनें के बाद आप–

- हरित क्रांति (Green Revolution) की अवधारणा समझ सकेंगे।
- प्रथम हरित क्रांति के ऐतिहासिक संदर्भ और मुख्य विशेषताओं की रूपरेखा प्रस्तुत कर संकेगे।
- हरित क्रांति की विशेषताओं का, उसके सकारात्मक और नकारात्मक दोनों आयामों से वर्णन कर सकेंगे; और
- हरित क्रांति के बाद उन प्रयासों की आवश्यकता निर्दिष्ट कर संकेगे जो उन क्षेत्रों का कृषि विकास प्राप्त करने के लिए प्रारंभ किये जाने आवश्यक हैं जिनमें हरित क्रांति नही फैली हैं।

7.3 ऐतिहासिक संदर्भ

हरित क्रांति का तात्पर्य 1960 के दशक में खाद्य फसलों के ऐसे बीजों के विकास एवं उपयोग से हैं जिसके कारण इनके उत्पादन में आशातीत वृद्धि हुई हैं।'हरित क्रांति' शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग USA के डॉ0 विलियम गौड ने किया। इसकी शुरूआत का श्रेय 1950 के दशक में राक़फेलर और फोर्ड फाउन्डेशन के तत्वाधान में विकसित गेहूँ की अधिक उपज देने वाली ऐसी किस्मों से हैं जो पारंपारिक किस्मों से ठिगनी एवं अधिक उत्पादक थी।ये ऐसी किस्में थी जो मौसम परिवर्तनों से कम प्रभावित होती थी, शीघ्र ही तैयार हो जाती एवं उर्वरकों से अनुकूल प्रतिक्रिया दर्शाती थी। इसी कारण इस कार्यक्रम के निदेशक डॉ0 नारमन बोरलाग को 1970 में विश्व शान्ति का नोबल पुरस्कार प्राप्त हुआ।

1960 के दशक में ही राकफेलर व फोर्ड फाउण्डेशन द्वारा स्थापित मनीला (फिलपीस) के अन्तर्राष्ट्रीय चावल अनुसंधान संस्थान ने चावल की एक ऐसे बीज का विकास किया जो इण्डोनेशिया एवं ताइवान के चावल का वर्ण संकर या एवं अधिक उपज देने वाला था। इस तरह गेहूँ एवं चावल के इन नये बीजों का प्रसार विश्व में हुआ। इसकी सफलता का आशय इस तथ्य से लगाया जा सकता कि भारत में गेहूँ का उत्पादन केवल 5 वर्षो में दुगुना हो गयझंउदाहरणार्थ भारत

ने 1965–66 के दौरान लगभग 10 मिलियन टन गेहूँ आयात किया था परन्तु 1971 में आत्मनिर्भरता के साथ–साथ वह गेहूँ के निर्यात की स्थिति में आ गया। इसी प्रकार की दशा एशिया एवं लैटिन अमेरिका के विभिन्न देशों में देखी गयी। भारतीय हरित क्रांति के जनक के रूप में M.S. स्वामीनाथन को जाना जाता हैं, ये एक जेनेटिक्स वैज्ञानिक थे जिन्होने मैक्सिको के बीजों को पंजाब के देशी बीजों के साथ मिश्रित करते हुये एक नई एवं अत्याधिक उत्पादन देने वाली किस्मों का विकास किया था। इनके इसी योगदान के कारण इन्हे पद्मभूषण पुरस्कार से भी नवाजा गया।

7.4 भारत में हरित क्रांति (Green Revolution in India)

भारत स्वतत्रंता के पहले से ही खाद्य समस्या से झूम रहा था। अनाज की कमी की आपूर्ति के लिए भारत नें USA के साथ 1956 में PL –480 व्यापार समझौता किया, जिसके अन्तर्गत 3.1 मिलयन टन गेहूँ तथा 0.19 मिलियन टन चावल के आयात का प्रावधान किया गया।1962–63 में भीषण सूखा पड़ने के कारण पैडॉक बन्धुओं ने भारत में अकाल पड़ने की भविष्यवाणी की और कहा कि 1975 तक भारत में माल्थस का सिद्धान्त लागू हो जायेगा। ऐसी परिस्थितियों से निपटने के लिए भारत में हरित क्रांति आरम्भ हुई।भारत में हरित क्रांति की शुरूआत 1966–67 में मेक्सिकों में विकसित नवीन उर्वरक प्रतिचारी (Responsive) गेहूँ की बौनी प्रजातियों के प्रयोग से हुयी। इसके पहले 1959 में फोर्ड फाउन्डेशन के कृषि वैज्ञानिको के एक समूह को भारत की कृषि में सुधार हेतु समुचित सुझाव देने के लिए आमंत्रित किया गया था। जिन्होने अपनी रिपोर्ट अप्रैल 1959 में प्रस्तुत की थी। इसी के परिणाम स्वरूप 1960–61 में देश के 7 चयनित जनपदों (आंध्र प्रदेश के पं0 गोदावरी, बिहार के शाहाबाद, छत्तीसगढ, के रायपुर, तमिलनाडु के तंजावुर, पंजाब के लुधियाना, राजस्थान के पाली एवं उत्तरप्रदेश के अलीगढ़) में सघन कृषि जनपद कार्यक्रम (IADP) को प्रारम्भ किया गया। इसके अन्तर्गत खाद्यान्नों के उत्पादन में वृद्धि हेतु शुरू किये गये एक कार्यक्रम की सफलता को देखते हुये अक्टूबर 1965 में संघन कृषि क्षेत्र कार्यक्रम (IAAP) के रूप में इसे देश के 114 जनपदों तक फैला दिया गया।1966–67 में घोषित नयी कृषि नीति में उन्नत बीजों के प्रयोग के कार्यक्रम (HYVP) पर अधिक जोर दिया गया।

भारत में हरित क्रांति की शुरूआत पंजाब, हरियाण एवं पश्चिमी उत्तर प्रदेश के क्षेत्रों में गेहूँ की कृषि से हुई। परन्तु 1983 के बाद इसका प्रसार चावल की कृषि में हुआ जिससे बिहार, आंध्र प्रदेश एवं तमिलनाडू के भाग लाभान्वित हुए।हरित क्रान्ति के कारण देश में गेहूँ का उत्पादन 123 लाख टन (1964–65)

से बढकर (1985–86) में 470.5 लाख टन एवं 1990–91 में 551.3 लाख टन पहुँच गया। यह मुख्यतः गेहूँ की प्रति हेक्टेयर उपज में तीव्र वृद्धि के कारण था। गेहूँ के बाद हरित क्रांति का प्रभाव को चावल की खेती पर देखा गया, जिसके परिणामस्वरूप चावल का उत्पादन 1965–66 के 306 लाख टन से बढकर 1980–81 में 536 लाख टन तथा 2008–09 में 992 लाख टन तक पहुँच गया जिससे गत 43 वर्षों में 224 प्रतिशत की तीव्र वृद्धि का संकेत मिलता हैं।

7.5 भारत में हरित क्रांति की विशेषताये

भारत में हरित क्रांति की प्रमुख विशेषताये निम्नलिखित हैं।

- HYV बीज, रासायनिक उर्वरकों और कीटनाश कों का प्रयोग।
- आधुनिक कार्य मशीनों का अनुप्रयोग।
- विस्तृत सिंचाई सुविधायें।।
- अनेक शस्यन।
- उन्नत ऋण सुविधाये।
- समर्थन मूल्य नीति और उन्नत अनुसंधान।
- विकास, विस्तार तथा आधारभूत संरचना।
  उपर्युक्त सभी तथ्य भारत में हरित क्रांति आन्दोलन की मुख्य विशेषतायों के रूप में उल्लेखनीय है।

7.6 भारत में हरित क्रांति का प्रभाव–

निश्चित रूप से स्वतंत्रता के बाद या उससे पहले भारत खाद्य संसाधनों की बेहद कमी थी जिसको हरित क्रांति के माध्यम से बेहद प्रभावित व त्वरित तरीके से दूर किया। वहीं पर जहां हरित क्रांति के माध्यम से खाद्य संसाधनों में आत्मनिर्भरता मिली दूसरी तरफ अनेक प्रकार की आर्थिक, सामाजिक, पर्यावरणीय समस्याये भी जन्म ली।इस प्रकार भारत में हरित क्रांति का प्रभाव सकारात्मक व नकारात्मक दोनो पहलुओं में महत्वपूर्ण रहा हैं।

7.6.1 सकारात्मक प्रभाव

हरित क्रांति के भारतीय कृषि पर पड़ने वाले सकारात्मक प्रभावों को निम्न प्रकार से विवेचित किया जा सकता हैं–

1. हरित क्रांति से कृषि गहन उत्पादन प्रणाली का विकास हुआ जिससे कृषि उत्पादन में भारी वृद्धि के कारण खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भरता के लक्ष्य को प्राप्त किया जा रहा हैं।

2. हरित क्रांति के कारण भारतीय कृषि, जीवन निर्वाहक कृषि के बजाय व्यापारिक तथा बाजारोन्मुखी रूप ग्रहण करती जा रही हैं। इसके साथ ही नयी प्रौद्योगिक के उपयोग से कृषि में रोजगार के अवसरों की वृद्धि हुई हैं।

3. हरित क्रांति से कृषि उद्योग सम्बन्धों में मजबूती आयी हैं जिसके परिणाम स्वरूप पहले अग्र अनुबन्ध (Forward Linkage) के साथ–साथ अब पश्च अनुबंध (Back Linkage) भी क्रियाशील हो गये हैं।

4. हरित क्रांति से अभिज्ञान प्रसार के माध्यम से कृषि का विकास अन्य क्षेत्रों में होने की संभावना के साथ– साथ इससे ग्रामीण समृद्धि में वृद्धि हुयी हैं, इसके द्वितीयक एवं तृतीयक प्रभाव संभावित हैं।

7.6.2 नकारात्मक प्रभाव

हरित क्रांति के कुछ नकारात्मक पहलू भी हैं जिनका विवरण निम्नवत हैं।

1. हरित क्रांति में भारी पूँजी निवेश की आवश्यकता फलस्वरूप इसका लाभ बड़े कृषकों तक सीमित हैं क्योकि भारी पूँजी की छोटे व सीमान्त कृषक सहन नही कर सकते हैं।

2. राव (V.K.R.V. Rao) के अनुसार यह बात अब सर्वविदित हैं कि हरित क्रांति ने कृषकों के मध्य आर्थिक विषमता को व्यापक कर दिया।

3. हरित क्रांति से ग्रामीण क्षेत्रों में त्रिकोणीय संघर्ष का सृजन हुआ, जिससे बड़े व छोटे किसानों के बीच भू स्वामी एवं असामी के बीच तथा मालिक व मजदूर के बीच सदैव टकराहट की स्थिति बनी रही।

4. हरित क्रांति का प्रभाव कुछ खाद्यान फसलों, जैसे गेहूँ, चावल, मक्का, बाजरा आदि तक सीमित रहा हैं, वही दलहन, तिलहन, मुद्रादायिनी एवं चारा आदि की फसले इसके प्रभाव से वंचित रही हैं।

5. हरित क्रांति के कारण होने वाली कृषि समीकरण के फलस्वरूप बड़े पैमाने पर श्रम विस्थापन एवं बेरोजगारी के बढने की प्रबल सम्भावना हैं।

6. वर्तमान के अध्ययनों से पता चला है कि (लेस्टर ब्राउन व हालकेन की पुस्तक 'Full House' में की गयी भविष्यवाणी) सन् 2030 तक भारत को प्रतिवर्ष 4 करोड़ टन खाद्यान्न का आयात करना पडेगा जो 1966 के पूर्व के आयात का चार गुना होगा।

7. नये अध्ययनों से यह ज्ञात हुआ हैं कि हरित क्रांति के क्षेत्रों में प्रति हे0 उत्पादन या तो स्थिर रहा हैं अथवा उसमें गिरावट आ रही हैं। इन क्षेत्रों में भूगर्भ जल, रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों के अन्धाधुन प्रयोग से पर्यावरणीय प्रदूषण का खतरा बढ़ रहा हैं।

7.7.1 लवणीकरण नवीन बीजों में कई बार सिंचाई की आवश्यकता पड़ती हैं, विशेषकर पंजाब, हरियाणा तथा पश्चिम उत्तर प्रदेश में जहाँ वर्षा मात्र 60–65

सेमी0 होती हैं। सिंचाई के माध्यम से निरंतर आर्द्रता की आपूर्ति से मृदा में परिवर्तन आया हैं। लवणी तथा क्षारीय प्रभावित मृदा को पंजाब में कल्लया थूर, उत्तर प्रदेश में कल्लर। ऊसर अथवा रेह कहा जाता हैं। एक आकलन के अनुसार पंजाब तथा हरियाणा के कृषीय भूमि का लगभग 50 प्रतिशत घुलनशील लवणों से प्रभावित हुआ हैं। लवणता तथा क्षारीयता का हल गोबर तथा वनस्पतिक खाद का प्रयोग द्वारा फसल चक्र में दलहन की फसलों का चयन कर लिया जा सकता है।

लवण – सहनशील फसलें, जैसे टमाटर, पलक, जौ, घास, शत़ावर, चुकन्दर इत्यादि की खेती इस समस्या के समाधान में सहायता कर सकती हैं तथा भूमि की उर्वरता में सुधार ला सकती हैं।

7.7.2 मृदा अपरदन

हाल के वर्षों में कृषि भूमि के विस्तार के लिए बड़ी मात्रा में वृक्षों को काटा गया हैं फलस्वरूप मृदा अपरदन की बढ़ती गति के कारण न केवल कृषि क्षेत्रों को नुकसान पहुँचता हैं बल्कि उन क्षेत्रों पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता हैं जहाँ अपरदित मृदा का निक्षेपण होता हैं।

मृदा अपरदन की समस्या से निपटने का सर्वाधिक कारगर तरीका वनारोपड़ हैं। अवनालिकाओ का समतली करण किया जाना चाहिये। पहाड़ी क्षेत्रों में समोच्च रेखीए जुताई के द्वारा भी मृदा अपरदन कम किया जा सकता है।

7.7.3 प्रदूषण

यदि रासायानिक खाद, कीटनाशकों तथा पीड़कनाशियों का अधिक मात्रा में उपयोग किया गया तो उच्च उत्पादक फसल जातियों से पैदावार अच्छी होती हैं। अधिक मात्रा में प्रयोग किये जाने पर थे निवेश उन सूक्ष्म जीवों को नष्ट कर देते हैं, जो मृदा की उर्वरता को कायम रखने के लिए अनिवार्य हैं। रासायनिक खादों की जगह हरी एवं गोबर की खाद के प्रयोग से मृदा प्रदूषण की समस्या को कम किया जा सकता हैं।

7.7.4 जलमग्नता

जलमग्न भूमि की समस्या अत्यधिक सिंचाई से जुड़ी हैं। पंजाब, हरियाणा तथा पश्चिमी उत्तर प्रदेश के नहर सिंचित क्षेत्र में यह एक गंभीर समस्या हैं। इसका सबसे महत्वपूर्ण उदाहरण राजस्थान के श्री गंगानगर, बीकानेर तथा जैसलमेर में स्थिति इंदिरा गाँधी नहर प्रणाली के चतुर्दिक क्षेत्रो में पाया जाता हैं जहाँ पहले मोटे अनाजों जैसे बाजरा, ज्वार, राई, दलहन, जौ, कपास, मूंगफली, ज्वार, चारा एवं सूरजमूखी की खेती होती थी किन्तु वर्तमान में वहाँ के लोग

चावल तथा गेहूँ की खेती करने लगे हैं। गर्मी तथा जाड़े के मौसम में इन क्षेत्रों की बार–बार सिंचाई के कारण काफी भूमि जलमग्न हो गयी हैं, विशेषकर नहर के दोनो ओर।

7.7.5 भौम जलस्तर का घटना

चावल तथा गेहूँ के नये बीजों को सिंचाई की अधिक आवश्यकता होती हैं। पंजाब तथा हरियाणा के कम वर्षा वाले क्षेत्रों में चावल तथा गेहूँ की फसल को कई बार सिंचाई की आवश्यकता पड़ती हैं इस पानी की आपूर्ति सिंचाई के द्वारा की जाती हैं, यह सिंचाई नलकूपों तथा पम्पिंग खेतो के द्वारा अधिक की जाती हैं। इसके कारण हरियाणा के पूर्वी जिलो में भौम जल स्तर नीचे चला गया हैं।

7.7.6 स्वास्थ्य के लिये खतरा

बड़ी मात्रा में कीटनाशकों, तथा रासायनिक खादों का प्रयोग स्वास्थ्य के लिये खतरनाक साबित हो रहा हैं। इनका सब्जियों, फलों तथा घासों पर प्रयोग स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हैं। भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद (AIMS) के अनुसार खाद्य, कीटनाशक तथा पीड़कनाशी के छिणकाव के कारण दूध तथा सब्जियों में जस्ता, ताबाँ, सासे के अंश पाए जाते हैं। पंजाब में कैंसर के रोगियों की संख्या में निरन्तर वृद्धि हुई हैं। धान तथा गेहूँ के पुआल/भूसा को खेत में जलाने से वायु प्रदूषण की समस्या बढ़ रही हैं, जिसका लोगों के स्वास्थ्य पर खराब असर पड़ रहा हैं।

राजस्थान तथा पंजाब के शुष्क तथा अर्द्धशुष्क क्षेत्रों के सिचिंत भाग में बड़ी मात्रा में मलेशिया के मामले देखे जाते हैं क्योकि अत्याधिक सिंचाई तथा नहर के किनारे जलाक्रांति के कारण मच्छरों के प्रजनन के लिए एक उपयुक्त स्थान बन जाता हैं।

7.8 द्वितीय हरित क्रांति (समस्या से समाधान की ओर)

भारत में कृषि उत्पादन धीमी, स्थिर तथा कुछ क्षेत्रों में ह्रासमान हैं। कृषि क्षेत्र में वर्तमान वृद्धि दर 4.5 प्रतिशत (2021–22) रही। इससे कृषि में तेजी हेतु नवीन कृषि क्रांति लाने की जरूरत हैं। दूसरी हरित क्रांति मुख्य रूप से भोजन की आवश्यकता और पृथ्वी पर बढ़ती जनसंख्या के भरण–पोषण की मांग को पूरा करने हेतु कृषि उत्पादन में एक परिवर्तन हैं। इसे खाद्य पदार्थों की बढ़ती कीमतों, और अन्य कारकों के बीच खाद्य पदार्थों की बढ़ती मांग के प्रत्युत्तर के तौर पर शुरू किया गया।

भारत में, जैसाकि प्रथम हरित क्रांति ने खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित किया चूंकि देश में भोजन की अत्यंत कमी थी। दूसरी हरित क्रांति का उद्देश्य निर्धनों

के लिए सतत् आजीविका का सृजन करना है और लाभकारी स्व–रोजगार के सृजन से निर्धनता उन्मूलन करना है। जहां प्रथम हरित क्रांति का उद्देश्य बेतहाशा उत्पादन करना था, दूसरी हरित क्रांति लोगों द्वारा उत्पादन को प्रोत्साहित करने का लक्ष्य रखती है।

दूसरी हरित क्रांति में फसल प्रतिरूप, विविधीकरण, पश्च–फसल हानियों को रोकना, सतत् संव्यवहार, मृदा एवं जल संरक्षण इत्यादि शामिल किया गया है। इसमें जैव उर्वरकों, जैव–कीटनाशी, एवं जैविक खेती को प्रोत्साहित करने का भी समावेश किया गया है। इसमें अवसंरचना, भण्डारण, और मूल्य–वर्द्धन कृषि संसाधन के सुधार के तत्व भी शामिल हैं।

दूसरी हरित क्रांति ने कृषि उत्पादन में बढ़ोत्तरी करते हुए लघु एवं सीमांत किसानों और भूमिहीन किसानों के लिए रोजगार सृजन पर बल दिया। जैसाकि इन परिवारों के पास अधिकतर बंजर एवं निम्न उर्वर भूमि है, जो सिंचाई से वंचित है, ऐसी भूमियों के बेहतर प्रयोग पर ध्यान दिया जाना चाहिए। जैसाकि ऐसी भूमियां उच्च पैदावार खाद्यान्न और नकदी फसल की गहन फसल के लिए उचित नहीं हैं, शुष्क भूमि बागवानी और एग्री–चारागाह को प्रमुखता दी जानी चाहिए। वृक्षारोपण की फसल प्रकृति के प्रतिकूल प्रभावों में भी बनी रहती है और किसी प्रकार का भारी नुकसान नहीं होता। वृक्ष की खेती पूरे वर्ष रोजगार प्रदान करती है और मृदा अपरदन और वर्षा जल बहाव को भी रोकती है। वृक्ष की खेती को प्रोत्साहन मृदा उर्वरता में भी वृद्धि करेगी और भौम जल स्तर में बढ़ोतरी करेगी। इसलिए, ऐसे कार्यक्रम जीवन गुणवत्ता में सुधार कर सकते हैं और पर्यावरण का संरक्षण करते हैं।

11वीं पंचवर्षीय योजना के दृष्टिकोण पत्र में इस प्रकार के समग्र ढांचे पर व्यापक रूप से प्रकाश डाला गया तथा कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए अग्रलिखित नीति का सुझाव दिया गया– (1) सिंचित क्षेत्र की वृद्धि दर को दुगुना करनाय (2) जल प्रबंधन में सुधार करना, वर्षा जल का संचयन तथा जल संभर विकासय (3) निम्नस्तरीय भूमि का पुनरुद्धार करना तथा मृदा गुणवत्ता पर ध्यान देनाय (4) प्रभावी विस्तार के माध्यम से ज्ञान के अंतर को पाटनाय (5) उच्च मूल्य वाली उपज, फल, सब्जियां, फूल, जड़ी–बूटी, मसाले, औषधीय पौधे, बांस, बायो–डीजल जैसी विभिन्न प्रकार की फसलें उगाना । किंतु ऐसा करते समय खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित किये जाने के लिए पर्याप्त उपाय किये जाने चाहिएय (6) पशुपालन और मत्स्यपालन को बढ़ावा देनाय (7) वहनीय दरों पर आसान ऋण उपलब्ध करानाय और (8) प्रोत्साहन ढांचा और बाजारों की कार्यप्रणाली को सुधारनाय (9) कृषि सुधार संबंधी मुद्दों पर फिर से ध्यान देना ।

दूसरी हरित क्रांति को पूरी तरह से नवीन पद्धति और समग्र तौर पर प्रौद्योगिकियों के नए समुच्चय पर चलाए जाने की आवश्यकता है। जलवायु

परिवर्तन, न केवल भारत पर अपितु पूरे विश्व पर अपना शिकंजा कस रहा है और खाद्य आपूर्ति को खतरा पैदा कर रहा है। कृषि के लिए अपरिहार्य दुर्लभ प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण कभी भी अधिक महत्वपूर्ण नहीं रहा।

'यथार्थ कृषि' की नई पद्धति मुख्य समाधान हो सकती है। हरित क्रांति के संदर्भ में अब यह स्वीकार किया जाने लगा है कि बीज–पानी–उर्वरक तकनीक पर आधारित यह व्यवस्था अपने चरम बिंदु पर पहुंच गई है एवं उत्पादकता में और अधिक वृद्धि कर पाना अब इस तकनीक से संभव नहीं होगा। इसके साथ ही हरित क्रांति के पर्यावरण पर प्रभावों को देखते हुए भी उत्पादकता वृद्धि के वैकल्पिक मार्गों की खोज की जा रही है। इसी का परिणाम है यथार्थ कृषि ।

यथार्थ कृषि में मृदा–प्रबंधन, किस्म संवर्द्धन, जल प्रबंधन, समेकित कीट नियंत्रण, टिशू कल्चर, जेनेटिक इंजीनियरिंग एवं समेकित बीज प्रबंधन जैसे विभिन्न विषयों के समन्वय के माध्यम से कृषि कार्य किया जाता है। यथार्थ कृषि विधि भूमि व जल के वैज्ञानिक आयोजन पर आधारित होती है जिसके अंतर्गत प्रकृति की सेवाओं व प्राकृतिक पूंजी स्टॉक पर एक साथ ध्यान दिया जाता है। प्राकृतिक पूंजी स्टॉक में मिट्टी व मिट्टी के पोषक तत्व, जैव–विविधता, जल, खनिज, वन व सागर इत्यादि आते हैं। प्रकृति की सेवाओं में जल–चक्र, पोषण–चक्र कृषि–वानिकी इत्यादि आते हैं।

यथार्थ कृषि के अंतर्गत कृषि विज्ञान, मृदा विज्ञान, कीट विज्ञान, मौसम विज्ञान, पादप क्रिया विज्ञान, पादप रोग विज्ञान, पारिस्थितिकी विज्ञान व अर्थशास्त्र इत्यादि क्षेत्रों के अनुसंधान कार्यों से लाभ उठाया जाता है। भविष्य में मानव की मूलभूत आवश्यकताओं को, पर्यावरण को बिना क्षति पहुंचाये पूरा करने की दिशा में यथार्थ कृषि आशा की किरण है। वर्तमान बीज– जल–उर्वरक आधारित तकनीक संवहनीय विकास की दिशा में नहीं ले जाती

कुछ ऐसे महत्वपूर्ण मुद्दे हैं जिन पर दूसरी हरित क्रांति के दौरान विचार किए जाने की आवश्यकता है–

(अ) जैसाकि बढ़ती जनसंख्या के भरण–पोषण के लिए भूमि की उत्पादकता बढ़ाए जाने की आवश्यकता है, यह सुझाव दिया गया कि बंजर भूमि को सड़क निर्माण, कृषि–संसाधन उद्योगों और भण्डारण सुविधाओं के निर्माण हेतु उपयोग किया जाए, जो कृषि उत्पाद के संसाधन और बिक्री के लिए आवश्यक हैं। इसके अलावा मौजूदा खेती तकनीकियों के परिणामस्वरूप पानी की बर्बादी होती है। भारत को जल संरक्षण प्रौद्योगिकियों को अपनाने की आवश्यकता है, जैसाकि कई विकसित देश कर रहे हैं। यह कम पानी वाले कृषि क्षेत्रों में मदद करेगा, और पर्यावरणीय रूप से अधिक सतत् होगा।

(ब) मनोवृत्ति में परिवर्तनः किसान परम्परागत रूप से यह विश्वास करते हैं कि उनकी भूमिका फसल उगाने तक सीमित है। उनकी मनोवृत्ति में परिवर्तन

उन्हें यह समझने या महसूस करने में मदद करेगा कि उनके कार्य का क्षेत्र अनाज उत्पादन से खाद्य संसाधन और विपणन तक बढ़ सकता है। इसके लिए, सेवाओं में नई प्रौद्योगिकियों पर जोर देना चाहिए।

द्वितीय हरित क्रांति तत्व निम्नवत है

1. भारत जैसे जनाधिक्य वाले देश में हरित क्रांति के अन्तर्गत ऐसी प्रौद्योगिकी के अपनाये जाने की आवश्यकता है जिसकी लागत कम हो तथा जिससे श्रम का विस्थापन न्यूनतम संभव हो सके।
2. हरित क्रांति को कृषि के नये क्षेत्रों में लागू करने की आवश्यकता हैं। अर्थात् पारिस्थितिकीय विशेषताओं के आधार पर नये बीजों का अनुसंधान कर इसे मोटे अनाजों, दलहन, तिलहन, मुद्रादायिनी एवं चारा आदि फसलों में लोकप्रिय बनाने की आवश्यकता हैं।
3. हरित क्रांति को अत्याधिक प्रभावी बनाने के लिए समूचे देश को कृषि जलवायु प्रदेशों (Agro – Climatic regions) में बाँटकर तदानुसार कृषि योजनाओं को बनाने और क्रियान्वयन करने की आवश्यकता हैं।
4. हरित क्रांति को कारगर बनाने के लिये राइजोबियम, नील हरित शैवाल आदि जैव रसायनों का प्रयोग किया जाना चाहियें।
5. जल संसाधनों के संरक्षण की आवश्यकता को देखते हुए सिंचाई एवं जल प्रबन्धन की नई विकास विधि को अपनाये जाने की जरूरत हैं ऐसे में स्प्रिकिंग सिंचाई, ड्रिप सिंचाई आदि की विधियों से जल का संरक्षण किया जा सकता हैं।
6. ऐसी सहकारी समितियों का गठन किया जाना चाहियें जिससे छोटे एव सीमान्त कृषकों को उन्नत बीज, उर्वरक, मशीन आदि क्रय करने हेतु कम ब्याज दर पर ऋण उपलब्ध हो सके। किराये पर ट्रैक्टर, हारवेस्टर आदि की उपलाब्धि छोटे किसानों के लिए लाभकारी सिद्ध होगा।
7. कृषि उत्पादों के मूल्य की एक सन्तुलित नीति होनी चाहिये जिससे कृषकों को कृषि उत्पादों का समुचित लाभ मिल सकें तथा वे कृषि में अधिकाधिक निवेश हेतु प्रोत्साहित हो सके।

7.9 भारत में हरित क्रांति के तहत योजनाएं

प्रधान मंत्री ने 2017 से 2020 तक कृषि क्षेत्र में छाता योजना हरित क्रांति– कृषोन्नति योजना (Umbrella Scheme Green Revolution – 'Krishonnati Yojana')) का समर्थन किया, 33,269.976 करोड़ रुपये के केंद्रीय हिस्से के साथ। अम्ब्रेला योजना हरित विद्रोह कृष्णनति योजना (Umbrella plan Green Insurgency Krishonnati Yojana) में इसके तहत 11 योजनाएं शामिल हैं और योजनाओं के इस भार से कृषि व्यवसाय और एकीकृत क्षेत्र को तार्किक

और व्यापक तरीके से बढ़ावा देने की उम्मीद है ताकि उपयोगिता, सृजन, और उपज से बेहतर लाभ का विस्तार करके किसानों के वेतन का निर्माण किया जा सके। निर्माण ढांचा, बागवानी और भागीदारी उपज के निर्माण और प्रदर्शन के खर्च को कम करना।

हरित क्रांति के तहत अम्ब्रेला योजनाओं के लिए आवश्यक 11 योजनाएं निम्नलिखित हैं–

7.9.1 बागवानी के एकीकृत विकास के लिए मिशन या MIDH– यह कृषि क्षेत्रों के व्यापक विकास को आगे बढ़ाने, क्षेत्र के उत्पादन में वृद्धि, पोषण सुरक्षा पर काम करने और परिवार के खेतों को आय में वृद्धि करने की योजना बना रहा है।

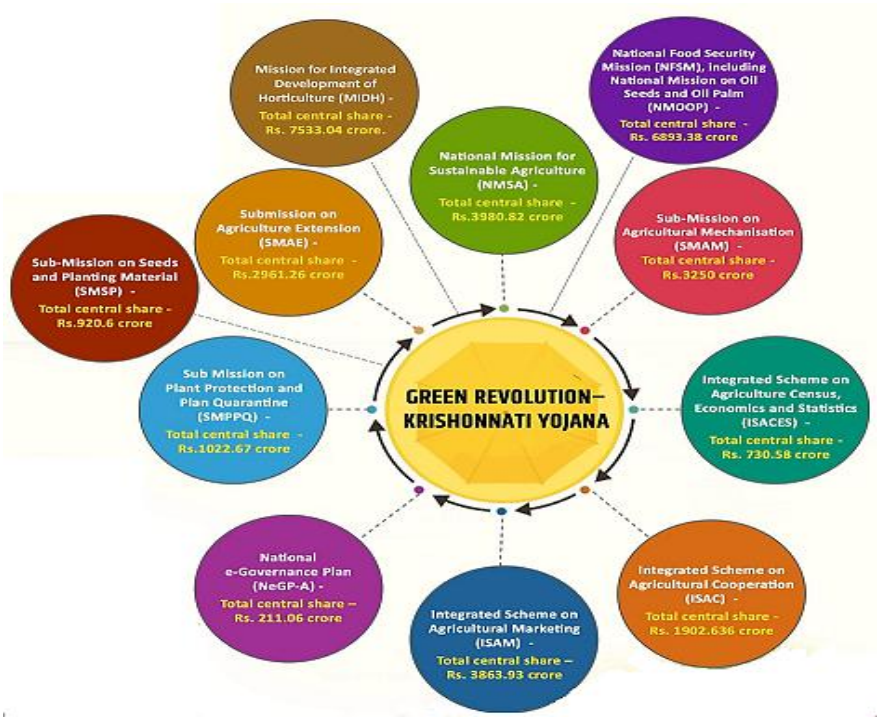

7.9.2 कृषि विस्तार पर प्रस्तुतीकरण

राज्य सरकारों, स्थानीय निकायों आदि के निरंतर विस्तार तंत्र को मजबूत करने के लिए और इसी तरह खाद्य सुरक्षा और किसानों की वित्तीय मजबूती को पूरा करने के लिए, विभिन्न भागीदारों के बीच सफल लिंकेज और सहकारी ऊर्जा का उत्पादन करने के लिए, कार्यक्रम व्यवस्था और निष्पादन उपकरण को व्यवस्थित करने के लिए, एचआरडी मध्यस्थता का समर्थन करना, इलेक्ट्रॉनिक और प्रिंट मीडिया, रिलेशनल पत्राचार, और आईसीटी उपकरणों और इसी तरह के अपरिहार्य और अभिनव उपयोग को आगे बढ़ाता है।

7.9.3 सतत कृषि के लिए राष्ट्रीय मिशन

लक्ष्य आर्थिक कृषि प्रथाओं को आगे बढ़ाना है जो प्रमुख कृषि विज्ञान के लिए उपयुक्त हैं जो खेती को शामिल करने पर ध्यान केंद्रित कर रहे हैं, अधिकारियों की मिट्टी को अच्छी तरह से फिट कर रहे हैं, और संपत्ति संरक्षण नवाचार को समन्वयित कर रहे हैं।

7.9.4 बीज और रोपण सामग्री पर उप–मिशन

नींव को मजबूत और आधुनिक बनाने के लिए मूल्य बीजों के उत्पादन का विस्तार करने, खेत से बचाए गए बीजों की प्रकृति में बदलाव और एसआरआर (त्त) बढ़ाने, बीज दोहराव श्रृंखला को मजबूत करने और बीज उत्पादन, परीक्षण, प्रसंस्करण आदि में नई तकनीकों और प्रगति को आगे बढ़ाने का इरादा है। बीज उत्पादन, गुणवत्ता, भंडारण और प्रमाणन आदि के लिए।

7.9.5 कृषि मशीनीकरण पर उप–मिशन

रैंच ऑटोमेशन (Ranch Automation) के दायरे को बहुत कम और नगण्य रैंचरों तक विस्तारित करने के लिए और उन जिलों में जहां होमस्टेड पावर (Homestead_power) की पहुंच कम है, कस्टम हायरिंग सेंटर्स (Custom Hiring Centers) को तरक्की करने के लिए, छोटे जोत और व्यक्तिगत स्वामित्व के महत्वपूर्ण खर्च के कारण उभरती पैमाने की विरोधी अर्थव्यवस्थाओं को संतुलित करने के लिए, उच्च तकनीक और उच्च–सम्मान वाले रैंच गियर (ranch gear) के लिए केंद्र बनाएं, निर्माण अभ्यासों को दिखाने और सीमित करने के माध्यम से भागीदारों के बीच सचेतन बनाने के लिए, और देश भर में पाए जाने वाले परीक्षण समुदायों में निष्पादन परीक्षण और मान्यता की गारंटी दें।

7.9.6 पौध संरक्षण और योजना संगरोध

इस योजना का उद्देश्य दुर्भाग्य को कीड़ों, कीटों, खरपतवारों आदि से फसल की गुणवत्ता और उपज तक सीमित करना है, हमारी बागवानी जैव–सुरक्षा को बाहरी प्रजातियों के आक्रमण और प्रसार से बचाने के लिए, भारतीय कृषि के किराए के साथ काम करना है। विश्वव्यापी व्यापार क्षेत्रों के लिए वस्तु, और महान ग्रामीण प्रथाओं को आगे बढ़ाने के लिए, विशेष रूप से संयंत्र बीमा पद्धतियों और प्रक्रियाओं से संबंधित।

7.9.7 कृषि जनगणना, अर्थशास्त्र और सांख्यिकी पर एकीकृत योजना

बागवानी गणना का प्रयास करने के लिए, देश के कृषि–मौद्रिक मुद्दों पर केंद्रित अनुसंधान को शामिल करें, प्रमुख उपज, स्टोर सभाओं, स्टूडियो और

पाठ्यक्रमों के विकास के खर्च का अध्ययन करें, जिसमें प्रसिद्ध ग्रामीण शोधकर्ताओं, व्यापार विश्लेषकों, विशेषज्ञों का नेतृत्व करने के लिए कागजात लाने के लिए शामिल हैं। क्षणिक जांच, कृषि अंतर्दृष्टि दर्शन को और विकसित करना और फसल की स्थिति और फसल उत्पादन पर बुवाई से लेकर कटाई तक विभिन्न स्तरीय डेटा ढांचा बनाना।

7.9.8 राष्ट्रीय ई–शासन योजना कृषि

राष्ट्रीय ई–गवर्नेंस योजना में रैंचर संचालित और प्रशासन आधारित परियोजनाओं को लाने की उम्मीद हैय फसल चक्र के दौरान डेटा और प्रशासन तक किसानों की पहुंच को और विकसित करना और वृद्धि प्रशासन के दायरे और प्रभाव को उन्नत करनाय केंद्र और राज्यों के मौजूदा आईसीटी अभियानों का विस्तार, सुधार और समन्वय करनाय किसानों को उनकी बागवानी दक्षता बढ़ाने के लिए उपयुक्त और लागू डेटा देकर परियोजनाओं की दक्षता और पर्याप्तता में सुधार करना।

7.9.9 राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन या NFSM

ठसमें NMOOP– तिलहन और तेल वृक्ष पर राष्ट्रीय मिशन शामिल है। इसे गेहूं की दालों, चावल, मोटे अनाज और वाणिज्यिक फसलों के उत्पादन, दक्षता उन्नयन और उपयुक्त तरीके से क्षेत्र के विस्तार, घरेलू स्तर की अर्थव्यवस्था में सुधार, मिट्टी की समृद्धि और एकल खेत स्तर पर उपयोगिता को फिर से स्थापित करने के लिए पेश किया गया था।

7.9.10 कृषि विपणन पर एकीकृत योजना

इस योजना का उद्देश्य कृषि विपणन बुनियादी ढांचे का विकास करना हैय कृषि विपणन बुनियादी ढांचे में नवीन तकनीकों और प्रतिस्पर्धी विकल्पों को बढ़ावा देनाय कृषि उपज के ग्रेडिंग, मानकीकरण और गुणवत्ता प्रमाणन के लिए बुनियादी सुविधाएं प्रदान करनाय एक राष्ट्रव्यापी विपणन सूचना नेटवर्क स्थापित करने के लिएय कृषि वस्तुओं आदि में अखिल भारतीय व्यापार को सुविधाजनक बनाने के लिए एक आम ऑनलाइन बाजार मंच के माध्यम से बाजारों को एकीकृत करना।

7.7.11 कृषि सहयोग पर एकीकृत योजना

इसका उद्देश्य सहकारी समितियों की आर्थिक स्थिति में सुधार के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करना, क्षेत्रीय असंतुलन को दूर करना, कृषि प्रसंस्करण, भंडारण, विपणन , कम्प्यूटरीकरण और कमजोर वर्ग के कार्यक्रमों में सहकारी विकास को गति देना हैय विकेंद्रीकृत बुनकरों को उचित दरों पर गुणवत्ता वाले

धागे की आपूर्ति सुनिश्चित करना और कपास उत्पादकों को मूल्यवर्धन के माध्यम से उनकी उपज के लिए लाभकारी मूल्य प्राप्त करने में मदद करना।

7.10 हरित क्रांति से जीन क्रांति तक

हम जानते हैं कि जीन क्रांति प्रौद्योगिकी से सम्बद्ध उत्पादकता में बढ़ोत्तरी 1990 के दशक के दौरान काम होनी प्रारंभ हो गई थी ,इस संदर्भ में कृषि उत्पादकता बढ़ाने के लिए अपेक्षित संभावना प्रदान करने तथा खाद्य सुरक्षा की समस्या हल करने के लिए जैव प्रौद्योगिकी की संकल्पना की गई है । प्रौद्योगिकी ने 1980 के दशक के प्रारंभ में गति प्राप्त की जब विशाल निगमों ने पराजैविक फसलें विकसित करने के लिए अनुसंधान और विकास के लिए भारी निवेश करना प्रारंभ किया।

जननिक रूप से रूपांतरित बीजों के प्रयोग की भूमिका उत्पादकता में आश्चर्यजनक वृद्धि करने के वचन की पूर्ति माना गया था तथा एक ओर किसानों को कृषि से अपनी आय बढ़ाने के सहायक अन्य संसाधन तो दूसरी ओर अधिक सस्ता और गुणवत्ता की खाद्य सामग्री मुहैया कर उपभोक्ताओं के लिए लाभ कर मन गया। जैव प्रद्योगिकी केंद्रित तरीकों के प्रयोग को भी पैमाना निरपेक्ष समझा गया था क्योंकि यह बीजों पर फोकस करता है, रासायनिक , उर्वरकों और महगीं फार्म मशीनरी पर नहीं । बीजों को अधिक उत्पादनकारी , अधिक कीटनाशी सह और सभी श्रेणियों के फार्मों और सभी कृषि क्षेत्रों के लिए उपयुक्त समझा गया है। परंतु भारतीय कृषि में जीन प्रौद्योगिकी का अंगीकरण अभी वाद विवाद और चर्चा का विषय है क्योंकि पादपों , जंतुओं और मानव जीवन पर उसके सकारात्मक और नकारात्मक प्रभाओं का पूरी तरह से परीक्षण अभी नहीं हुआ है । यद्यपि एक ओर बीज प्रौद्योगिकी के पर्यावरणीय, पारिस्थतिकीय और स्वास्थ्य संबंधी परिणामों को उसके आर्थिक लाभों की अपेक्षा अधिक महत्व दिया गया है तो दूसरी ओर बहुत से ऐसे मुद्दे हैं जिन्होंने अनुसंधानकर्ताओं और सक्रियतावादियों का ध्यान आकर्षित किया है। उनमें प्रमुख हैं, नैतिक, सुरक्षा और स्वामित्व मुद्दे। उसे अपनाने का सबसे बड़े खतरों में एक यह है कि आधारभूत मानवीय आवश्यकता (भोजन), पर कुछ बहुराष्ट्रीय जैव बीजों के प्रजनक कंपनियों का एकाधिकार नियंत्रण हो जाएगा। इस प्रकार यद्यपि बीज प्रौद्योगिकी में भारतीय कृषि में क्रांति लाने की विपुल संभावना है परंतु बीज प्रौद्योगिकी महंगी और अपने स्वरूप में स्वामित्व होने के कारण संदेह है कि प्रौद्योगिकी संसाधन सम्पन्न किसानों के लिए अधिक उपयुक्त हो सकती है और सीमांत और छोटे किसानों की बहुत बड़ी संख्या , विशेषकर पिछड़े कृषि क्षेत्रों में इसके लाभ प्राप्त करने से छूट जाते हैं। परंतु हमें स्मरण करना चाहिए कि जीन क्रांति आधारित प्रौद्योगिकी भी छोटे और सीमांत किसानों की तुलना में केवल धनी किसानों के अनुकूल है। इसलिए हरित क्रांति और जीन क्रांति के बीच आधारभूत अंतर है, ऐसा कहा जा सकता है कि

हरित क्रांति मुख्यतः सार्वजनिक क्षेत्र प्रेरित थी तो 'जीन क्रांति का आधार निजी क्षेत्र रहेगा ।

7.11 सारांश

संक्षेप में कहा जाय तो भारत में हरित क्रांति का प्रभाव मिश्रित रहा हैं। एक ओर जहाँ पंजाब, हरियाणा, व पश्चिमी उत्तर प्रदेश के बडे किसानों को अत्याधिक लाभ मिला हैं वही दूसरी तरफ पूर्वोत्तर भारत में यह लगभग अनुपस्थित रहा हैं। निश्चित ही एक तरफ जहाँ 1965–66 में हुई खाद्यान्न की कमी को 1971–72 में खाद्यान्न आत्मनिर्भरता प्राप्त हुई, वही दूसरी तरफ इसके क्षेत्र में पर्यावरणीय समस्याओं सामाजिक तथा आर्थिक असमानताओं को भी जन्म दिया। इसीलिये उपर्युक्त विशेषताओं के आधार पर ही हाल में ''दूसरी हरित क्रांति'' की आवश्यकता पर चर्चा आरम्भ हुई हैं जो अधिक समावेशी स्वरूप से खाद्य सुरक्षा/ असुरक्षा की समस्या का समाधान करने के लिये उपयुक्त हो, अर्थात् प्रक्रिया के मुख्य घटकों के रूप में छोटे सीमांत किसानों और वर्षा प्रधान तथा शुष्क क्षेत्रो पर बल सहित कृषि उत्पादकता बढ़ाने का आग्रह करती हों।

7.12 शब्द सूची

भूमि उपयोग	Land Use
कृषि प्रदेश	Agriculture region
कृषि शाख	Agriculture credit
कृषि आदान	Agriculture input
कृषि उत्पादकता	Agriculture productvity
कृषि जलवायु प्रदेश	Agro climatic region
कृषि वानिकी	Agroforestry
कृषि पारिस्थितिक प्रदेश	Agro ecological region

शब्दार्थ

- हरित क्रांति– इसका संबंध नई कृषि प्रौद्योगिकी से हैं जिसका प्रयोग 1960 के दशक में खाद्यान्नों की आपूर्ति हेतु किया गया।
- सघन कृषि क्षेत्र कार्यक्रम (IAAP - 1961) – दिये गये दोनो ही कार्यक्रमों द्वारा कृषि अनुसंधान और विकास,व शिक्षा और विस्तार सेवाओं पर भारी निवेश किया गया परिणाम

- सघन कृषि जिला कार्यक्रम (IADP-1964)–स्वरूप भारतीय कृषि मे उत्पादकता और उत्पादन में उच्च वृद्धि को सम्भव बनाया।
- उन्नत बीजों के प्रयोग का कार्यक्रम (HYVP) – ये विशेष बीज हैं जो हरित क्रांति प्रौद्योगिकी अनुप्रयोग क्षेत्रों में प्रयुक्त किये गये थे। इन बीजों से कृषि उत्पाद की उत्पादकता और किसानों की आय बढ सकी।
- लवणीकरण – अत्याधिक सिंचाई के कारण मृदा का नमकीन हो जाना लवणीकरण कहलाता हैं।

7.13 स्वमुल्यांकन प्रश्न एवं आदर्श उत्तर

1. वैश्विक संदर्भ में हरित क्रांति के जनक कौन थे?

(अ) राजकृष्णा(ब) M.S. स्वामीनाथन(स) नॉर्मन बोरलाग(द) इनमें से कोई नही

2. निम्नलिखित में से कौन हरित क्रांति को संदर्भित करता हैं?

(अ) हरी खाद का उपयोग (ब) फसलों का उच्च उत्पादन
(स) हरित वनस्पत्ति (द) उच्च पैदावार विविधता कार्यक्रम

3. हरित क्रांति के बुनियादी तत्व हैं–

(अ) खेती के क्षेत्रों का विस्तार (ब) मौजूदा खेती की दोहरी फसल
(स) हरित क्रांति की विधि में HYVP बीजों का उपयोग (द) उपरोक्त सभी।

4. किसने भारत में कृषि उत्पादन बढ़ाने हेतु 'सदाबहार क्रांति' शब्द का प्रयोग किया।

(अ) M.S. स्वामीनाथन (ब) नार्मन बोरलाग
(स) राजकृष्णा (द) आर0के0वी0राव

5. द्वितीय हरित क्रांति का उद्देश्य किन फसलों के उत्पादन के लिए था।

(अ) चावल के उत्पादन के लिए। (ब) दलहन के उत्पादन के लिये।
(स) तिलहन के उत्पादन के लिए। (द) इनमें से सभी के लिये।

6. हरित क्रांति की शुरूआत किस पंचवर्षीय योजना के दौरान की गई थी?

(अ) प्रथम (ब) द्वितीय (स) तृतीय (द) चतुर्थ

आदर्श उत्तर(1) स (2) द (3) द (4) अ (5) द (6) स

7.14 सन्दर्भ / उपयोगी पुस्तकें

1. प्रो.आर.सी. तिवारी – भारत का भूगोल, प्रवालिका पब्लिकेशन।
2. डॉ. अलका गौतम – भारत का वृहद् भूगोल, शारदा पुस्तक भवन प्रयागराज।
3. प्रोफेसर माजिद हुसैन– भारत का भूगोल, मैग्रा हिल।
4. Jagdish Singh, India : A Comprehensive and systematic Geography. Gyanodaya Publication Grokhpur.
5. Singh R.L. – India : A Regional Geography, N.G.S.I. Grokhpur
6. Nag, P. and Sengupta, S : Geography , New Delhi.
7. Ford Foundation (1959 : Report on Indian's Food crisis and step to meet It New Delhi : Ministry of food and agriculture and Ministry of community Developement.

7.13 अभ्यास प्रश्न (सत्रान्त परीक्षा की तैयारी हेतु)

- स्वतंत्रोत्तर देश में उत्पन्न खाद्य संकट को किस प्रकार दूर किया गया?
- हरित क्रांति का भारत में किस प्रकार प्रचार–प्रसार किया गया?
- हरित क्रांति के ऐतिहासिक संदर्भ की एक संक्षिप्त व्याख्या प्रस्तुत कीजिये।
- हरित क्रांति के सकारात्मक व नकारात्मक पहलुओं की व्याख्या कीजिये।
- हरित क्रांति के पर्यावरणीय प्रभाव को महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं के माध्यम से समझाइये।
- द्वितीय हरित क्रांति से आप क्या समझते है? समझाइयें

नोटः इस इकाई का अध्ययन कर अभ्यास प्रश्नों के उत्तर स्वंय लिखिये।

MAGO-102 भारत का भूगोल

इकाई–8 पर्यावरणीय कृषि, भारत में खाद्यान्न सुरक्षा, भारत की नीति

इकाई रूपरेखा–

8.1 प्रस्तावना
8.2 उद्देश्य
8.3 पर्यावरण कृषि
8.4 पर्यावरणीय कृषि का विकास
8.5 खाद्य सुरक्षा
5.6 खाद्य सुरक्षा के लिए कार्यक्रम एवं नीतियाँ
8.7 खाद्य सुरक्षा के लिए भावी रणनीतियाँ
8.8 राष्ट्रीय कृषि नीति
8.9 सारांश
8.10 शब्द सूची
8.11 परीक्षोपयोगी प्रश्न
8.12 महत्वपूर्ण पुस्तकें/संदर्भ
8.13 अभ्यास प्रश्न

8.1 प्रस्तावना–

भारत भूगोल के इस इकाई के अन्तर्गत आप पर्यावरण कृषि, पर्यावरण कृषि का विकास, खाद्य सुरक्षा, खाद्य सुरक्षा के लिए कार्यक्रम एवं नीतियाँ, खाद्य सुरक्षा के लिए भावी रणनीतियाँ, राष्ट्रीय कृषि नीति तथा उसके प्रमुख उद्देश्य का अध्ययन करेंगे। पर्यावरण कृषि के अन्तर्गत पर्यावरण कृषि क्या होती है, पर्यावरण कृषि की विशेषता, पर्यावरण कृषि का विकास कैसे सम्भव हो सकता है। खाद्य सुरक्षा में इसका अर्थ, विशेषता, भारत में इसका योगदान, खा़द्य सुरक्षा के कार्यक्रम एवं नीति में अन्त्योदय अन्य योजना, अन्नपूर्णा योजना तथा मिड–डे– मिल जैसी योजना की कमियाँ एवं लाभ, खाद्य सुरक्षा को आने वाले दिनों एवं संकट के दिनों के लिए सुरक्षित रखने के लिए रणनीतिया, खाद्य सुरक्षा को कैसे बढ़ाया जा सकता है। राष्ट्रीय कृषि नीति के अन्तर्गत नई कृषि नीति तथा मुख्य उद्देश्य को आप समझ पायेंगे।

8.2 उद्देश्य–

भारत भूगोल के इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप–

- पर्यावरण कृषि, अर्थ एवं विशेषता को समझ सकेंगे।
- खाद्य सुरक्षा अर्थ, विशेषता तथा खाद्य सुरक्षा को समझ सकेंगे।
- खाद्य सुरक्षा के कार्यक्रमों एवं नीतियों को समझ सकेंगे।
- राष्ट्रीय कृषि नीति एवं प्रमुख उद्देश्यों को समझ सकेंगे।

8.3 पर्यावरण कृषि–

इसे जैव कृषि भी कहते हैं। पर्यावरण कृषि से आशय ऐसी कृषि प्रणाली से है जो पर्यावरण सम्पदा को नुकसान पहुंचाये बिना हमेशा चलता रहे। इस कृषि व्यवस्था में रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के स्थान पर पर्यावरण अनुकूलित जैव उर्वरकों तथा कीटनाशकों को प्राथमिकता दी जाती है। इससे लोगों से पर्यावरणीय समस्या कम उत्पन्न होती है। इसमें लागत अधिक तो उत्पादन अधिक तथा कम लागत तो कम उत्पादन का विकल्प होता हैं यह खेती पशुपालन के माध्यम से होती है। इस कृषि का मूल ध्येय प्रकृति से उसकी सामर्थ्य तक उत्पादन लेना, प्रकृति की स्वाभाविक गतिविधि में न्यूनतम हस्तक्षेप करना, भूमि के क्षयित हुए पोषक तत्वों को प्राकृति पोषकों से ही लौटाना है। इसके अलावा पर्यावरण की रक्षा करना, मिट्टी के क्षरण को कम करना, प्रदूषण को कम करना, स्वास्थ्य की सुदृढ़ स्थिति को बढ़ावा देना, मृदा के भीतर जैविक गतिविधि को दीर्घकाल तक बनाये रखना, जैविक विविधता को बनाए रखना, चक्रीय सामग्री और संसाधन उद्यम को बनाये रखना, पशुधन व्यवस्था को बनाये रखना तथा अक्षय संसाधनों का उपयोग। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि पर्यावरण कृषि प्रणाली का क्रियान्वयन पारिस्थितिक तत्वों से होता हैं इसमें आधुनिक कृषि प्रौद्योगिकी तथा परम्परागत कृषि प्रौद्योगिकीय का सम्मिलित रूप होता हैं इसी कारण इसको जहां एक तरफ टीशू कल्चर के उपयोग की बात कही गई है वहीं दूसरी तरफ वर्मी कम्पोस्ट, कीटनाशक के रूप में नीम खाद के उपयोग एवं फसल चक्र पर भी जोर दिया जाता है। अर्थात आधुनिक विधियों एवं यंत्रों के प्रयोग के साथ–साथ परम्परागत पर्यावरण अनुकूल उर्वरकों एवं दवाओं पर जोर दिया जाता है ताकि पर्यावरण को कम प्रदूषित, कम ह्रास करके तथा प्राकृतिक संसाधनों का कम दोहन करके अधिक से अधिक उत्पादन किया जा सके।

जापान में इस कृषि को बहुत महत्व दिया जाता है। यहां के एक संत वैज्ञानिक जिनका नाम मंसा फुकुओका है जिनको इस क्षेत्र में सराहनीय कार्य के लिए 1988 का मैगसेसे पुरस्कार प्रदान किया गया था। भारत जैसे विकासशील देश के लिए यह एक वरदान साबित होगा। इसके द्वारा न केवल कृषि लागत में कमी आयेगी बल्कि उत्पादन भी अधिक होगा तथा पर्यावरण अवनयन भी कम होगा, साथ ही भूमि संसाधन, मृदा क्षरण, जल संसाधन तथा मानव स्वास्थ्य को संरक्षित किया जा सकता है।

पर्यावरण में देखे गये कई परिवर्तन दीर्घकालिक है, जो समय के साथ धीरे–धीरे होते हैं। जैविक कृषि, कृषि पारिस्थितिकी तंत्र पर कृषि हस्तक्षेपों के माध्यम और दीर्घकालिक प्रभावों पर विचार करती है। इसका मुख्य उद्देश्य मृदा की उर्वरता या कीट समस्याओं को रोकने के लिए पारिस्थितिक संतुलन स्थापित करतु हुए भोजन का उत्पादन करना है। पेड़–पौधे मृदा में बदल जाने वाले तत्वों को बढ़ाने हेतु पोषक तत्व के रूप में कार्य करता है।

8.4 पर्यावरणीय कृषि का विकास–

मृदा प्रबन्धन किया जाना चाहिए क्योंकि फसल उत्पादन के बाद मृदा अपना पोषक तत्व एवं गुणवत्ता को खो देता है। मृदा की उर्वरता शक्ति या गुणवत्ता बढ़ाने हेतु जैविक कृषि में प्राकृतिक तत्वों का उपयोग करके किया जा सकता है। पशु अपशिष्टों में मौजूद वैक्टीरिया मृदा को अधिक उपजाऊ तथा उत्पादक बनाती है।

खरपतवारों का प्रबन्धन किया जाना चाहिए क्योंकि यह एक पौधा होता है। पर्यावरण कृषि के लिए खरपतवार पूर्ण रूप से हटाने के पक्षधर में है। खरपतवार को खाद के रूप में बदलकर जैविक उर्वरक बना कर उपयोग करने पर जोर देता है।

जहां हम केवल एक ही कृषि करते हैं वहां पर जैविक उर्वरकों तथा आधुनिक यंत्रों या विधियों का प्रयोग करके कई फसल उत्पादित कर सकते हैं। इससे बढ़ती मांग की आपूर्ति होगी तथा मृदा को सूक्ष्म जीवों का उत्पादन भी होगा।

पर्यावरण खेती में कीटों की उपस्थिति का अनुमान लगाया जाना चाहिए, हानिकारक कीटों को नष्ट करने का प्राकृतिक उपाय किया जाना चाहिए, लाभकारी कीटों की वृद्धि हेतु वातावरण तैयार किया जाना चाहिए एवं कीटों को नष्ट करने हेतु नीम कीटनाशक का उपयोग किया जाना चाहिए।

पौधों की बिमारियां फसल उपज में कमी और कम गुणवत्ता के लिए जिम्मेदार है। मैक्रो एवं माइक्रोन्यूट्रिएंन्ट की बेहतर आपूर्ति और फसल चक्र को अपनाने के माध्यम से फसलों के बिमारियों में सुधार आयेगा। इस कृषि का सबसे बड़ा इनाम स्वस्थ्य मिट्टी है जो लाभकारी जीवों के साथ जीवित रहता है। ये स्वस्थ कीटाणुओं, कवक एवं हानिकारक बैक्टीरिया को बनाए रखता है जो बिमारियों का कारण बनते हैं।

इस प्रकार के कृषि में लागत अधिक होता है जिससे इस कृषि के लिए सस्ते मजदूर तथा सामग्री की आवश्यकता होती है। आधुनिक कृषि विधि का प्रशिक्षण एवं तकनीक मंहगे हैं जिससे पर्यावरणीय कृषि विकास में धीमी गति से वृद्धि कर रहे हैं।

8.5 खाद्य सुरक्षा–

अर्थ– ''एक स्वस्थ एवं क्रियाशील जीवन जीने हेतु आवश्यक भोजन समस्त जनसंख्या के लिए सुनिश्चित करना।''

खाद्य सुरक्षा के लिए उपयुक्त अर्थ को ध्यान में रखते हुए इसके जरूरी बातों को निम्न विन्दुओं द्वारा समझा जा सकता है।

- भोजन में सभी प्रकार के पोषक तत्व जो एक मानव शरीर के लिए परम आवश्यक हो उपलब्ध होना चाहिए।
- आवश्यक भोजन तक भौतिक एवं आर्थिक दोनों प्रकार की उपलब्धि होना चाहिए।
- खाद्य सुरक्षा के दायरे में समस्त जनसंख्या को लाया जाना चाहिए
- खाद्य सुरक्षा को दीर्घकाल के लिए सुरक्षित किया जाना चाहिए।

खाद्य सुरक्षा की मुख्य विशेषताएं–

1. यह भारत में ग्रामीण स्तर 75 प्रतिशत तथा शहरी स्तर पर 50 प्रतिशत जनसंख्या को बनाता है।
2. खाद्य सुरक्षा के भोजन को दो वर्ग में बांटा गया। प्रथम अन्त्योदय परिवार– यह अन्त्योदय अन्न योजना से जुड़ा परिवार है। द्वितीय प्राथमिक परिवार– जो राज्य सरकार द्वारा चिन्हित किये जायेंगे।
3. अंत्योदय परिवारों को रू0 3 प्रति किग्रा चावल तथा रूपया 2 प्रति किग्रा गेहूँ प्रति सदस्य 5 किग्रा दिया जाता है।
4. महिला जिसको प्रसव के बाद 6000 रूपया उसे खाद्य पोषण आहार के लिए जाता है।
5. खाद्यान्न वितरण गरीब परिवारों के लिए वरदान है।
6. देश में खाद्य सुरक्षा व्यवस्था को मजबूत करना।
7. गरीब परिवारों को उत्थान हेतु योजना।
8. देश के सभी व्यक्तियों को समान पोषण आहार उपलब्ध कराना।

खाद्य सुरक्षा से तात्पर्य खाद्यान्न की उपलब्धता तथा उस तक आम जनमानस की पहुंच से है। खाद्य सुरक्षा दो बातों पर निर्भर करती है– प्रथम भोजन की उपलब्धता द्वितीय लोगों की क्रय शक्ति। एक अनुमान के अनुसार विश्व में अत्याधिक गरीबी के कारण लगभग 852 मिलियन लोग भूखे हैं तथा लगभग 200 करोड़ लोग गरीबी के कारण खाद्य सुरक्षा से अछूते है। भारत एक कृषि प्रधान एवं यहां के अधिकांश लोग कषि में संलग्न है तथा खाद्यान्न के पर्याप्त उत्पादन एवं भण्डार के बावजूद लगभग 20 करोड़ जनसंख्या अल्प पोषित तथा 5 करोड़ जनसंख्या भुखमरी के कगार पर है। ग्रामीण क्षेत्र में कृषि श्रमिक मजदूर परिवार, भूमिहीन परिवार के लोग, नगरीय क्षेत्र में अनौपचारिक क्षेत्र के अनियत मजदूर परिवार, नगरीय क्षेत्र में घरहीन वाले व्यक्ति एवं जनजातीय परिवार के लोग आदि लोग खाद्य सुरक्षा की दृष्टि से सबसे कमजोर वर्ग के हैं जो इसमें शामिल है। देश में खाद्य सुरक्षा की दृष्टि से सबसे कमजोर राज्यों में झारखण्ड, बिहार, मध्य प्रदेश एवं उड़ीसा शामिल है। देश में अधिकांश राज्य में नगरीय एवं ग्रामीण स्तर पर खाद्य सुरक्षा में भिन्नता पायी जाती है। राजस्थान एवं

गुजरात के नगरीय क्षेत्र की अपेक्षा ग्रामीण क्षेत्र में खाद्य सुरक्षा अधिक असुरक्षित है।

भारत सरकार द्वारा खाद्य सुरक्षा हेतु भारतीय खाद्य निगम (FCI) की स्थापना 1964 में किया। भारतीय खाद्य निगम किसानों से न्यूनतम समर्थन मूल्य पर खाद्यान्नों का क्रय करता है। इस क्रम किये गये खाद्यान्न का भण्डारण करता है तथा इसको सार्वजनिक वितरण प्रणाली द्वारा वितरित करता है। सार्वजनिक वितरण प्रणाली की शुरुआत 1997 में किया गया था। इसके द्वारा उन परिवारों को खाद्यान्न आधे मूल्य पर दिया जाता है जो गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन कर हरे हैं। इसके अलावा देश में राष्ट्रीय रोजगार गारंटी योजना, काम के बदले अनाज कार्यक्रम एवं स्कूलों में दोपहर का भोजन आदि भी खाद्य सुरक्षा को बेहतर करने हेतु कदम उठाया गया है। ये सभी कार्यक्रम निर्धारित लक्ष्य को पूर्ण करने में सफल नहीं हो पाये हैं जिससे आज भी देश के दूर–दराज इलाके में भुखमरी एवं कुपोषण की समस्या विद्यमान है।

भारत में खाद्य सुरक्षा में वृद्धि हेतु खाद्यान्न पदार्थों का सही तरीके से सभी लोगों को उलब्ध होना चाहिए तथा खाद्यान्न वितरण प्रणाली में अभी और सुधार करने की जरूरत है जिसका कार्य निर्वहन का उत्तरदायित्व राज्य सरकार एवं ग्राम पंचायतों को दिया जाना उचित होगा। इसी भांति कृषि उत्पादन बढ़ाने, कृषि को विकास हेतु बनाने, कृषि बीमा एवं प्रति भूमिहीन परिवारों को अपना निर्वहन हेतु पूरे साल के लिए रोजगार उलब्ध कराना आवश्यक है।

8.6 खाद्य सुरक्षा के लिए कार्यक्रम एवं नीतियाँ–

भारत सरकार ने खाद्य सुरक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु बहुत–सी नीतियों एवं कार्यक्रमों को चलाया है। कुछ कार्यक्रम मजदूरी रोजगार बढ़ाकर आय क्षमता को बढ़ाना हैं अन्य के लिए रियायती दर पर खाद्यान्न देकर खाद्य खपत को बढ़ाना है। सार्वजनिक वितरण प्रणाली (PDS) स्कूल के बच्चों के लिए दोपहर का भोजन तथा काम के बदले अनाज कार्यक्रम आदि के अधीन विशिष्ट प्रयास किया गया, जिनमें से कुछ कार्यक्रम सर्वव्यापी हैं तो कुछ जन खास रह गया है।

सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अधीन प्रयास–

देश में खाद्य सुरक्षा कार्यक्रमों में इसका महत्वपूर्ण स्थान है। सार्वजनिक वितरण प्रणाली के मुख्य उद्देश्य निम्न है– गरीबों को वांछिक मूल्य पर माल प्रदान करना, खाद्यान्नों की मुक्त बाजार कीमत पर स्थिरता बनाये रखना, अधिशेष प्रदेशों से खाद्यान्न प्राप्त करना और जहां खाद्यान्न का अभाव है वहां पर वितरण करना तथा लाभकारी कीमतों पर किसानों से सीधे खाद्यान्न प्राप्त करना, कर व्यापारियों के अनुचित व्यवहार से घरेलू खाद्यान्न उत्पादकों का संरक्षण करना। केन्द्रीय और राज्य दोनों सरकारें खाद्यान्न की प्राप्ति और विवरण में भाग लें। खाद्यान्न की प्राप्ति, वितरण, भण्डार, परिवहन और आवश्यक वस्तुओं को राज्यों को भारी मात्रा में आवंटित करना केन्द्रिय सरकार का दायित्व है। देश भर में फैले उचित मूल्य दुकानों के नेटवर्क के माध्यम से उपभोक्ताओं को उसके वितरण का दायित्व राज्य सरकारों का है। केन्द्र द्वारा वस्तुएं केन्द्रीय निर्गम मूल्य (CIP) नाम की कीमत पर राज्य सरकारो को उपलब्ध की जाती है। सामान्यतः CIP खाधान्नो की आर्थिक लागत की अपेक्षा कम है जिसमें भण्डारण और परिवहन लागत भी शामिल है। आर्थिक लागत और CIP के बीच अन्तर ''उपभोक्ता साहाय्य'' कहलाता है जिसे केन्द्रिय सरकार वहन करती है।

खाद्य आधारित कल्याणकारी योजनाएं–

सरकार द्वारा गरीब परिवारों के लिए रियायती कीमत पर खाद्यान्न वितरण से सम्बन्धित अनेक कार्यक्रम या योजनाएं आरम्भ की गई है। इसमें ये प्रमुख है– वर्ष 2000 में आरम्भ की गई अंत्योदय अन्न योजना (AAY), वर्ष 2001 में अन्नपूर्णा योजना तथा 2001 में सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार (SGRY)। AAY का मुख्य उद्देश्य गरीब परिवारों में सबसे गरीब परिवारों को रियायती खाद्यान्न (रू0 3 में चावल तथा रू0 2 में गेहूं) देना है। अन्नपूर्णा योजना का उद्देश्य 65 वर्ष से अधिक आयु के गरीब नागरिकों को प्रति माह प्रति व्यक्ति 10 किग्रा0 खाद्यान्न देना है। SGRY रोजगार आधारित कार्यक्रम प्रारम्भ करता है जिसमें काम के बदले खाद्यान्न से दिया जाता था। एक और महत्वपूर्ण कार्यक्रम सरकारी स्कूलों में ''माध्यान्ह भोजन कार्यक्रम'' है जिसमें कक्षा 1 से लेकर कक्षा 8 तक के बच्चों को पका हुआ भोजन दिया जाता है। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य स्कूल में बच्चों को आने के लिए प्रोत्साहन देना है। इसके अलावा गरीब बच्चों में ऊर्जा और

प्रोटीन देना है। अतिरिक्त पोषक तत्व, जैसे–लौह, फालिक एसिड और विटामिन–ई अभिसरण की बृहत्तर योजना 'राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन में पूरक के रूप में गरीब बच्चों को भी दिये जाते हैं।'

राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन (NFSM)-

राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन फसल विकास योजना के रूप में 2007 में प्रारम्भ किया था, मिशन का प्रमुख उद्देश्य गेहूं, चावल तथा दलहन के उत्पादन में क्रमशः 8, 10 तथा 2 मिलियन टन की वृद्धि करना है। इस लक्ष्य की प्राप्ति ग्यारहवीं योजना की समाप्ति तक अर्थात् 2012 तक था। मिशन ने अतिरिक्त खाद्यान्न के 25 मिलियन टन का उत्पादन उत्पन्न लक्ष्य एक वर्ष पहले ही प्राप्त कर लिया है। मिशन की कार्य विधि में शामिल है– नई कृषि पद्धतियों का प्रवर्तन, HYV बीजों का वितरण, उच्चतर उत्पादकता के लिए मृदा की उर्वरता बढ़ाने के लिए उसका उपचार आदि।

राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा (NFS) विधेयक–

इस विधेयक का प्रमुख उद्देश्य परिवारों को खाद्यान्नों के प्रावधान पर बल देते हैं इसके अलावा (NFS) विधेयक लक्षित PDS में निम्नलिखित द्वारा सुधार करने का प्रस्ताव करता हैं– खाद्यान्नों का दरवाजे पर वितरण और सूचना तथा संचार प्रौगोगिकी का प्रयोग। खाद्यान्नों की आपूर्ति न होने पर विधेयक लाभ भोगी को खाद्य सुरक्षा भत्ता देने का प्रस्ताव करता है। विधेयक सामाजिक लेखा परीक्षा, शिकायत निवारण क्रियाविधि की स्थापना, सतर्कता समितियों का गठन आदि। जैसे उपायों से पारदर्शिता और जवाबदेही का प्रावधान करता है।

8.7 खाद्य सुरक्षा के लिए भावी रणनीति–

इस समय भारत गेहूँ, चावल, फलों तथा सब्जियों आदि के उत्पादन में ऊँचा स्थान प्राप्त कर लिया है। यद्यपि 1960 के दशक में प्रौद्योगिकीय विकास की प्राभावशीलता की अवधि अब समाप्त हो रही है। लेकिन बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण बढ़ता हुआ खधान्न की मांग सामान्य लोगो का आय में वृद्धि के कारण साथ– साथ बढ़ी। आये दिन विश्व स्तर पर खाद्यान्न व्यापार के कारण खाद्यान्न की कमी तथा अन्य देश पर निर्भरता होती है। इस कारण खाद्यान्न के लिए समुचित नीतियां बनाई जानी चाहिए।

सुरक्षा नेट की स्थापना–

गरीब खाद्य स्फीति के प्रभाव का सामना करने के लिए साधनहीन होता है, इसीलिए उसके कल्याण हेतु सुरक्षा नेट स्थापित करना आवश्यक है इसके लिए सार्वजनिक वितरण प्रणाली में सुधार करना और उसे आगे अधिक मजबूत किया जाना आवश्यक है। सार्वजनिक वितरण प्रणाली में लक्षित त्रुटियां कम करने का भरसक प्रयत्न किया जाना चाहिए। गरीबों की क्रय शक्ति और उसकी खाद्य ग्रहण सुधारने के लिए अधिक कार्यक्रम आरम्भ किया जाना आवश्यक है। अल्पकालिक उपाय के रूप में जिस सीमा तक आवश्यक है, आवश्यक वस्तुएं, जैसे दलहन, खाद्य तेल, चीनी आदि सार्वजनिक वितरण प्रणाली के लिए आयात होनी चाहिए। परन्तु दीर्घकालिक रणनीति घरेलू उत्पादन बढ़ाने और उपयुक्त उत्पादनकारी स्वरोजगार कार्यों द्वारा आय अर्जित करने की स्थायी क्षमता और पूजी निर्माण से परिसम्पत्तियां बनाने के लिए, काम के लिए खाद्यान्न जैसे कार्यक्रमों से जोड़ने के लिए होने चाहिए।

अन्त्योदय अन्न योजना (AAY) का विस्तार–

अन्त्योदय अन्न योजना का विस्तार बढ़ी हुई गरीब परिवारों को शामिल करने के लिए तथा मुहैया कराने के लिए होना चाहिए। अन्त्योदय अन्न योजना का प्रशासन बेहतर हो सकते हैं। इसी स्थिति दोपहर के भोजन जैसी नहीं होनी चाहिए। इसके लिए अधिक सहायता की आवश्यकता हो सकती है जिसमें खाद्य सुरक्षा के लिए थोड़ा भुगतान करना पड़ सकता है परन्तु यह योजना गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले लोगों की बहुत सहायकता दे सकता है। यह खाद्यान्न स्टॉक की समस्या का समाधान भी दे सकता है।

दूसरी हरित क्रांति–

यह अनुमान लगाया गया है कि आने वाले दिनों में जनसंख्या तीव्र गति से बढ़ेगी जिसके लिए बड़ी मात्रा में खाद्यान्न की आवश्यकता होगी। वर्तमान उत्पादन में वर्तमान की जनसंख्या का ही भरण–पोषण बड़ी कठिनाई के साथ हो रहा है। इस कारण तीव्र गति से बढ़ रही जनसंख्या के लिए दूसरी हरित क्रान्ति को प्राप्त करने की एकीकृत क्रिया विधि पर ध्यान केन्द्रित करना आवश्यक है।

8.8 राष्ट्रीय कृषि नीति–

भारत सरकार ने 28 जुलाई, 2004 को नई कृषि नीति की घोषणा की। यह नई कृषि नीति विश्व व्यापार संगठन के नियम–कानून को ध्यान में रखकर तैयार की गई है। इस नीति का उद्देश्य ऐसी कृषि व्यवस्था की स्थापना करना है जिससे देश की 100 करोड़ जनसंख्या के लिए भरण–पोषण हेतु भोजन को उपलब्ध कराया जा सके। बढ़ते हुए औद्योगिक आधारों के लिए कच्चा माल मुहैया करा सके, और निर्यात के लिए अतिरिक्त अधिक सामग्री कायम कर सके। इसका मुख्य उद्देश्य किसान समुदाय के लिए त्वरित और न्यायपूर्ण प्रतिफल प्रणाली उपलब्ध करवाना है। इस नई कृषि नीति में हरित क्रान्ति, श्वेत क्रान्ति और नीली क्रान्ति को एक साथ मिलाया गया है। अतः इस प्रकार इस नई कृषि नीति का वर्णन 'इन्द्र धनुष क्रान्ति' के समान किया गया है। इस नीति में सभी महत्वपूर्ण क्रान्तियों को मिलाकर उसका संविकास करना है इस नई कृषि क्रान्ति में मात्रात्मक दृष्टि से कोई लक्ष्य निर्धारित नहीं किया गया है। यह कृषि नीति गुणात्मक विकास पर जो दिया है।

मुख्य उद्देश्य–

कृषि क्षेत्र में 4 प्रतिशत वृद्धि दर प्राप्त करना, विकास के ऐसे नीतियों एवं विधियों को अपनाया जाना जिससे विकास का प्रोन्नत हो, जिससे हमारे संसाधनों का कुशलतापूर्वक उपयोग हो (संसाधनों का नुकसान न हो) तथा हमारी मृदा जल एवं जैव विविधता को सुरक्षित रखा जा सके।

देशीय बाजारों द्वारा किया गया ऐसा कार्य जो मांग द्वारा संचालित होता है। विकास में वृद्धि करता हैं इसके साथ–साथ इस विकास को प्रमुख उद्देश्य में आर्थिक उदारीकरण एवं वैश्वीकरण की चुनौतियों का प्रतिस्पर्धा करते हुए कृषि से बना वस्तु का निर्यात करके अधिक से अधिक लाभ प्राप्त करना है। किसानों, कृषि, पशुधन तथा वाणिज्य को ध्यान में रखकर नई कृषि नीति का उद्देश्य किसानों को मूल्य संरक्षण प्रदान करना तथा गुणवत्ता सुधार आधारित प्रणाली में कृषि का निजीकरण, राष्ट्रीय पशुधन प्रजनन कार्य नीति तैयार करना, खाद्यान्नों और अन्य व्यापारिक फसलों पर कर संरचना की समीक्षा करना।

देश के सभी राज्यों में कृषि भू–भागों का एकीकरण करना, कृषि में सुधार हेतु बिना किसी पक्षपात किये पूर्ण कार्यान्वयन करना, जिससे भूमि का

सही–सही बंटवारा किया जा सके तथा भूमि में विद्यमान असमान आय को दूर किया जा सके।

कृषि में निजी करणीय निवेश का प्रावधान, फसलों का बीमा एवं जैव–तकनीक पर बल देना।

किसानों को समय–समय पर कृषि कार्य के लिए ऋण व्यवस्था का प्रावधान करना, नये–नये कृषि विधियों एवं कृषि स्रोतों को प्रोत्साहित करना तथा पहले से ही विकसित प्रकारों का संरक्षण एवं संवृद्धि करना।

8.9 सारांश–

आपने इस इकाई में भारत भूगोल से सम्बन्धित पर्यावरण कृषि, पर्यावरण कृषि का विकास, भारत में खाद्यान्न सुरक्षा, खाद्य सुरक्षा के लिए कार्यक्रम एवं नीतियां, खाद्य सुरक्षा के लिए भावी रणनीतियां तथा राष्ट्रीय कृषि नीति आदि का अध्ययन किये है। अब आप समझ गये होंगे कि पर्यावरण कृषि क्या है, क्यों पर्यावरण कृषि की आवश्यकता है, पर्यावरणीय कृषि का विकास, खाद्य सुरक्षा का अर्थ, भारत के सन्दर्भ में खाद्य सुरक्षा की आवश्यकता, खाद्य सुरक्षा के लिए कौन–कौन से कार्यक्रम प्रारम्भ किये गये हैं, खाद्य सुरक्षा कार्यक्रम में सार्वजनिक वितरण प्रणाली (PDS), राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन एवं राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा विधेयक, खाद्य सुरक्षा के लिए भावी रणनीति में सुरक्षा नेट की स्थापना, अन्त्योदय अन्न योजना का विस्तार, दूसरी हरित क्रान्ति, राष्ट्रीय कृषि नीति में 2004 की नई कृषि नीति तथा मुख्य उद्देश्य आदि को। ,

8.10 शब्द सूची–

कृषि आदान	Agricultural Input,
कृषि प्रदेश	Agriculture Region,
कृषि ऋण	Agricultural Credit,
पारिस्थितिक कृषि	Eco-farming,
कृषि यंत्रीकरण	Farm Mechanization,
भूमि सुधार	Land reform,

खाद्य सुरक्षा Food Security,

8.11 परीक्षोपयोगी प्रश्न–

1. पर्यावरणीय कृषि में प्रमुख साधन है–

(क) रासायनिक उर्ववरक (ख) जैविक उर्वरक

(ग) रासायनिक कीटनाशक (घ) परिवहन

2. नई कृषि नीति किस वर्ष लागू हुई–

(क) 2000 (ख) 2002

(ग) 2004 (घ) 2006

3. अन्त्योदय अन्न योजना किस वर्ष प्रारम्भ हुई–

(क) 2000 (ख) 2010

(ग) 2007 (घ) 2006

4. अन्नपूर्णा योजना किसके लिए प्रारम्भ की गई थी–

(क) बच्चों के लिए (ख) महिला के लिए

(ग) युवा के लिए (घ) वृद्ध के लिए

5. भारतीय खाद्य निगम की स्थापना कब हुई–

(क) 1920 (ख) 1950

(ग) 1970 (घ) 1964

उत्तरमाला– 1–ख, 2–ग, 3–क, 4–घ, 5–घ

8.12 महत्वपूर्ण पुस्तकें/संदर्भ

8.13 अभ्यास प्रश्न–

1. पर्यावरण कृषि का अपने शब्दों में संक्षिप्त व्याख्या कीजिए।
2. खाद्य सुरक्षा का अर्थ तथा विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

3. खाद्य सुरक्षा क्या है? उसके कार्यक्रम व नीतियों का वर्णन कीजिए।

4. खाद्य सुरक्षा एवं उसके लिए भावी रणनीति की व्याख्या कीजिए।

5. राष्ट्रीय कृषि नीति तथा उसके प्रमुख उद्देश्यों का वर्णन कीजिए।

MAGO- 102 भारत का भूगोल

इकाई 9– खनिज संसाधन– लौह अयस्क, अभ्रक, कोयला

इकाई की रूपरेखा

9.1 प्रस्तावना

9.2 उद्देश्य

9.3 खनिज संसाधन

9.4 लौह अयस्क

9.5 अभ्रक

9.6 कोयला

9.7 सारांश

9.8 शब्द सूची

9.9 स्वमूल्यांकन प्रश्न एवं आदर्श उत्तर

9.10 उपयोगी पुस्तकें एवं सन्दर्भ

9.11 अभ्यास प्रश्न।

9.1 प्रस्तावना

खनिज किसी देश के औद्योगिक विकास का आधार बनाते है। भारत कुछ आवश्यक खनिज पदार्थो के पर्याप्त भण्डारो की दृष्टि से काफी भाग्यशाली है। हमारे देश में लौह खनिज, अभ्रक, मैगनीज अयस्क, मैग्नेसाइट, बाक्साइट तथा थोरियम के विशाल भण्डार पाये जाते है। भारत के लिए इन खनिजों का निर्यात संभव है। कोयले चूने के पत्थर, डोलोमाइट, यूरेनियम तॉबे के अयस्क तथा जिप्सम भण्डार भारत की आवश्यकताओं के लिए पर्याप्त है। किन्तु कुछ खनिजों की दृष्टि से भारत बहुत निर्धन है जेसे–पारा, टंगस्टन, मालीवेड्नम, चांदी कोबाल्ट, निकिल टिन जस्ता, ऐन्टिमनी तथा प्लैटिनम प्राप्त होते हैं किन्तु हमारा देश खनिजों की खोज में बहुत सक्रिय है तथा अधिक खनिज भण्डारों के निकट भविष्य में मिलने की काफी सम्भावनाएं है।ब्रिटेन, जर्मनी का रूर क्षेत्र डोनेज

बेसिन तथा यू0एस0ए0 के उत्तरी अप्लेशियन प्रदेश उच्च कोटि के कोयले की दृष्टि से सम्पन्न होने के कारण विश्व के प्रमुख औद्योगिक क्षेत्र है। झारखण्ड तथा पश्चिम बंगाल के साथ लगते भागों में क्योंकि उच्च कोटि का कोयला पाया जाता है अतः ये भाग भारत के प्रमुख इस्पात निर्माण तथा इस्पात से सामान तैयार करने वाले क्षेत्र हैं।

9.2 उद्देश्य :–

इस ईकाई का अध्ययन करने के गद आप–

1. भारत में खनिज संसाधनों के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
2. भारत के आर्थिक विकास में खनिज संसाधनों के महत्व को समझ सकेंगे।
3. लौह–अयस्क के भण्डारण एवं उत्पादन तथा सम्बन्धित व्यापार की समझ विकसित कर सकेंगे।
4. भारत में अभ्रक खनिज के वितरण तथा उसके महत्व को समझ सकेंगे।
5. भारत में कोयले के वितरण, उत्पादन तथा भण्डारण को जान सकंगे।
6. संयुक्त रूप से भारतीय अर्थव्यवस्था में खनिजों का महत्व समझ सकेंगे।

9.3 खनिज संसाधन :–

खनिज किसी देश के औद्योगिक विकास का आधार बनाते है। खनिज दो या दो से अधिक तत्वों का पूर्ण योग होता है, जिसकी एक स्पष्ट रासायनिक संयोजन परमाणुविक संरचना होती हैं। यह अजैविक प्रक्रियाओं के माध्यम से बनता है। ये भू–पृष्ठ में अयस्क के रूप में पाये जाते हैं इसका निष्कर्षण किया जाता है तथा संसोंधित कर इसे समाज में आर्थिक लाभ के लिए उपयोग किया जाता है। वर्तमान समय में देश से भारी मात्रा में अयस्क खनिजों का निर्यात किया जाता है। देश में भारतीय भू–वैज्ञानिक सर्वेक्षण (1851), भारतीय खान ब्यूरो (1948), राष्ट्रीय खनिज विकास लिमिटेड (1958) आदि संस्थायें खनिजों के शोध, शोषण व संरक्षण में कार्यरत् है।भारत खनिज संसाधन की दृष्टि से बहुत सम्पन्न है परन्तु इनका वितरण बहुत असमान है। भारत में खनिजों के वितरण का सक्षिप्त वर्णन निम्नवत् उल्लेखित किया गया है।

9.3.1 खनिजों का वितरण :–

खनिज संपदा की दृष्टि से प्रायद्वीपीय शपद्वीपीय भारत सम्पन्न है। यहां पर भारत की प्रमुख खनिज पेटियों का वर्णन निम्नानुसार किया गया है–

1. छोटा नागपुर मेखला :–

इसका अधिकतर भाग झारखण्ड राज्य के अन्तर्गत शामिल है इसे भारत का रूर प्रदेश की उपमा प्रदान की गई है। इसके अन्तर्गत शामिल महत्वपूर्ण क्षेत्र यथा–धनबाद, हजारी बाग, पलामू रांची, संधाल परगना, सिंहभूमि (झारखण्ड), कटक, धनकेनाल, क्योझर म्यांझट, कोरापुर, मयूरभंज, संभलपुर, सुन्दरगढ़ (उड़ीसा), बाँकुरा, वीरभूमि, मेदिनीपुर व पुरालिया (पं0 बंगाल) है।इस क्षेत्र में काइनाइट रिजर्व 100 प्रतिशत, लौह वयस्क 1.93 प्रतिशत, कोयला, 84 प्रतिशत तथा 70 प्रतिशत क्रोमाइट पाये जाते है।इस क्षेत्र में पाये जाने वाले खनिजों में कोयला, लोहा, बाक्साइट, यूरेनियम, फोस्फेट, चूना पत्थर, क्रोमाइट, मैंगनीज व अभ्रक आदि शामिल है।

2. मध्य भूमि मेखला :–

यह क्षेत्र छत्तीसगढ़, मध्यप्रदेश, आन्ध्रप्रदेश, तेलगांना व महाराष्ट्र राज्य में विस्तृत है जिसके अन्तर्गत मैग्नीज अयस्क, बाक्साइट, अभ्रक, ताबाँ, गेफाइट, चूना पत्थर आदि खनिज संसाधन पाये जाते है। इस मेखला की महत्वपूर्ण विशेषता चूना पत्थर की अवस्थति है।

3. दक्षिणी पेटी :–

इसका विस्तार आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक व तमिलनाडु में है जिसमें पाये जाने वाले महत्वपूर्ण खनिज सोना, लोह अयस्क, क्रोमाइट, मैग्नीज, लिग्नाइट, अभ्रक, बाम्साइट, जिस्म, डोलो माइट चूनापत्थर है।

4. पश्चिमी मेखला :–

इसका विस्तार राजस्थान, गुजरात व महाराष्ट्र राज्य में है जिसके अन्तर्गत महत्वपूर्ण खनिज ताबा, सोना, जिंक, यूरेनियम, अथ्रक, मैग्नीज, नमक व एस्बेस्टस आदि हैं यहां खनिज तेल के भण्डार भी पाये जाते है।

5. दक्षिणी–पश्चिमी मेखला :–

इस मेखला का विस्तार कर्नाटक, गोवा व केरल में पाया जाता है जहां इल्मेनाइट, जिरकान, मोनाजाइट, बालू, गार्नेट, चीनी मिट्टी लौह धातु, बाक्साइट, अभ्रक, चूना पत्थर आदि के भण्डार पाये जाते है।

6. हिमालयी मेखला :–

इस मेखला का फैलाव जम्मू–कश्मीर (लद्दाख) से लेकर हिमालय की तलहटी होते हुये पूर्वोत्तर भारत तक है। यहां पायी जाने वाली खनिज सम्पदा में एण्टीमनी, सीसा जस्ता, ताबां, निकिल, कोबोल्ट, टंगस्टन, जिस्सम, चूना पत्थर, सोना, चांदी व कीमती पत्थर शामिल है।

7. हिन्द महासागर :–

इस विशाल क्षेत्र के अन्तर्गत अरब सागर के महाद्वीपीय कगार व बंगाल की खाड़ी शामिल है। इन क्षेत्रों में खनिज तेल व प्राकृतिक गैस की उपलब्धता के साथ–साथ इसके नितल में मैग्नीज, फास्फेट, वेरियम, एल्यूमिनियन, सिलिकान, टाइटेनियम, सोडियम, पोटौशिपथ, क्रोमिथम, मानोजाइट, इल्मीनाइट, मैग्नीटाइट और गर्नेट पाये जाते है।

9.3.2 खनिज संसाधनों का वर्गीकरण :–

सामान्यतः खनिजों को तीन श्रेणियों में बाटा जाता है यथा–

1. धात्विक खनिज :–

ये वे खनिज है जिनको गलाने से धातु प्राप्त होते है। उल्लेखनीय है कि धातु लचीले होते है उनसे कोई भी वस्तु बना सकते है।धात्विक खनिजों को दो भागों में बाटा गया है–

1. लौहांश खनिज– लौह अयस्क, मैग्नीज, क्रोमिपय, कोबाल्ट, टगस्टन, मोलीबेडनय, वैनेडियम, टाइटेनियम बोरान, निकिल आदि।

2. अलौह धातुए– तांबा, सीसा, जस्ता, बाक्साइट, टिन, मैग्नीशियम, एवं प्लेटिनम आदि को शामिल किया जाता है।

2. अधात्विक खनिज

इनमें धात्विक अशं का अभाव रहता है। चोट पड़ने पर ये टूट जाते है यथा–डोलोमाइट, चूनापत्थर, अभ्रक, जिप्सय, पाइराइट्स नमक, एस्वेस्ट्रास, हीरा, छीपा पत्थर एवं विभिनन प्रकार की मिट्टियां आदि।

3. खनिज ईधन

इसके अन्तर्गत आणविक खनिज, कोयला, पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस को शामिल किया जाता है।

9.3.3. खनिज उद्योग की समस्यायें

भारत में खनिज उद्योग अनेक समस्याओं से ग्रसित है, जो इस प्रकार है–

1. खनन और प्रसंस्करण की समुचित नीति का आभाव।
2. अवैज्ञानिक तरीके से अंधाधुन खनन।
3. पुरानी प्रोद्योगिकी।
4. देश में खनिज संसाधनों का विधिवत अन्वेषण और सूचीकरण नहीं किया जा सकता है।
5. पूंजी की अल्पता।
6. पर्यावरण पर कुप्रभाव।

9.3.4. खनिज संसाधनों का संरक्षण

ये अनवीकरणीय संसाधन होते है क्योंकि एक बार भण्डार समाप्त हो जाने के बाद पुनः उत्पादन नहीं कर सकते है। नीचे कुछ महत्वपूर्ण सुझाव दिये गये है– यथा–

1. नयी शोधों द्वारा दुर्लभ खनिजों के स्थान पर 'प्रतिस्थापन खनिजों को खोजने और विकसित करने की आवश्यकता है।
2. नये प्रकार के आर्थिक विकास के मार्ग को प्रशस्त करने के लिये खनिज–आधारित उद्योगों के विस्तारण की भारी सम्भावना है।
3. संरक्षण नीति में पोषणीय खनन में अधिक बल दिया जाना चाहिये। उन खनिजों के शोषण और उपयोग को प्राथमिकता दिया जाना चाहिये जो नवीकरणीय व प्रचुर है।

9.4. लौह अयस्क

लौह अयस्क को आधुनिक सभ्यता के धुरी नाम से जाना जाता है। इस पर किसी देश की अर्थव्यवस्था टिकी हुई होती हैं यह खनिज पृथ्वी पर शुद्ध रूप से नहीं पायी जाती है बल्कि यह अक्सर चूना, मैग्नीशियम, फास्फोरस, सिलिका, सल्फर (गन्धक) तथा तांबे के साथ मिश्रित रूप में पायी जाता है।यह 4 प्रकार के पाये जाते है, यथा–

1. **मैग्नेटाइट (fe2o3)**–यह काले रंग का सर्वोत्तम किस्म का चुम्बकीय लौह अयस्क है। इसमें धातु का अंश 72 प्रतिशत होता है। इसमें वेनेडियम, टाइटेनियम तथा क्रोमियम के भी अंश पाये जाते है। इस प्रकार के लौह अयस्क का 42 प्रतिशत भाग दक्षिणी भारत अर्थात् कर्नाटक, आन्ध्रप्रदेश एवं तमिनलाडु में पाया जाता है।

2. **हेमेटाइट अयस्क (fe2o3)**–इसमें धातु का प्रतिशत 70 से 60% तक होता हैं यह दूसरा सर्वोत्तम किस्म का लौह अयस्क है। इसका 59 प्रतिशत भाग पूर्वी क्षेत्र अर्थात् झारखण्ड, ओडिशा व छत्तीसगढ़ राज्य के अन्तर्गत शामिल है। भारत का अधिकांश लोहा इसी प्रकार का है।

3. **लियोनाइट (2fe2o3H2o)**–यह जलयोजित लोहा आक्साइड कहलाता है। इसमें धातु का अंश 40 से 50 प्रतिशत होता है। यह अवसादी शेलों में पाया जाता है।

4. **सिडेराइट (fe3co3)**–इसे लोहा कार्बोनेट कहा जाता है यह भी अवसादी शैलों से ही प्राप्त किया जाता है।

9.4.1 लौह अयस्क भण्डार :–

भारत में लौह अयस्क का कुल सचिंत भण्डार 33276 मिलियन टन (मिनरल ईयर बुक 2019) है, जिसमें से 22487 मिलियन टन हेमेटाइट व 10789 मिलि. टन मैग्नेटाइट सम्मलित है। कुल भण्डारण में क्रमशः कर्नाटक, ओडिशा, झारखण्ड, छत्तीसगढ़ एवं आन्ध्र प्रदेश का शीर्ष स्थान है।

यह उल्लेखनीय है कि भारत के पूर्वी राज्यों– ओडिशा, झारखण्ड, पश्चिमबंगाल, छत्तीसगढ़ व उत्तरी आन्ध प्रदेश में देश के 80 प्रतिशत लौह

भण्डार पाये जाते है (भारत 2020)।हेमेटाइट भण्डारण में शीर्ष 5 राज्य क्रमशः ओडिशा (34 प्रतिशत), झारखण्ड (23 प्रतिशत), छत्तीसगढ़ (22.0) कर्नाटक (11.0 प्रतिशत) व गोवा 5.0 प्रतिशत है।मैग्नेटाइट भण्डारक शीर्ष पांच राज्य क्रमशः कर्नाटक (72 प्रतिशत), आन्ध्रप्रदेश (13 प्रतिशत), राजस्थान (6 प्रतिशत), तमिलनाडु (5 प्रतिशत), गोवा (2 प्रतिशत) है।

9.4.2 लौह अयस्क उत्पादन

वर्तमान समय में विश्व में लौह अयस्क के उत्पादन में भारत का चतुर्थ सथान (7.05 प्रतिशत) है।देश में लौह अयस्क का उत्पादन 206.44 मिलियन टन (IMYB-2019) है।देश में लौह अयसक उत्पादन वाले शीर्ष राज्य क्रमशः ओडिशा (54.76 प्रतिशत), छत्तीसगढ़ (16.93 प्रतिशत), कर्नाटक (14.43 प्रतिशत) व झारखण्ड (11.35 प्रतिशत) है।

9.4.3 प्रादेशिक वितरण :–

देश के लौह अयस्क उत्पादक क्षेत्रों का वितरण क्षेत्र अधोलिखित है–

ओडिशा

इस राजय का देश में लौह अयस्क उत्पादन का प्रथम स्थान (54.76 प्रतिशत) है। इसके अन्तर्गत आने वाले प्रमुख क्षेत्र गुरूमहिसानी, पोम्पाद, बदाम पहाड़ (मयूरगंज+सुन्दरगढ़) जिले, बांसपानी टोडा (केवझर जिला), तोमाका श्रेणी (कटक), कान्डाधार पहाड़ (सुन्दरगढ़ जिला) सम्बलपुर तथा कोरा पुट जिले की हीरापुर पहाड़ी।बादाम पहाड, बोनाईगढ़ श्रेणी तथा मयूरगंज के लौह अयस्क का प्रयोग बोकारो, दुर्गापुर, जमशेदपुर तथा राउरकेला के लोहे एवं स्टील संयत्रों के लिए भेजा जाता है।

छत्तीसगढ़

इस राज्य का देश में लौह अयस्क उत्पादन में दूसरा (16.93 प्रतिशत) महत्वपूर्ण स्थान है। बैलाडिला (बस्तर जिले में) तथा डल्ली राजहरा(दुर्ग जिला) इस राज्य के महत्वपूर्ण लौह अयस्क खनिज उत्पादन राज्य है।बैलाडिला खान देश की सबसे बड़ा यन्त्रीकृत लौह–अयस्क की खान है। 270 किमी0 लम्बी एक स्लॅरी पाईपलाइन का निर्माण किया गया है ताकि अयस्क को बैलाडिला से विशाखा पत्तनम संयन्त्र तक लाया जा सके। बैलाडिला से अधिकतर लौह अयस्क का निर्यात जापान को किया जाता है। यह निर्यात विशाखापट्टनम बन्दरगाह से किया जाता है।ढल्ली–राजहरा श्रेणी जो लौह अयस्क के भण्डार

हेतु सुप्रसिद्ध है, छत्तीसगढ़ के दुर्ग जिले में स्थित है। यहां के अयस्क में लोहे की मात्रा 70 प्रतिशत हैं इस श्रेणी के भण्डार का उपयोग हिन्दुसतान स्टील संयत्र, भिलाई द्वारा किया जाता है।छत्तीसगढ़ राज्य के अन्य खनिज लौहे उत्पादन करने वाले जिले बिलासपुर, जगदलपुर, रायगढ़ तथा सरगुजा है।

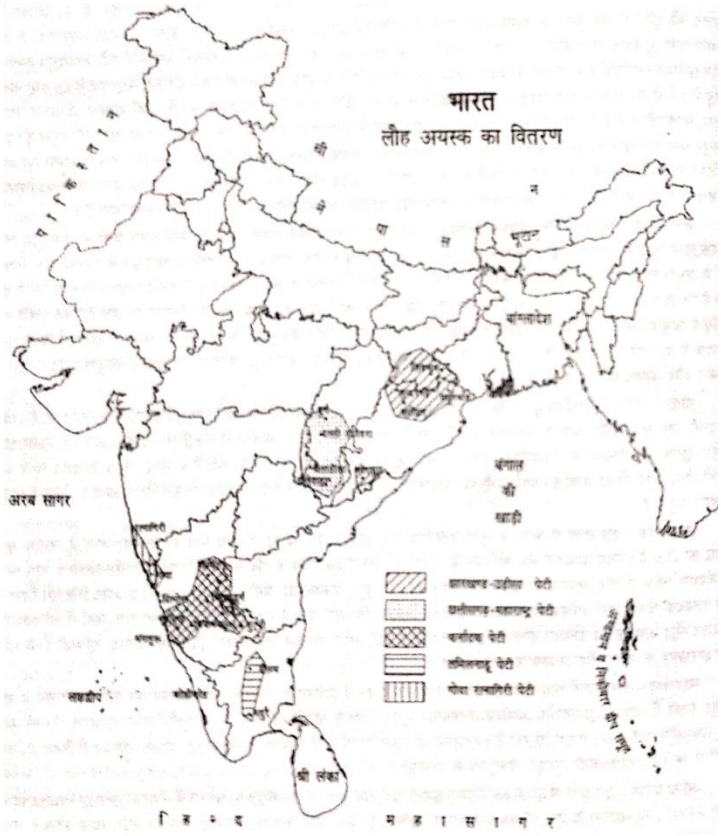

चित्र–1

कर्नाटक

भारत में लौह अयस्क के उत्पादन में कर्नाटक का तीसरा महत्वपूर्ण (14.43 प्रतिशत) स्थान हैं। लौह अयस्क भण्डारण की दृष्टि से यह राज्य देश में सर्वोच्च स्थान रखता है। उच्च श्रेणी के भण्डार हैमेटाइट तथा मैग्नेटाइट प्रकार के है तथा ये केम्मनगुंडी (चिकमंगलूर जिले के बाबाबूदन पहाड़ी में) में पाये जाते है।

1. बाबाबुदन पहाड़ी–यह कर्नाटक के चिकमंगलूर जिले में स्थित है। यहां हेमेटाइट के भरपूर भण्डार है। यहां का लौह अयसक खनिज मंगलौर बन्दरगाह द्वारा ईरान को निर्यात किया जाता हैं

2. कुद्रेंमुख भण्डार–यह भण्डार भी चिकमंगलूर जिले में स्थित है। जहां मैग्नेटाइट प्रकार के लौह अयस्क का भण्डार पाया जाता है। इस खान का विकास ईरान के साथ एक निर्यात समझौते के तहत हुआ हैं यहां से खनिज लौह का निर्यात मंगलौर बन्दरगाह के द्वारा किया जाता है।

3. संदूर श्रेणी इस श्रेणी का विस्तार कर्नाटक के बेल्लारी तथा हासपेट जिलों में हैं इस श्रेणी का खनिज लोहा कठोर, सघन तथा 'स्टील–ग्रे' होता हैं यहां के खनिज लौह को विजयनगर स्टील संयत्र भेजा जाता है।

4. खनिज लोहा उत्पादन करने वाले कर्नाटक के अन्य जिले चित्रदुर्ग, धारवाड, उत्तरी कन्नड़, सिमांगा व तुमकुर है।

झारखण्ड :–

यह राज्य देश के कुल लौह अयस्क उत्पादन का 11.35 प्रतिशत प्रतिनिधित्व करता है। इस दृष्टि से यह देश का चौथा प्रमुख लौह अयस्क उत्पादक क्षेत्र है। जबकि भण्डारण की दृष्टि से देश में तीसरा प्रमुख स्थान रखता है। यहां की लौह पेटी उड़ीसा की पेटी का ही विस्तार है। सिंह भूमि प्रमुख उत्पादक जिला है। यहां नोवामण्डली, गुआ क्षेत्रों में उत्तम कोटि का हेमेटाइट लौह–अयस्क पाया जाता हैं।इसके अतिरिक्त पलामू जिले के डाल्टनगंज और सिंह भूमि के दुब्लाबंरा और सिन्दुरपुर मैग्नेटाइट लौह अयस्क के जमाव पाये जाते है।गुआ क्षेत्र का लौह अयस्क कुल्टी और बर्नपुर के इस्पात संयत्रों को और किरीबुक और मेधहादृबट क्षेत्र NMDC जरिये बोकारो और राउर केला इस्पात केन्द्रों को भेजा जाता है।कुछ लौह अयस्क हल्दिया बन्दरगाह से निर्यात भी किया जाता है जिसके लिए 70किमी0 लम्बी रेल लाइन बिछायी गयी है।

गोवा– यह देश का एक महत्वपूर्ण लौह अयस्क उत्पादक एवं भण्डारक राज्य है। उत्तरी गोवा का लौह–अयस्क उच्च कोटि का है। यहां का मुख्य खनन केन्द्र पिसा अडोलपेल– अस्नोरा, सेन्क्युलिम– पोंडा, कुन्देम– सुरला तथा सिरीगाओ– बिछोलिम– डालडा है। निकटवर्ती बन्दरगाह इन खानो के लिए अत्पन्न लाभकारी है जहां से लौह–अयस्क का निर्यात किया जाता है यहां से निर्यात मुख्यतः जापान व ईरान को किया जाता है।

आन्ध्र प्रदेश– यहां के प्रमुख खनन केन्द्र अन्तपुर, खम्मम, कृष्णा, कुर्नूल, कुडप्पा एवं नैल्लौर जिलों में हेमाटाइट किस्म के लौह–अयस्क का जमाव पाये जाते हैं जिसमें जग्गपा पेट्टा, रमल्ला कोटा, वेल्डुर्टी, नयुडुपेट्टा और बेय्याराम प्रमुख खनन क्षेत्र है।

तमिलनाडु– यहां के प्रमुख भण्डारण क्षेत्र सलेम (तिथमिलाई, कंजामलाई गोइमलाई कोल्लामलाई, चेत्तेरी बेलुकुरिची, पांचालाइस, नामागिरी, महादेवी पहाड़ी), उ0 अर्काट, नीलगिरी, धर्मपुरी जिलों में पाए जाते है।

राजस्थान– इस राज्य में लौह अयस्क के महत्वपूर्ण भण्डार मोरिजा (भीलवाड़ा) नथराकिपल (उदयपुर) जमालपुर, शिरोर एवं तओड़ा (झुंझुन जनपद) में पाये जाते है।

महाराष्ट्र– यहां लोहे के जमाव मुख्यतः लोहार, पीपल गांव, असोला, देवल गांव, सूरजगढ़ (चन्द्रपुर जिला), रेडी, सावन्तवाड़ी, बंगुरला, गुल्डुर अरोज (रत्नागिरी), खुर्शीपुर एवं अम्बेतलाब (भण्डारा जनपद) क्षेत्रों में पाये जाते है।

अन्य क्षेत्र– लघु मात्रा में लौह अयस्क के जमाव मध्यप्रदेश के जबलपुर, मांडला एवं बालाघाट जिलों में, गुजरात के भावनगर एवं बड़ोदरा, हरियाणा के महेन्द्रगढ़ जिला में, जम्मू–कश्मीर के राजौरी, (जम्मू एवं उघमपुर जिलों) में पाये जाते है। उत्तरप्रदेश के सोनभद्र व मिर्जापुर जिलों और हिमांचल प्रदेश के कागड़ा व मण्डी जिलों में प्राप्त होते है।

9.4.4 व्यापार– भारत लौह अयस्क के उत्पादन के मामले में विश्व का चौथा सबसे बड़ा उत्पादक देश है। भारत में लौह अयस्क का घरेलु खपत के बाद अधिकतर भाग निर्यात कर दिया जाता है। भारत अपने कुल खनिज लोहे के उत्पादन का लगभग 55 प्रतिशत भाग जापान, दक्षिण कोरिया, पश्चिमी यूरोप, ईरान, यू0ए0ई0 अन्य देशों को निर्यात कर देता है।यह निर्यात मुख्यतः बैलाडिला (छत्तीसगढ़), दैत्री बराजमदा (उड़ीसा), बेल्लारी–हास्पेट, दोनेमलाई–कुन्द्रेमुख (कर्नाटक) एवं गोवा के क्षेत्रों में विशाखापट्टनम्, पाराद्वीप, हल्दिया, चेन्नई, मर्मागोवा बन्दरगाहों से किया जाता है। विश्व बाजार में भारत के लौह खनिज के निर्यात को आस्ट्रेलिया, मलेशिया (जापान को,) लैटिन अमेरिकी देशों (पं0 यूरोप को) एवं रूस (यू0 यूरोप को) से कड़ी प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ रहा है।

9.5 अभ्रक

यह एक महत्वपूर्ण अधात्विक खनिज है जो कि विद्युत का कुचालक होता है। इसलिए इसका उपयोग मुख्यतः विद्युत उद्योगों में किया जाता है। इसका उपयोग बिजली के मोटर, डायनमो, बेतार का तार, हवाई जहाज, मोटरगाड़ी, धमनभट्टी, ताप सह एवं विद्युत कुचालक ईट, लालटेन की चिमनी, नेत्र रक्षक चश्मा, सजावट के समान एवं मकान बनाने में किया जाता है।अभ्रक का मुख्य अयस्क पिग्माटाइट है वैसे यह मस्कोवाइट, फ्लोगोपाइट, बायोटाइट तथा

लेपिडोलाइट जैसे खनिजों का समूह है जो आग्नेय एवं रूपान्तरित शेलों में खण्डों के रूप में पाये जाते है।

9.5.1 भण्डारण

भारत अभ्रक शीट के भण्डारण में विश्व में प्रथम हैं 2019 के अनुसार भारत में अभ्रक के शीर्ष चार भण्डारक राज्य क्रमशः आन्ध्रप्रदेश (41 प्रतिशत) राजस्थान (28 प्रतिशत), ओडिशा (17 प्रतिशत) व महाराष्ट्र (13 प्रतिशत) है (1 अप्रैल 2015 तक)।

9.5.2 उत्पादन

भारत विश्व में अभ्रक शीट का प्रथम स्थान है। 1960 के पूर्व में बाजार में इसकी मांग बहुत ज्यादा था, इसके बाद इसकी मांग में क्रमशः ह्रास देखा गया। भारत में शीर्ष अभ्रक कच्चा उतपादक राज्य क्रमशः आन्ध्रप्रदेश व राजस्थान है। अन्य राज्यों में झारखण्ड का बिहार महत्वपूर्ण है।

9.5.3 प्रादेशिक वितरण

देश के समूचे अभ्रक का उतपादन केवल चार राज्यों (आन्ध्र प्रदेश, राजस्थान, झारखण्ड व बिहार) में किया जाता है जिसमें से अकेले आन्ध्रप्रदेश देश 97.62 प्रतिशत अभ्रक उतपादन करता है।

आन्ध्र प्रदेश

यहां की अभ्रक की मुख्य पेटी गुडूर और संगम के बीच नेल्लौर जिले में पाई जाती है। यहां पर कालीचेटू, कल्यानारामा, सीताराम, पल्लीमाता, बसापर और पट्टाभिरामा प्रमुख खदाने है।

राजस्थान

यहां की अभ्रक पेटी उ0पू0 में जयपुर से द0प0 में उदयपुर तक फैली है। भीलवाड़ा, अजमेर, उदयपुर और जयपुर जिले प्रमुख उत्पादक है। यहां के अभ्रक का रंग हल्का हरा और गुलाबी है।

झारखण्ड

इस राज्य का मुख्य उत्पादक क्षेत्र कोडरमा, हजारीबाग, गिरिडीह, एवं धनबाद जिलों से प्राप्त होती है जो गया भागलपुर तक फैली अभ्रक पेटी का

भाग हैं यहां का अभ्रक लाल रंग व उत्तम कोटि का होता है। कोडरमा विश्व की प्रसिद्ध अभ्रक की मण्डी है।

बिहार

बिहार में गया (डाबर, सिंगुर, राजौली) मुगेंर (महेसवरी, नवडीह एवं चकाई), भागलपुर, नवादा, जमुई और बांका जिलों में अभ्रक के जमाव पाये जाते हैं।

सांसर श्रृंखला

यह श्रृंखला महाराष्ट्र के नागपुर तथा भण्डारा एवं मध्यप्रदेश में छिदंवाड़ा जिले में फैली हुई हैं इस श्रृंखला से प्राप्त अभ्रक हल्के हरं रंग का होता है।

साकोली श्रृंखला

यह मध्यप्रदेश के जबलपुर तथा रीवा जिले में फैली हुइ हैं यह श्रृंखला अभ्रक हेतु धनी है।

अन्य क्षेत्र

अभ्रक के छिटपुट जमाव कर्नाटक, तमिलनाडु, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़ केरल, उत्तर प्रदेश, उड़ीसा, हिमांचलप्रदेश, असम (ग्वालपाड़ा), व पश्चिम बंगाल में पाये जाते है।

9.5.4 व्यापार

भारत में विश्व में सबसे बड़ा उत्पादक एवं निर्यातक है। इसके समस्त उत्पादन का मात्र 10 प्रतिशत ही घरेलू खपत बिजली और इलेक्ट्रॉनिक्स उद्योगों में हो पाती है बाकी बचे 90 प्रतिशत को विदेशों (जापान, यू0एस0ए0, ग्रेटब्रिटेन, नार्वे, रूस, पोलैण्ड, जर्मनी, चेकगणराज्य, स्लोवाकिया, हंगरी, नीदरलैण्ड, कनाडा, आस्ट्रेलिया को निर्यात कर दिया जाता है।निर्यात के प्रमुख पत्तन कोलकाता एवं विशाखा पत्तनम बन्दरगाह है।हमारें प्रमुख ग्राहकों में चीन, यू0एस0ए0 साउदीअरब, नीदरलैण्ड, जापान, फिनलैण्ड एवं जर्मनी शामिल है।हाल ही में भारत के निर्यात को ब्राजील में प्रतिस्पर्धा एवं कृत्रिम अभ्रक का सामना करना पड़ रहा है।

9.6 कोयला

कोयला भारत का मुख्य उर्जा स्रोत है और देश की व्यवसायिक उर्जा की खपत में इसका 67 प्रतिशत योगदान है। कोयले से प्राप्त शक्ति खनिज तेल का दो गुना, प्राकृतिक गैस से पांच गुनी, तथा जल विद्युत शक्ति आठ गुना अधिक होती है। इसकी इसी उपयोगिता कारण इसे काला सोना की उपमा प्रदान की जाती है। कोयले के समस्त उत्पादन का 83.8 प्रतिशत भाग बिजली उत्पादन में खपत होता है।

9.6.1 भारत में कोयले का वर्गीकरण :–

भारत में पाये जाने वाले कोयले को दो वर्गो में बांटा जाता है–

1. गोंडवाना कोयला :–

इस प्रकार का कोयला कार्बोनीफरेस काल का कोयला है, जो कि दामोदर, गोदावरी, नर्मदा घटीयों में पाया जाता है। इस शैल समूह की मुख्य कोयले की खान रानीगंज, झरिया, बोकारो, गिरडीह, चन्द्रपुर, कर्णपुरा, तातापानी, तलचर, हिमगिरी, कोरबा, पेंच घाटी, सरगुजा, साम्पेटी, वर्धा घाटी, श्रृंगरेनी (आन्ध्रप्रदेश) तथा सिंगरौली है।

1. झिनगूर्ढा कोयले के खान (MP) में गोण्डवाना काल के कोयले की सबसे मोटी परत (132 मी0) पायी जाती है।

2. इस काल का कोयला मुख्यतः एन्थ्रेंसाइट व बिटुमिनस प्रकार का है।

2. तृतीयक युग का कोयला :–

इसे टर्शिपरी युग का कोयला भी कहा जाता है एवं इस काल में पाये जाने वाले कोयला को भूरा कोयला भी कहते है। यह कोयला भारत के कुल कोयला उत्पादन का मात्र 2 प्रतिशत प्रतिनिधित्व करता हैं इस काल में पाये जाने वाले कोयला निम्नकोटि के है।

9.6.2 भारत में कोयले के प्रकार :–

कार्बन वाष्प व जल की मात्रा के आधार पर भारतीय कोयला को निम्न चार भागों में बांटा गया है, यथा–

1. एन्थ्रेंसाइट

यह उत्तम किस्म का कोयला होता है जिसमें कार्बन की मात्रा 90 से 95 प्रतिशत पायी जाती है। यह जलते समय धुआ नहीं देता है। इस प्रकार का कोयला जम्मू कश्मीर राज्य से प्राप्त होता है।

2. बिटुमिनस

भारत में पाया जाने वाला कोयला अधिकतम इसी श्रेणी का है जिसमें कार्बन की मात्रा 55 प्रतिशत से 80 प्रतिशत तक पायी जाती है। यह क्षेत्र देश के कुल 11.3 कोयला क्षेत्रों में से 80 कोयला क्षेत्र का प्रतिनिधित्व यही करता हैं अधिकतर बिटुमिनस कोयला झाखण्ड, ओडिशा, छत्तसीगढ़, पश्चिम बंगाल, तथा मध्यप्रदेश में पाये जाते हैं

3. लिग्नाइट कोयला

यह घटिया किस्म का भूरा कोयला हैं इसमें कार्बन की मात्रा 40 प्रतिशत से 55 प्रतिशत तक पायी जाती है। यह कोयला तमिलनाडु,(मन्नारगुडी), राजस्थान, मेघालय, असोम (माकुम), वेल्लारे, दार्जिलिंग (पं0 बंगाल) में मिलता है।

4 पीट कोयला

यह सबसे निम्न कोटि का कोयला होता है, जिसमें आर्दता सर्वाधिक होती है। यह कोयले के निर्माण के पहले चरण को निरूपित करता है।

9.6.3 भण्डारण

कोयले के भण्डारण की दृष्टि से भारत का विश्व में 5 वां स्थान है। भारतीय भू–विज्ञान सर्वेक्षण के अनुसार देश में 1200 मीटर की गहराई तक सुरक्षित कोयले का भण्डार 308.80 बिलियन टन अनुमानित है। (कोकिंग कोल व नॉन कोकिंग कोल सन्नहित) (1 अप्रैल 2015) ।भारत में कोयले के भण्डारण की दृष्टि से शीर्ष पांच राज्य क्रमशः झारखण्ड, ओडिशा, छत्तसीसगढ़, पं0 बंगाल व मध्यप्रदेश है। (2019) ।लिग्नाइट संचित शीर्ष 3 राज्य क्रमश' तमिलनाडु (79.17), राजस्थान (13.81) व गुजरात (5.94) है।

9.6.4 उत्पादन

IMYB–2019 के अनुसार वर्ष 2017–18 के दौरान कोयले का कुल उत्पादन 728.72 मिलियन टन है, जिसका 74.5 प्रतिशत बिजली उत्पादन, 2.36 प्रतिशत स्टील उद्योग, 1.6 प्रतिशत स्पंज आयरन में तथा सीमेंट उद्योग में 1.22 प्रतिशत खपत हुआ।भारत में कोयले के उत्पादन की दृष्टि से शीर्ष पांच राज्य क्रमशः छत्तसीगढ़ (22.22 प्रतिशत), ओडिशा (19.80 प्रतिशत), झारखण्ड (18.48) मध्यप्रदेश (16.28 प्रतिशत) व तेलगांना (8.49 प्रतिशत) है। वही पर लिग्नाइट कोयला उत्पादक शीर्ष तीन राज्य क्रमशः तमिलनाडु, गुजरात व राजस्थान है।

9.6.5 वितरण

भारत एक कोयला सम्पन्न देश है अर्थात् यह अधिकतम राज्यों में अपने किसी न किसी रूप में पाया जाता है। भारत में कोयला पाये जाने के महत्वपूर्ण क्षेत्र निम्नलिखित है–

1. छत्तीसगढ़

हाल ही में छत्तीसगढ़ कोयला उत्पादन में देश का प्रथम राज्य हो गया हैं इसके प्रमुख खदानों में सरगुजा, बिलासपुर, रायगढ़ जिलो में पायेजाते है। कोरबा कोयला क्षेत्र राज्य का प्रमुख कोयला क्षेत्र है जिसके समीप स्थित ताप गृह संचालित होते है।

2. झारखण्ड

कोयला उत्पादन में तीसरा व भण्डारण में प्रथम स्थान हैं इसके मुख्य कोयला खनन केन्द्र– बोकारो, डाल्टनगंज, धनबाद, गिरडीह, हूटर, झरिया, कर्णपुर तथा रामगढ़ है।

3. उड़ीसा

यह देश का दूसरा महत्वपूर्ण कोयला उत्पादक राज्य है। अधिकांश कोयले का जमाव ढेंकानल एवं सम्बलपुर जिलो में स्थित है।

ब्राह्मणी नदी घाटी में स्थित तालचीर देश का सबसे प्रमुख कोयला क्षेत्र है।

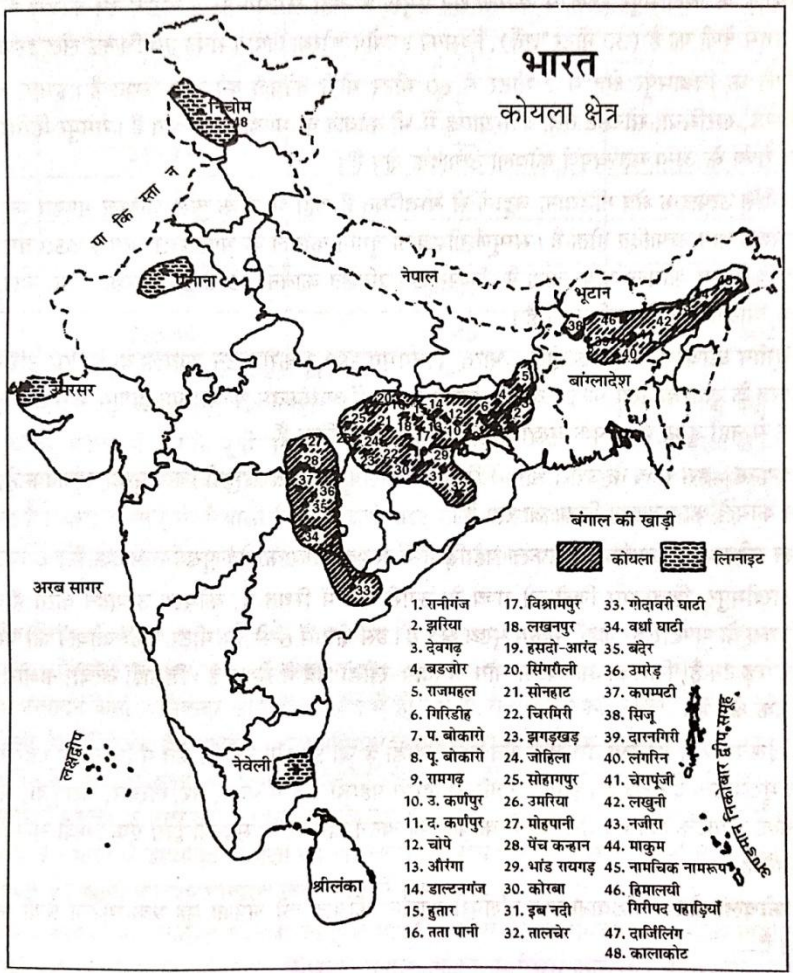

चित्र–2

4. मध्य प्रदेश

मध्य प्रदेश राज्य के प्रमुख कोयला जनन केन्द्र सिंगरौली (सीधी जिला) उमरिया, कोरार, सोहागपुर, जोहिल्ला (शहडोल), मोहापनी–गोतिलोरिया, पेंच–कन्हन–तवा आदि प्रमुख है। सिंगरौली राज्य का सबसे बड़ा कोयला क्षेत्र है जिससे ओबरा के तापग्रह को कोयला की आपूर्ति होती है।

5. तेलंगाना

यहां के कोयला भण्डार गोदावरी नदी घाटी में स्थित हैं सिंगरेनी राज्य का सबसे बड़ा कोयला क्षेत्र है।

6. टर्शियरी कोयला क्षेत्र

इसका मुख्य क्षेत्र राजस्थान, असम, मेघालय, अरूणांचल प्रदेश, जम्मू कश्मीर और तमिलनाडु है। सम्पूर्ण भारत का 2 प्रतिशत कोयला टर्शियरी युग की

चट्टानों से प्राप्त होता है। राजस्थान में लिग्नाइट कोयले का भण्डार पलाना, बरसिंगसर, बियनोक (बीकानेर) कपूरड़ी, जालिप्पा (बाड़मेर) और कसनऊ–इग्यार (नागौर) में है।

7. अन्य क्षेत्र

कालाकांड नीचा होम, उमरसार गुजरात, बाहुर (पाण्डिचेरी), बरकला (केरल), माकूम असम नवेली, (TN), नागचिक नाम (अरूणांचल प्रदेश) आदि।

9.6.6 व्यापार

कोयला के क्षेत्र में भारत विश्व का तीसरा बड़ा उत्पादक व पांचवा सबसे बड़ा भण्डारक है। भारत का कोयला घरेलू मांग की पूर्ति के उपरान्त कुछ भाग पड़ोसी देशों (बांग्लादेश, नेपाल, भूटान, म्यामार और श्रीलंका) को निर्यात कर देता है। विश्व बाजार में कोयले की उंची कामत होने के कारण इसे जापान यूरोपीय आर्थिक समुदाय और मध्य पूर्व के देशों को भी निर्यात के प्रयास किये जा रहे है। यह भी ध्यान देने योग्य बात है कि भारत ने 2016–17 में आस्ट्रेलिया, इण्डोनेशिया एवं द0 अफ्रीका से 191 मिलियन टन कोकिंग कोल का आयात भी किया।

9.7 सारांश

संक्षेप में हम इस तथ्य को गहनात से स्वीकार्य कर सकते है कि भारतीय अर्थव्यवस्था में खनिज संसाधनों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। वर्तमान समय में विश्व की 10 सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था में अगर शामिल हुआ है तो इसका महत्वपूर्ण कारण इस देश के खनिज संसाधन ही रहा है। इस इकाई के अध्ययन से हम लौह–अयस्क, अभ्रक व कोयला खनिजों के उत्पादन, भण्डारण, वितरण व व्यापार के बारे में विस्तृत से जानकारी प्राप्त किए।इस इकाई के माध्यम से हमने यह सीखा कि किस प्रकार भारत में खनिजों का वितरण पाया जाता है एवं उद्योग–धन्धे अर्थात् औद्योगिक गतिविधियों का निर्धारण किस प्रकार से होता है, के बारे में सीखा।

9.8 शब्द सूची

Leather industry	चमडा उद्योग
Cotton texile industry	सूती वस्त्र उद्योग
Fossil fuel	जीवाश्म ईधन

Silk texile	रेशमी वस्त्र उद्योग
Mica	अभ्रक
Coal washery	कोयला शोधन

9.9 शब्दार्थ

मैग्नेटाइट उत्तम किस्म का लौह अयस्क।

एन्थ्रेंसाइट उत्तम किस्म का कोयला।

कोकिंग कोल सर्वोत्तम किस्म का कोयला।

सिडेराइट निम्न घटिया लौह अयस्क।

हेमेटाइट भारत में बहुतायत पाया जाने वाला लौह अयस्क।

9.10 स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. निम्नांकित में कौन सुमेलित नहीं है–

अ– केमानुगुण्डी–भद्रावती ब– राजहरा– चन्द्रपुर

स– नोआमण्डी–सिंहभूमि द–गुरूमहिसानी–क्योंझर

2. खनिज पदार्थो की दृष्टि से कौन सा भारतीय क्षेत्र अधिक समृद्धि है–

अ– मालवा पठार ब– तिब्बत का पठार

स– दक्कन पठार द– छोटानागपुर पठार

3. भारत में सर्वाधिक कोयला भण्डार पाया जाता है–

अ–झारखण्ड ब– उड़ीसा

स– छत्तीसगढ़ द– मध्य प्रदेश।

4. अभ्रक की प्राप्ति होती है–

अ– जलोड़ निक्षेपों से ब– अवसादी शैलों से।

स– कायान्तरित शैलों से द– आग्नेय शैलों से।

5. कोरबा कोयला क्षेत्र कहाँ अवस्थित है।

अ– ओडिशा में ब– छत्तीसगढ़ में

स– पं0 बंगाल में द–झारखण्ड में।

उत्तर1.(ब), 2. (द), 3 (अ), 4 (द), 5 (ब)।

9.11 उपयोगी पुस्तकें एवं सन्दर्भ

1. प्रो0 जगदीश सिंह, भारत : भौगोलिक आधार एवं आयाम, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर।
2. प्रो0 आर0 सी तिवारी– भारत का भूगोल, प्रवालिका प्रकाशन, प्रयागराज।
3. डॉ0 बी0सी0 जाट, भारत का भूगोल, पंचशील प्रकाशन, जयपुर।
4. प्रो0 काशीनाथ व प्रो0 जगदीश सिंह, आर्थिक भूगोल, ज्ञानादेय प्रकाशन।
5. सिंह, आर0एल0– इण्डिया : रीजनल ज्योग्राफी एन0जी0एस0आई0 गोरखपुर।

9.12 अभ्यास प्रश्न (सत्रान्त परिक्षा हेतु)

1. भारत के खनिज संसाधन पर एक प्रकाश डालिए।
2. भारत में लौह अयस्क के भण्डारण, उत्पादन एवं वितरण का वर्णन कीजिये।
3. अभ्रक खनिज का वर्णन आन्ध्रप्रदेश राज्य के सन्दर्भ में कीजिये।
4. भारत में पाये जाने वाले कोयला के प्रादेशिक वितरण को समझाइये।

इकाई 10–शक्ति संसाधन– पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस, जलविद्युत

इकाई की रूपरेखा

10.1 प्रस्तावना

10.2 उद्देश्य

10.3 शक्ति संसाधन

10.4 पेट्रोलियम

10.5 प्राकृतिक गैस

10.6 जल विद्युत

10.7 सारांश

10.8 शब्द सूची

10.9 स्वमूल्यांकन प्रश्न व आदर्श उत्तर

10.10 उपयोगी पुस्तकें एवं सन्दर्भ

10.11 अभ्यास प्रश्न

10.1 प्रस्तावना

भारत भूगोल की यह 10वीं इकाई है इसमें आप भारत के महत्वपूर्ण शक्ति के संसाधनों यथा पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस व जल विद्युत ऊर्जा के बारे में पढ़ेंगे तथा आप यह भी जान पायेंगे कि भारत में ये संसाधन किस प्रकार उद्योगों, कारखानों, शहरों, कृषि को, पर्यावरण को समाज को, राजनीति व्यवथा को साथ–साथ अर्थव्यवस्था को प्रभावित करते है। इस इकाई के अध्ययन से हम यह भी सीखेंगे की हमारे देश में इन संसाधनों का वितरण कैसा है तथा ये किस प्रकार क्षेत्रीय असंतुलन पैदा करते है।

इस इकाई के अन्तर्गत आप सबसे पहले शक्ति के ससाधनों के बारे एक सामान्य जानकारी प्राप्त कर सकेंगे उसके इसके अन्तर्गत शामिल प्रत्येक

संसाधनों का भारत के सन्दर्भ में उत्पादन, भण्डारण, वितरण व विदेशों से होने वाले व्यापार की बारीकियों को समझेंगे तथा भविष्योन्मुखी नियोजन के भी प्रयास करेंगे। इस इकाई में आप शक्ति के संसाधनों से होने वाली महत्वपूर्ण पर्यावरणीय समस्याओं के बारे में जानेंगे तथा उनके नियोजन के प्रयासों का अवलोकन करेंगे।

10.2 उद्देश्य

इस इकाई के माध्यम से आप–

1. भारत में शक्ति के सांधनों का पर्याय समझ सकेंगे।
2. शक्ति के संसाधनों का वर्गीकरण कर सकेंगे।
3. पेट्रोलियम संसाधन की एक विस्तृत रूप रेखा तैयार कर सकेगे।
4. विभिन्न प्रकार के प्राकृतिक गैसों के बारे में समझ विकसित कर सकेंगे व भारत में इनके वर्तमान व भविष्योन्मुखी परिदृश्य को समझ सकेंगे।
5. जल विद्युत ऊर्जा का भारत में क्या महत्व है इसकी जानकारी प्रस्तुत इकाई के माध्यम से प्राप्त कर सकेंगे।
6. शक्ति के ससाधनों को लेकर के एक वैकल्पिक विचार प्रस्तुत कर सकेंगे।
7. सम्बन्धित परीक्षापयोगी प्रश्नों को समझ के आधार पर हल कर सकेगे।

10.3 शक्ति संसाधन

प्राचीन काल में जब शक्ति जनित करने वाली मशीनों जैसे कि स्टीय इंजन, विद्युत डायनमो तथा अन्तदर्हन ईंजन का आविष्कार नहीं हुआ था तब खेतों तथा व्यापार मार्गो पर केवल जानवरों तथा मानव शक्ति के द्वारा ही सारा कार्य किया जाता था। बड़े पैमाने पर औद्योगिक शक्ति का जनन पिछले केवल कुछ ही दशकों से आरम्भ हुआ है। विश्व के ईधन की दृष्टि से सम्पन्न क्षेत्र जिन्होंने औद्योगिक शक्ति का विकास कर लिया है आज विश्व के प्रमुख औद्योगिक वस्तुओं के उत्पादक बन गये है। पर्याप्त शक्ति के साधनों के बिना कोई भी देश एक शक्तिशाली राष्ट्र के रूप में नहीं उभर सकता। वास्तव में शक्ति के साधन ही किसी भी ाष्ट्र की औद्योगिक एवं कृषीय समृद्धि का आधार है। इनका बहुलता में पाया जाना तथा सुवितरित होना किसी भी देश के लोगों को उच्च जीवन स्तर प्रदान कर सकते है, यदि वहां के लोग बुद्धिमान तथा

साहसी है। ये किसी भी राष्ट्र की सभ्यता की शक्ति तथा विकास के सूचक है। ऊर्जा आर्थिक विकास का एक आवश्यक निवेश है, जो जीवन स्तर में सुधार लाता है। ऊर्जा को दो वर्गो में विभाजित किया जाता है–

1. परम्परागत ऊर्जा

इसके अन्तर्गत कोयला, पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस आदि सम्मलित किया जाता है।

2. गैर पम्परागत ऊर्जा

इसमें सौर, पवन, ज्वारीय, भूतापीय तथा बायो गैस ऊर्जा को शामिल किया जाता है। आई0एम0वाई0बी0–2016 के अनुसार वर्ष 2015–16 में ईधन खनिज उत्पादन का मूल्य 67 प्रतिशत है। जो कि कुल खनिज मूल्य का आधे से अधिक है, इसमें सर्वाधिक अंश कोयला (31.23 प्रतिशत) पेट्रोलियम (23.73 प्रतिशत) एवं प्राकृतिक गैस (9.43 प्रतिशत) का था।

10.4 पेट्रोलियम

पेट्रोलियम ऊर्जा का एक महत्वपूर्ण स्रोत है, यह किसी भी देश के त्वरित आर्थिक विकास के लिये आवश्यक है। यह एक मुख्य ईधन संसाधन है। यह अनेक उद्योगों को स्नेहल व कच्चे पदार्थ की आपूर्ति करता है ये उत्पाद यथा–कृत्रिम रबड़, डीजल, मिट्टी का तेल, पेट्रोल, विमान का ईधन, कृत्रिम रेशा, कार्बन ब्लैक, डाई, खाद्यरंग, द्रव्यरंग, विस्फोटक, छपाई का स्याही, फोटोग्राफी फिल्म, ग्रीस, कास्मेटिक, पेन्ट, ल्यूब्रिकेन्ट ऑयल, पैराफिन तथा मोम आदि। इसीलिए इसे तरल सोना कहा जाता है।आधुनिक समाज हेतु पेट्रोलियम एक बहुमूल्य उपहार है जिसका स्थलीय एवं हवाई परिवहन, ऊर्जा उत्पादन, सामरिक महत्व के कार्यो आदि में उपयोग किया जाता है।

10.4.1 प्राप्ति स्थल

कच्चा पेट्रोलियम लगभग 30 लाख वर्ष पुरानी सागरीय अवसादी शैलो से प्राप्त किया जाता है। भारत में टर्शियरी काल की चह्मनो अपनतियों और भ्रंश ट्रिप्स में पाया जाता है। भारत में पेट्रोलियम सम्भाव्य वाली मेसोजोइक और टर्शियरी शिलाओ का एक विस्तृत क्षेत्र है जो कि 27 बेसिनों में विभाजित है ये बेसिन उपरी असम, पं0 बंगाल, पं0 हिमालय, राजस्थान, कच्छ, उ0 गुजरात, गंगाघाटी, पूर्वीतट, अण्डमान, निकोबार, कैम्बे– बम्बई हाई के अपतटीप भागों में स्थित है।

10.4.2 खोज

भारत में तेल की खोज पहली बार 1860 में असम रेलवे तथा व्यापार कम्पनी द्वारा मार्गेरिटा उपरी असम में की गई। बाद में तेल की खोज डिग्बोई (1889) में हुई। 20 वीं सदी के प्रारम्भ में (1917) तेल की खोज बदरपुर (असम) में हुई। 1954 में तेल का उत्पादन नहारकटिया क्षेत्र में हुआ। तेल तथा प्राकृतिक गैस आयोग की स्थापना 1956 में हुई। तेल तथा प्राकृतिक गैस आयोग की मदद से तेल की खोज खंभात की खाड़ी में 1961 में तथा बाम्बे हाई में 1976 में की गई। भारत में पेट्रोलियम तथा प्राकृतिक गैस की खोज निम्नलिखित बेसिनों में हुई है– उपरी असम बेसिन, पश्चिमी बंगाल बेसिन, पश्चिमी हिमालय के बेसिन, राजस्थान–सौराष्ट्र–कच्छ बेसिन, उत्तरी गुजरात बेसिन, गंगा घाटी बेसिन, तटीय तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश तथा केरल बेसिन, अंडमान एवं निकोबार तटीय बेसिन खभांत, 'बॉम्बे हाई तथा बेसिन का अपतट।

10.4.3 भण्डार

पेट्रोलियम तथा रसायन मंत्रालय के अनुसार भारत में कच्चे तेल का कुल भण्डार 618.94 मिलियन टन है। इसमें 341.33 MT कच्चा तेल अभितटीय व 277.60 MT अपतटीय क्षेत्र में संचित है। (2018–19)।

देश में कच्चे तेल के संचित तीन प्रमुख क्षेत्र है–

1. जम्मू–कश्मीर से लेकर असम तक हिमालय के समानान्तर तराई मेखला।
2. गंगा, समुलज घाटियों सहित गंगा, महानदी, गोदावरी, कृष्णा एवं कावेरी के डेल्टा क्षेत्र।
3. पश्चिमी तट का मग्नतटीय क्षेत्र, खम्भात की खाड़ी और अरब सागर तथा बंगाल की खाड़ी में स्थित द्वीप।

10.4.4 उत्पादन

विश्व के कुल कच्चे तेल के उत्पादन में भारत का योगदान लगभग 1 प्रतिशत है। कच्चे तेल के शीर्ष 5 उत्पादन क्षेत्र/राज्य क्रमशः अपतटीय (49.31 प्रतिशत), राजस्थान (22.41 प्रतिशत), गुजरात (13.52 प्रतिशत) असम (12.60 प्रतिशत) व तमिलनाडु (1.15 प्रतिशत)

10.4.5 खनिज तेल क्षेत्र

भारत में चार प्रमुख खनिज तेल उत्पादक क्षेत्र है, यथा–

1. ब्रह्मपुत्र घाटी
2. गुजरात तट।
3. पश्चिमी अपतटीय क्षेत्र।
4. पूर्वी अपतटीय क्षेत्र।

1. बह्मपुत्र घाटी

यह देश की सबसे पुरानी तेल पेटी है जो लगभगे 1300 किमी0 तक दिहांग घाटी से सूरमा घाटी तक विस्तृत हैं भारत में सर्वप्रथम खनिज तेल का कुंआ उपरी असम के माकूम क्षेत्र में 1867 में खोदा गया। तदोपरान्त डिगबोई में 1889 में तेल कूए की खुदाई की गई। यहां के प्रमुख तेल उत्पादक केन्द्र है– डिगबाई (डिब्रूगढ़), नाहरकटिया, हगरीजन–मोरान, रूद्रसागर–लकवा तथा सुरमा घाटी।

2. गुजरात तट

यह क्षेत्र देश का लगभग 18 प्रतिशत तेल उत्पादन करता है। यहां तेल उत्पादन की दो पेटियां है यथा–

- खम्भात की खाड़ी के पूर्वी तट के सहारे, जहां अंकलेश्वर तथा खम्भात प्रमुख तेल क्षेत्र है।
- खेड़ा से मेहसाना तक (कलोल, सानन्द, नवगांव, कोशाम्बा, ढोलका, ओल्पाद मेहसाना तथा बचार जी प्रमुख तेल क्षेत्र है।
- अंकलेश्वर तेल क्षेत्र भरूच जिले में 30 किमी0 क्षेत्र पर विस्तृत है। अशुद्ध तेल कोयली तथा ट्राम्बे में परिष्कृत किया जाता है।
- खम्भात–लुनेज क्षेत्र, जिसे गान्धार क्षेत्र भी कहते है बडोदरा के पश्चिम में स्थित है।
- अहमदाबाद, कलोल क्षेत्र खम्भात बेसिन के उत्तर में अहमदाबाद के चारो ओर स्थित है।

3. पश्चिमी अपतटीय क्षेत्र

इस क्षेत्र में देश का कुल 39.56 प्रतिशत कच्चा तेल उत्पादित किया जाता है, इसके अन्तर्गत तीन क्षेत्र शामिल है–

- बाम्बे हाई क्षेत्र देश का विशालतम पेट्रोलियम उत्पादक क्षेत्र है। अतिदोहन के कारण इसका उत्पादन निरन्तर घट रहा है।
- राज्यों सर्वाधिक कच्चे तेल का उत्पादन राजस्थान में होता है।
- बेसिन तेल क्षेत्र बाम्बे हाई के दक्षिण–पश्चिम में स्थित है। इस क्षेत्र के तेल भण्डार बाम्बे हाई से अधिक बड़े हैं
- अलिया बेट तेल क्षेत्र भावनगर से 45 किमी0 दूर खम्भात की खाड़ी में स्थित है।

4. पूर्वी अपतटीय क्षेत्र

गोदावरी–कृष्णा नदी बेसिन के अपतटीय एवं अभितटीय दोनों भागों मे तेल पाया जाता है।

- अभितटीय क्षेत्र में इसका विस्तार गोदावरी धाले (आन्ध्रप्रदेश) से लेकर तमिलनाडु के तजांवुर क्षेत्र तक है।
- कृष्णा–गोदावरी अपतटीय बेसिन में स्थित रवा (RAVA) क्षेत्र में तेल प्राप्त हुआ है अन्य तेल क्षेत्र अमलापुर (आन्ध्रप्रदेश) नरीमनम तथा कोइरकरापल्ली (कावेरी बेसिन) में स्थित है। अशुद्ध तेल क्षेत्र चेन्नई के निकट पनाइगुडि में परिष्कृत किया जाता है।
- केयर्न एनर्जी एवं ONGC कम्पनियों द्वारा राजस्थान के बाडमेर जिले में मंगला, भाग्यम, ऐश्वर्य नामक तेल क्षेत्रों की खोज की है।
- दक्षिणी चीन सागर में तेल एवं गैस की खोज हेतु ONGC ने वियतनाम की कम्पनी पेट्रो वियतनाम से समझौता किया था। चीन के विरोध के कारण यह एक अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा बना हुआ है।

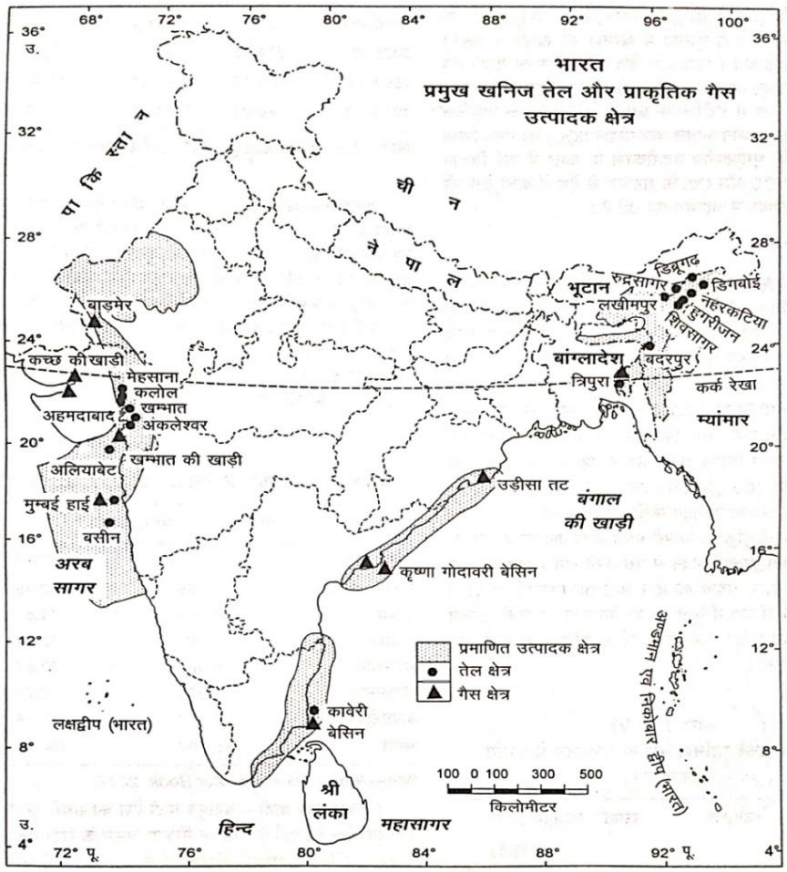

चित्र–1

5. सम्भाव्य क्षेत्र

ये वे क्षेत्र है जहां भविष्य में खनिज तेल पाये जाने की सम्भावना है। ये क्षेत्र है–

अ– मन्नार की खाड़ी में (तिरूनवेल्ली के समीप),।

ब– ज्वाइन्ट कालिमेर एवं जाफना प्रायद्वीप और अवन्तगी–कराईक्कुडि तटो के बीच का अपतटीय क्षेत्र।

स– बंगाल की खाड़ी में (12^0N– 16_{0N} तथा 84^0E– 86^0E के मध्य स्थित अपतटीय गहरा क्षेत्र),।

द– महानदी, गोदावरी, कृष्णा एवं कावेरी नदियों का सागरीय डेल्टा क्षेत्र।

य– द0 बंगाल एवं बलेश्वर तट तथा 'स्ट्रेच ऑफ नो ग्राउण्ड' के बीच का सागरीय क्षेत्र,।

र– राजस्थान का शुष्क क्षेत्र,।

ल– कश्मीर, पंजाब एवं हरियाणा से पं0 उत्तर प्रदेश तक फैली विस्तृत मेखला।

व–अण्डमान द्वीप समूह के पश्चिम का अपतटीय क्षेत्र। हाल ही में भारत सरकार ने विश्व प्रतिस्पर्धा को आकर्षित करते हुये नई अन्वेषण लाइसें नीति के (NELP) तहत 48 नये तेल क्षेत्रों को तेल की खोज हेतु खोल रखा है।

10.4.6 आयात

कच्चे तेल तथा पेट्रोलियम उत्पादों के क्षेत्र में भारत आत्मनिर्भर नहीं है। भारत विश्व में खनिज तेल का चौथा सबसे बड़ा उपभोक्ता है। इसलिए प्रतिवर्ष उसे बड़ी मात्रा में खनिज तेल विदेशों से आयात करना पड़ता है।

10.4.7 तेल शोधन शाला

तेल क्षेत्रों से निकाले गये कच्चे तेल में अनेक अशुद्धियां पाई जाती है। जिन्हें दूर करने के लिए इसका परिष्करण आवश्यक हो जाता है। यह परिष्करण एक जटिल प्रक्रिया है जिसमें भारी निवेश की जरूरत होती है। अप्रैल, 2019 तक देश की तेलशोधन संस्थापित क्षमता 249.36 MT प्रतिवर्ष थी। ज्ञातव्य है कि स्वतंत्रता के समय यह क्षमता 0.25 MT थी। कच्चा तेल शोधन क्षमता में तीव्र गति से हुये विस्तार के चलते देश अब पेट्रोलियम उत्पादो का निर्यातक हो गया है। उल्लेखनीय है कि 1 अप्रैल 2017 तक देश में 23 तेल शोधनशालायें थी जिसमें 18 सार्वजनिक क्षेत्र की, 3 निजी तथा 2 संयुक्त उपक्रम की थी। सार्वजनिक क्षेत्र की 18 तेल शोधन शालाओं में 9 का स्वामित्वIOCL, 2 चेन्नई पेट्रोलियम के पास, 2, BPCL 1 तेल एवं प्राकृतिक गैस लि0, (ONGC) 1 नूमालीगढ़ रिफाइनरीज लि0 के पास, 1 मंगलोर रिफाइनरीप एण्ड पेट्रोकेमिकल लि0 के पास, 2 रिलायंस इंडस्ट्रीज लि0 के पास व 1 एस्सार आयल लि0 के पास तथा संयुक्त क्षेत्र के पास दो का स्वामित्व था।

10.4.8 पाइपलाइन

तेल के कुए से कच्चा तेल तथा तेल–शोध कारखानों से उत्पाद को बाजार तक पहुचाने के लिये सामान्यतः परिवहन पाइपलाइनों द्वारा किया जाता है। तेल तथा पेट्रोलियम का पाइप लाइनो द्वारापरिवहन सस्ता, प्रभावी तथा सुरक्षित माना जाता है। इन लाभों को ध्यान में रखते हुये भारत में पाइप लाइनों का एक जाल विकसित किया गया है। 1 नवम्बर 2016 की स्थिति के अनुसार देश में परिचालित प्राकृतिक गैस पाइपलाइन का कुल नेटवर्क 16240.4 किमी0 है, जबकि निर्माणाधीन गैस पाइप लाइन का नेटवर्क 10258 किमी0 है। ध्यातव्य

है, कि हजीरा, विजयपुर, जगदीशपुर–GREP दाहेज, विजयपुर, CHVJ/UDPL 4222 KMS देश की सबसे बड़ी पाइप लाइन है।

कुछ प्रमुख पाइप लाइने निम्न प्रकार है–

1. नाहरकटिया–नूनमटी–बरौनी पाइप लाइन– (1152 किमी0)

यह पाइप लाइन 78 नदियों को पार करती है तथा इस पर कुल 9 पम्पिंग स्टेरान तथा अनेक सहायक पाइप लाइने है–

1. नूनमटी–सिलीगुड़ी पाइप लाइन।
2. लकवा– रूद्रसागर–बरौनी पाइप लाइन (1968)।
3. बरौनी–हल्दिया पाइप लाइन (1966)।
4. दुलिया जान–बोगांई गांव–बरौनी।
5. हल्दिया–मौरी ग्राम–राजबन्ध (1998)।

2. सलाया (कच्छ)– मथुरा– पानीपत (1870किमी0) पाइप लाइन।

3. मुन्द्रा–पानीपत पाइप लाइन (1174 किमी0)।

4. मथुरा–जालंधर पाइप लाइन।

5. गुजरात राज्य की पाइप लाइनें–

- कलोल–साबरमती–पाइप लाइन।
- कोयली–विरामगाय–सिधपुर पाइप लाइन।
- कैम्बे–धुवारन गैस पाइप लाइन।
- अंकलेश्वर–उत्तरान गैस पाइप लाइन।
- अंकलेश्वर–बड़ोदरा गैस पाइप लाइन।
- कोयली–अहमदाबाद प्रोडक्ट्स पाइप लाइन।

6. मुम्बई हाई–मुम्बई– अंकलेश्वर–कोयली पाइप लाइन।

7. मुम्बई–पूणे तथा मुम्बई मनमाड–मागिंला पाइप लाइन।

8. विजाग–विजयवाड़ा–सिंकरदाबाद पाइप लाइन।

9. काण्डला (मेहसाना)– भटिण्डा पाइप लाइन।

10. चेन्नई–त्रिची–मदुरै पाइप लाइन (IOC द्वारा निर्माणाधीन)।

चित्र–2

11. मंगला (राजस्थान)– सलाया–मथुरा हीटिड पाइप लाइन–

वाडमेर से केयर्न इण्डिया और ONGC ने हीटिड तेल पाइप लाइन के द्वारा गुजरात के सलाया तक मोम की अधिक मात्रा वाले कच्चे तेल को पहुचाने में जून 2010 को सफलता प्रापत की थी (विश्व की सबसे लम्बी)।

12. दाभोल–बंगलुरू प्राकृतिक गैस पाइप लाइन

यह पाइपलाइन दायोल (MH) व बंगलुरू (KN) को जोड़ती है।

13. हजीरा– विजयपुर– जगदीशपुर (HUJ) गैस पाइप लाइन (4222किमी0)

यह पश्चिमी तटीय तेल क्षेत्रों का सम्बन्ध देश के आन्तरिक भागों से स्थापित करता है। यह विश्व की सर्वाधिक लम्बी गैस पाइप लाइन है। यह कावस गुजरात, अन्ता, (राजस्थान) तथा औरया, (UP) के तीन विद्युत स्टेशनों तथा बीजापुर, सवाई माधोपुर, जगदीशपुर, शाहजहांपुर, आँवलातथा बबराला के 6 उर्वरक संयत्रों को प्राकृति गैस प्रदान करते है।

10.5 प्राकृतिक गैस

प्राकृतिक गैस अधिकांशतः खनिज तेल के साथ मिलती है। यह तेल भण्डार के ऊपर स्थित होती है तथा तेल कूप वेधन के समय सबसे पहले बाहर निकती है। इसका उपयोग तापीय शक्ति संयत्रों, उद्योगों घरेलू ईधन तथा उर्वरकों के उत्पादन में किया जाता है।

10.5.6 संचित भण्डार

भारत में प्राकृतिक गैस की खोज और उत्पादन का कार्यONGC एवं OIL द्वारा तथा इसके प्रसंस्करण और वितरण का कार्य GAIL द्वारा किया जाता है। इसका बृहद संचित भण्डार मुम्बई हाई एवं बसीन तेल क्षेत्रों में (नालम, मुक्ता पन्ना) पाया जाता है। इसके अलावा जगतिया एवं गोधा (गुजरात), नहरकटिया व मोरान (असम), नेपाल्टर, मंगमडम, अवाड़ी विरूगंबकम (तमिलनाडु), बरानुरा, अपर नुरे (त्रिपुरा) बाडमेर, चरसवाला (राजस्थान), नानथिक, मियाओ युंग, लापटंग युंग (अरूणांचल प्रदेश), ज्वालामुखी कागड़ा (HP), फिरोजपुर (पंजाब), मौसर मदरपुर (जम्मू कश्मीर) तथा मंदिनीपुर (पं0 बंगाल) में भी गैस भण्डार प्राप्त हुये है। हाल ही में कृष्णा–गोदावरी बेसिन में रिलायन्स इंडस्ट्रीज, ONGC और गुजरात स्टेट्स पेट्रोलियम कार्पोरेशन द्वारा प्राकृतिक गैस के विशाल भण्डार की खोज की गई है।

10.5.7 उत्पादन

वर्ष 2018–19 में प्राकृकि गैस का उत्पादन 32.05 BCM था। जिसमें अपतटीय क्षेत्र का हिस्सा 68 प्रतिशत था। प्राकृतिक गैस के शीर्ष उत्पादक क्षेत्र राज्य क्रमशः अपतटीय क्षेत्र (68 प्रतिशत), असम (9.61 प्रतिशत), त्रिपुरा (4.84 प्रतिशत)राजस्थान (4.29 प्रतिशत), गुजरात (4.20प्रतिशत)व तमिलाडु (3.64%) है।

इसमें भी सार्वजनिक क्षेत्र की हिस्सेदारी 83.64 प्रतिशत व निजी क्षेत्र की हिस्सेदारी 16.35 प्रतिशत थी।

10.5.8 उपयोग

सन् 1991–92 में देश में औसतन प्रतिदिन 30 मिलियन घन मीटर गैस का उपयोग होता था जो 2007–08 में बढ़कर प्रतिदिन 90 मिलियन घन मीटर हो गया। वर्तमान समय में होने वाले कुल खपत का 35 प्रतिशत विद्युत उत्पादन में 28.6 प्रतिशत उर्वरक निर्माण में, 9.7 प्रतिशत औद्योगिक ईधन, 4.2 प्रतिशत, पेट्रो रसायन एवं शेष 22.5 प्रतिशत अन्य कार्यो में इस्तेमाल होता है।

- अंकलेश्वर की गैस का उपयोग गुजरात फर्टिलाइजर कारपोरेशन द्वारा किया जाने लगा है।

- द0 बसीन की गैस थाल वैशिट (महाराष्ट्र) और हाजिरा (गुजरात) के उर्वरक संयत्रों में की जायेगी।

- HBJ की पाइप लाइन से औरेया (UP) कवास (गुजरात) एवं अन्ता (राजस्थान) में तापीय संयत्र लगाये जा रहे है।

- असम में नामरूप के उर्वरक संयत्र की क्षमता में वृद्धि के अलावा दुलियाजान के पास एक नये उर्वरक के कारखाने की स्थापना की जा रही है।

- हाल में रिलायंस उद्योग समूह में दादरी (UP) के समीप, कृष्णा–गोदवरी के क्षेत्र के गैस से एक विशाल विद्युत परियोजना के निर्माण की योजना बनाई है।

- देश के नगरीय भागों में तले शोधन शालाओं से उत्पन्न एल0पी0जी0 को घरेलू ईधन के रूप में काफी लोकप्रियता मिली है।

- वर्तमान समय में देश में बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए ईरान, म्यामार और मध्य एशिया के देशों में पाइपलाइन द्वारा गैस लाये जाने के लिये अन्तर्राष्ट्रीय प्रयास किये जा रहे है।

- 24 अक्टूबर 2016 को प्रधानमंत्री द्वारा वाराणसी (उ0प्र0) में ऊर्जागंगा नामक गैस पाइप लाइन की आधार शिला रखी गयी। इस परियोजना का उद्देश्य देश के पूर्वी क्षेत्रों में रहने वाले नागरिकों को पाइप लाइन द्वारा गैस (LPG) व वाहनो को (CNG) गैस उपलब्ध कराना है। भारत सरकार द्वारा संचालित यह परियोजना GAIL के द्वारा क्रियान्वित की जा रही है। इस

परियोजना के विकसित होने पर देश के सात पूर्वी शहर यथा वाराणसी, पटना, राची, भुवनेश्वर, जमशेदपुर व कोलकाता सबसे अधिक लाभार्थी होंगे।

10.6 जल विद्युत

जल विद्युत एक नवीकरणीय, पर्यावरण मैत्रीपूर्ण तथा ऊर्जा का संस्ता साधन है। भारत में जल विद्युत का विशाल विभव है। केन्द्रीय विद्युत प्राधिकरण (CEA) द्वारा किये गये अध्ययन के अनुसार देश में जल विद्युत स्थापित क्षमता 45798 मेगावाट (31 जनवरी 2021) है। भारत में प्रथम जल विद्युत संयत्र 1897 में दार्जिलिंग में 130KW क्षमता की स्थापित की गई। इसके बाद 1902 में कावेरी नदी (कर्नाटक) पर शिवसमुद्राम में जल विद्युत केन्द्र स्थापित हुआ।

1975 में जल विद्युत विकास के लिये राष्ट्रीय जल विद्युत निगम (N.H.P.C) की स्थापना की गइ।

10.6.1 जल विद्युत विभव

हिमालय क्षेत्र में देश का लगभग आधा जल शक्ति विभव मौजूद है। यहां अधिक वर्षा, गहरा, हिमाच्छादन, तीवग्रामी सदावाहिनी नदियाँ तथा बांध बनाने के लिये उपयुक्त स्थानों की सुविधाएं प्राप्त है। किन्तु विषम धरातल तथा उपभोग के केन्द्रों से दूरी होने के कारण जल शक्ति का विकास सीमित ही हुआ है। पश्चिमी घाट एवं प्रायद्वीप का मध्यवर्ती उच्च भूमियों में मध्यम विभव मिलता है। जबकि राजस्थान, गुजरात तथा उत्तरी मैदानों में जल शक्ति का निम्न विभव पाया जाता हैं। शीर्ष पांच जल शक्ति स्थापन क्षमता वाले राज्य क्रमशः कर्नाटक, महाराष्ट्र मध्य प्रदेश, पंजाब व उत्तराखण्ड है। (CEA : DEC 2019) शीर्ष पांच जल विद्युत उत्पादक राज्य क्रमशः पंजाब, कर्नाटक, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र व मध्य प्रदेश है। (CEA : DEC 2019) विश्व में जल उत्पादक देश में भारत का सातवां स्थान है, इस कड़ी में शीर्ष से क्रमशः चीन, ब्राजील, कनाड़ा, यू0एस0ए0, रूस, नार्वे है।

10.6.2 देश की प्रमुख जल विद्युत परियोजनाये

1. **केरल**–इदुक्की पनियार, शोलापार, पल्लीवासल, नारिया मंगलम कुटिपाड़ी, सेन्गुलम, पेरिंगल कुथु।

2. **तमिलनाडु**– कुण्डा, मैटूर, पेरियार, कोडियार, शोलियार, पायकारा, अलियार, मोयार, सुरूलियार, सरकारपति, पापानाशम।

3. **गुजरात**– उकाई, नर्मदा घाटी।

4. **मध्य प्रदेश**– गांधी सागर, तवा, इदंरा सागर, ओंकारेश्वर।

5. **महाराष्ट्र**– कोयना, टाटा, मीरा, खोपली, शिवपुरी, वैतरणी।

6. **जम्मू–कश्मीर**– निचली झेलम, सलाल, किश्तरवार, बगलिहार, उरी, दुलहस्ती, निम्मो–बाजगो, प्रकलटुल।

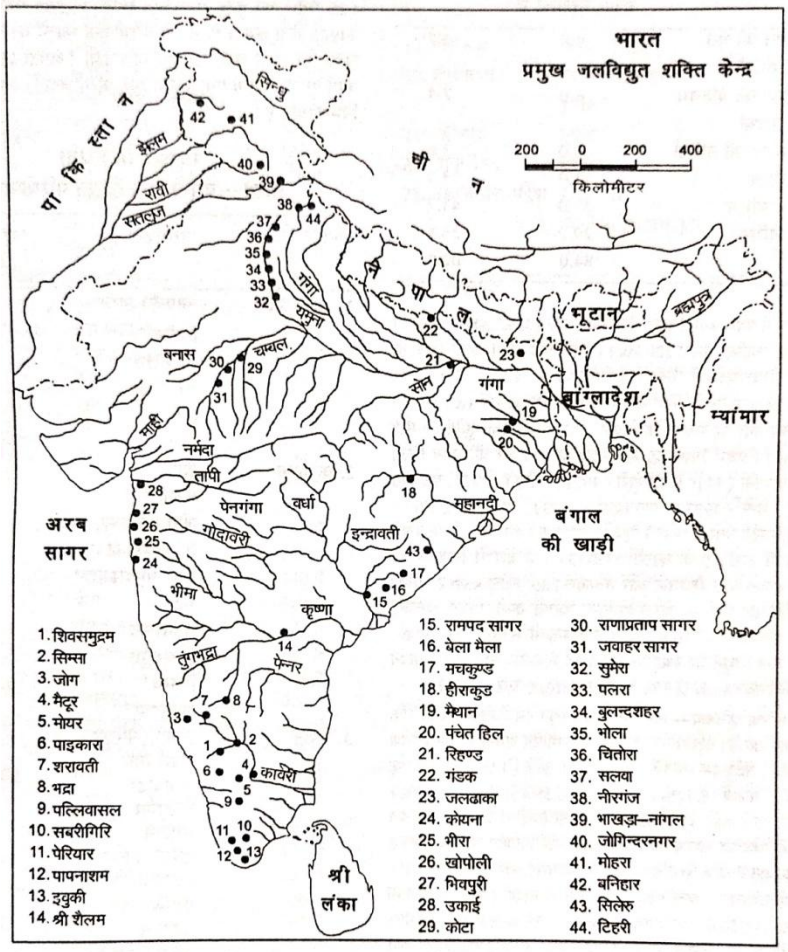

चित्र–3

7. **हिमांचल प्रदेश**– बसी, बाटा, नाथपा झाकरी, चमेरा, पार्वती, बैरा सिडल अधोभौमिक संजय जल विद्युत परियोजना।

8. **आन्ध्रप्रदेश**–नागर्जुन सागर, मचकुण्ड, तुगंभद्रा, निजाम सागर, उपरी व निचली सिलेरू, श्री शैलम।

9. **कर्नाटक**– शरावती, काली नदी, जोग, शिवसमुद्राम, मुनिराबाद।

10. **पंजाब–हरियाणा**–भाखड़ा, पोंग, देहर, गंगावाल, कोटला, सनम।

11. **राजस्थान**–राणाप्रताप सागर व जवाहर सागर।

12. **उत्तर प्रदेश**– रिहन्द, चिल्ला, गंगा ग्रिड, माताटीला, यमुना।

13. **बिहार–झारखण्ड**–गण्डक, कोसी, सुवर्णरेखा, मैथान, तिलैया, कोयलकारो।

14. **पश्चिमी बंगाल**–पंचेत हिल, जल ढाका।

15. **ओड़िशा**– हीराकुण्ड, बालिमेला।

16. **असम**–अमियाम, कोपली।

17. **मेघालय**–किरदेम कुलई।

18. **सिक्किम**–तीस्ता।

19. **मणिपुर**– लोकटक।

20. **अरूणांचल प्रदेश**–तवांग व तातो, सुबनसिरी, कामेंग, रंगा, दिबांग सिप्पी।

21. **नागालैण्ड**–दोयांग।

22. **उत्तराखण्ड**– टनकपुर, रामगंगा। कालागढ़ पथरी, धौली गंगा, टेहरी, खटीमा किशऊ।

10.7 सारांश

संक्षेप में हम कह सकते है कि शक्ति के साधन किसी भी देश के गतिशील होने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। इनके बिना कोई देश प्रगति नहीं कर सकता। इस इकाई के माध्यम से आपने यह भी देखा कि पेट्रोलियम व प्राकृतिक गैस एक दूसरे के पूरक होते है। ये पाये भी साथ ही में जाते हैं हमने यह भी देखा कि हरित ऊर्जा के क्षेत्र में जलविद्युत ऊर्जा की भूमिका भारत के सन्दर्भ में महत्वपूर्ण हो रही है। आये दिन नई जलविद्युत परियोजनाओं का विकास हो रहा है जो कि हमारे देश की हरित ऊर्जा में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका स्पष्ट कर रहे है।

10.8 शब्द सूची

Water potential	**जल सम्भाव्यता**
Hydro electric	**जल विद्युत**

Ptro chemicals	**पेट्रो रसायन**
Industrial cluster	**औद्योगिक गुच्छ**
Oft Shore	**अपतटीय**

शब्दार्थ

गैरपरम्परागत	आधुनिक एवं पर्यावरणीय साधन।
ONGC	ऑयल एण्ड नेचुरल गैस कार्पोरेशन।
NELP	नई अन्वेषण लाइसेंस नीति।
MT	मिलियन टन।
IOCL	इडियन आयल कार्पोरेशन लिमिटेड।
HVJ	हजीरा–विजयपुर– जगदीशपुर।
GAIL	गैस अपार्टी इण्डिया लिमटेड।
NHPC	राष्ट्रीय जल विद्युत निगम।
CEA	केन्द्रित विद्युत प्राधिकरण।

10.9 स्वमूल्यांकन प्रश्न व आदर्श उत्तर

1. कोइलकारी जल विद्युत परियोजना निम्नलिखित में से किस राज्य में है–

(अ) उत्तराखण्ड (ब) हिमांचल प्रदेश (स) झारखण्ड (द) तमिलनाडु

2. कैथर्न उनर्जी का मुख्यालय है–

(अ) स्काटलैण्ड (ब) ब्राजील में (स) दक्षिण कोरिया (द) U.S.A.में

3. नवग्राम तेल क्षेत्र स्थित है।

(अ) झारखण्ड में (ब) हिमांचल प्रदेश (स) असम (द) तमिलनाडु

4. नूनमाटी का तेल शोधनशाला का कारखाना कहा अवस्थित है।

(अ) बिहार (ब) असम (स) गुजरात (द) तमिलनाडु

5. भारत में सर्वप्रथम तेल/ऊर्जा संकट कब हुआ।

(अ) 1950, 1960 (ब) 1930, 1940 (स) 1990, 2000 (द) 1970,1980

6. भारत में अधिकांश प्राकृतिक गैस का उत्पादन निम्न में से कहा किया जाता है।

(अ) आन्ध्र प्रदेश तट (ब) गुजरात तट

(स) मुम्बई हाई से (द) तमिलनाडु तट से

आदर्श उत्तर 1–(ब), 2–(अ), 3–(द) 4–(ब), 5–(द), 6–(स)

10.10 उपयोगी पुस्तकें एवं सन्दर्भ :–

1. प्रो0 जगदीश सिंह, भारत : भौगोलिक आधार एवं आयाम, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर।
2. प्रो0 आर0 सी0 तिवारी– भारत का भूगोल, प्रवालिका पब्लिकेशन, प्रयागराज।
3. डॉ0 बी0सी0जाट, भारत का भूगोल, पंचशील प्रकाशन, जयपुर।
4. प्रो0 काशीनाथ प्रो0 जगदीश सिंह, आर्थिक भूगोल, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर।
5. प्रो0 आर0एल0 सिंह– इण्डियाः रीजनल ज्योग्राफीN.G.S.I गोरखपुर।

10.11 अभ्यास प्रश्न :–

1. भारत में शक्ति के साधन की महत्वता को स्पष्ट करते हुये, प्रमुख प्रकारों का संक्षिप्त पश्चिम दीजिए।
2. भारत में पेट्रोलियाम उत्पादन एवं वितरण की विस्तृत चर्चा कीजिए।
3. भारत में प्राकृतिक गैस के संभाव्य भण्डारणों पर अपने विचार प्रकट कीजिए।
4. विश्व के सन्दर्भ में भारत में जलविद्युत ऊर्जा की स्थिति को स्पष्ट कीजिए।
5. भारत में पायी जानी वाली प्रमुख जल विद्युत परियोजनाओं का राज्यवार वर्णन प्रस्तुत कीजिये।
6. भारत में प्रमुख पेट्रोलियम उत्पादन क्षेत्रों की समीक्षा कीजिए।
7. पर्यावरणीय दृष्टि से जल विद्युत ऊर्जा का क्या महत्व है, स्पष्ट कीजिए।
8. प्रमुख पेट्रोलियम उत्पादों की एक सारणी बनाइये।

इकाई–11 परमाणु ऊर्जा, ऊर्जा संरक्षण, हरित ऊर्जा

इकाई की रूपरेखा

11.1 प्रस्तावना
11.2 उद्देश्य
11.3 परमाणु ऊर्जा
11.4 ऊर्जा संरक्षण
11.5 हरित ऊर्जा
11.6 सारांश
11.7 शब्द सूची
11.8 स्वमूल्यांकन
11.9 सन्दर्भ व उपयोगी पुस्तके
11.10 अभ्यास प्रश्न।

11.1 प्रस्तावना

भारत भूगोल की यह 11वीं ईकाई हैं इसमें ऊर्जा तथा उसके विभिन्न प्रकारों जैसे परमाणु ऊर्जा एवं हरित ऊर्जा के बारे में सीखने के बाद ऊर्जा संरक्षण के मूलभूत बिन्दुओं को समझ सकेंगे।आप यह भी जान सकेंगे कि परमाणु ऊर्जा नाभिक से निकलने वाली ऊर्जा का एक रूप हैं, यह दो तरह से उत्पादित किया जाता हैंः विखडन (जब परमाणुओं के नाभिक कई भागों में विभाजित हो जाय) दूसरा संलयन (जब नाभिक एक साथ जुड़ जाये)। इन दोनो ही प्रक्रियाओं के दौरान ऊर्जा विमुक्त होती हैं।आप यह भी सीख सकेंगे की किस प्रकार बिना संसाधन के बिना विकास सम्भव नही हैं। लेकिन संसाधन का विवेकहीन उपभोग तथा अत्याधिक उपयोग बहुत सारे सामाजिक, आर्थिक तथा पर्यावरणीय समस्या उत्पन्न कर देते है। अतः ऊर्जा का संरक्षण अति आवश्यक हो जाता हैं। यह भी जान सकेंगे कि किस प्रकार संसाधन के संरक्षण के लिये विभिन्न जन नायक, चिंतक तथा वैज्ञानिक आदि का प्रयास विभिन्न स्तरों पर होता रहता हैं।आप हरित ऊर्जा के विषय में विशेष जानकारी प्राप्त कर सकेंगे कि कार्बन मुक्त हाइड्रोजन या ग्रीन हाइड्रोजन एक तरह की स्वच्छ ऊर्जा है जो ट्रांजिशन ईधन के तौर पर इस्तेमाल किए जाने वाली प्राकृतिक गैस (CNG), कोयला, डीजल तथा भारी ईधन से तुलनात्मक रूप से स्वच्छ हैं। आप इस ईकाई के माध्यम से यह भी जान सकेंगे कि किस प्रकार हरित ऊर्जा, नवीकरणीय ऊर्जा जैसे कि सौर ऊर्जा का इस्तेमाल कर पानी को हाइड्रोजन और आक्सीजन में बांटने से पैदा होती हैं।

11.2 उद्देश्य

इस ईकाई के अध्ययन से आप–

1. ऊर्जाकी मूल विचारधारा से अवगत हो सकेंगे,
2. परमाणु ऊर्जा क्या हैं तथा यह किस प्रकार से ऊर्जा की वैश्विक मांग की पूर्ति कर सकता है एवं पर्यावरण पर इसका क्या प्रभाव पड़ता हैं आदि की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
3. ऊर्जा संरक्षण के मुख्य उद्देश्यों की पहचान कर सकेगे तथा विभिन्न विद्वानों के योगदानों के आधार पर अपनी सोच को भी स्थापित कर सकेंगे।
4. हरित ऊर्जा के बारे में जान सकेंगे तथा इसके वैश्विक विस्तार एवं महत्वता के सन्दर्भ में विशेष जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
5. भारत में नवीकरणीय ऊर्जा के विकास की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

11.3 परमाणु ऊर्जा

बेहतर मानव कल्याण तथा सतत आर्थिक विकास के लिए ऊर्जा आवश्यक हैं। परमाणु ऊर्जा, लोगों तक स्वच्छ, सस्ती व विश्वसनीय ऊर्जा के वितरण को सुनिश्चित करता है, जिससे जलवायु परिवर्तन के हानिकारक प्रभावों को कम किया जा सकता हैं। यह वैश्विक ऊर्जा आपूर्ति का एक महत्वपूर्ण स्रोत हैं तथा आने वाले दशकों में इसका उपयोग बढ़ने की उम्मीद हैं। IAEA (अन्तर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा संस्थान) दुनिया भर में मौजूदा और नए परमाणु कार्यक्रमों का समर्थन करके, ऊर्जा, योजना, विश्लेषण और परमाणु सूचना और ज्ञान प्रबन्धन में 'नवाचार और निर्माण' क्षमता को बढ़ावा देकर परमाणु ऊर्जा के कुशल और सुरक्षित उपयोग को बढावा देता हैं। यह एजेंसी देशो के विकास के लिए बढ़ती ऊर्जा की मांग को पूरा करने में मदद करती हैं, जबकि ऊर्जा सुरक्षा में सुधार, पर्यावरण और स्वास्थ्य प्रभावों को कम करने और जलवायु परिवर्तन को कम करने में मदद करती हैं। ऊर्जा के नये स्त्रोतों में नाभिकीय ऊर्जा का महत्वपूर्ण स्थान हैं। वर्तमान में नाभिकिय ऊर्जा विद्युत उत्पादन हेतु तापीय ऊर्जा, जलविद्युत एवं नवीकरणीय ऊर्जा स्त्रोतों के उपरान्त चौथा प्रमुख स्त्रोत है।

भारत में परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम की शुरूवात भारत में परमाणु शक्ति के जनक डा0 होमी जहाँगीर भाभा के निर्देशन में परमाणु ऊर्जा आयोग की स्थापना (AEC-1948) की गई थी। परमाणु ऊर्जा विभाग की स्थापना (DAE) 1954 में की गयी, उसी वर्ष ट्राम्बे में परमाणु ऊर्जा संस्थान स्थापित किया गया, जिसका नाम बदलकर 1967 में भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र (BARC) रखा गया। देश में परमाणु विद्युत गृहों के निर्माण, स्थापना संचालन और देखरेख के लिये

भारतीय परमाणु विद्युत निगम (NPCIL) का गठन किया गया।

देश में नाभिकीय विद्युत की स्थापित क्षमता 31 जनवरी, 2021 तक 6780 मेगावॉट (1.9%) थी, जिसे 2032 तक स्थापित क्षमता 27500 मेगावाट करने का सरकार का लक्ष्य हैं। देश में नाभिकीय विद्युत के कुल 22 रियेक्टर वर्तमान हैं जिसमें से 8 विभिन्न केंद्रो पर कार्यरत है, 4 प्लाण्ट निर्माणाधीन हैं व 20600 मेगावॉट के कुल 10 प्लाण्ट प्रस्तावित है। ध्यातव्य है कि कुडनकुलम संयत्र के दूसरे परमाणु ऊर्जा रियेक्टर का परिचालन देश के 22 वें परमाणु ऊर्जा रियेक्टर के रूप में 10 जुलाई 2016 को प्रारम्भ हो गया। इस प्रकार अब देश की कुल स्थापित परमाणु ऊर्जा क्षमता 6780 मेगावॉट हो गई। ज्ञातव्य है कि तमिलनाडु के तिरूनवेली जिले में स्थित 1000 मेगावॉट क्षमता वाला यह संयत्र परियोजना भारत एवं रूस की संयुक्त परियोजना हैं। भारत में परमाणु शक्ति के विकास के लिए अनके अनुसंधान रिएक्टर बनाये गये हैं। इनमें अप्सरा –I (1956), साइरस (1960, जो कि अब बन्द हो गया हैं), जर्लिना (1961), पूर्णिमा–I (1972), पूर्णिमा–II (1984), ध्रुव (1985), कामिनी तथा पूर्णिमा–III (1990) सम्मिलित हैं, भारत में तीन शताब्दी से अधिक समय तक परमाणु ऊर्जा की आवश्यकता की पूर्ति के लिये थोरियम के पर्याप्त भण्डार उपलब्ध हैं।

सारणी संख्या 11.1

भारत में नाभिकीय ऊर्जा केन्द्र : कार्य शील केन्द्र एवं रियेक्टरों की संख्या

क्रम संख्या	विद्युत गृह	राज्य	रियेक्टर्स व क्षमता	कुल क्षमता (मेगावाट)
1.	कैग्रा	कर्नाटक	220×4	880
2.	काकरापारा	गुजरात	220×2	440
3.	कलपक्कम्	तमिलनाडू	220×2	440
4.	नरौरा	उत्तर प्रदेश	220×2	440
5.	रावतभाटा	राजस्थान	100×1 200×1 220×4	1180 (कनाड़ा के सहयोग)
6.	तरापुर	महाराष्ट्र	160×2 540×2	1400(USA के सहयोग)
7.	कुडनकुलम	तमिलनाडु	1000×2	2000(रूस की सहयोग से

कुल 22 रियेक्टरों का योग 6780 मेगावाट

भारत में परमाणु विद्युत शक्ति का उत्पादन अमेरिका की सहायता से तारापुर (महाराष्ट्र) में 1969 में स्थापित 320 मेगावाट क्षमता के प्रथम परमाणु शक्ति केन्द्र की स्थापना के साथ प्रारम्भ हुआ (सारणी 11.1)। रावतभाटा (राजस्थान) में कनाडा की सहायता से स्थापित दो दाबित भारी जल रिएक्टरों (PHWRs) ने वाणिज्यिक उत्पादन 1972 व 1980 से प्रारम्भ किया। तदोपरान्त, चेन्नई के निकट कलपक्कम में 220 मेगावाट के दो स्वदेशी रिएक्टर 1984 व 1986 में स्थापित किये गये। इसके पश्चात् 220 मेगावाट के दो अन्य रिएक्टर नरौरा (उत्तर प्रदेश) में 1989 व 1991 में स्थापित किये गये। दाबित भारी जल रिएक्टर की देशी प्राविधिकी से 1992 तथा 1995 में काकरापारा (गुजरात) में 220 मेगावाट क्षमता के दो संयत्रों की स्थापना के साथ ही वाणिज्यिक प्रौढ़ता प्राप्त कर ली। 1999 तथा 2000 में 220 मेगावाट के दो अन्य दूषित भारी जल रिएक्टर कैगा (कर्नाटक) तथा रावतभाटा (राजस्थान) में स्थापित किये गये (सारणी 11.1)।

सारणी 11.2

भारत के निर्माणा धीन नाभिकीय संयत्र

राज्य	स्थिति	क्षमता (मेगावाट)
गुजरात	काकरापारा	2×700
राजस्थान	रावत भाटा	2×700
तमिलनाडु	कुडुनकलम	2×1000
		500
हरियाणा	गोरखपुर	2×700

सारणी 11.3

भारत के नदी अनुमोदित नाभिकीय परियोजनाएँ

राज्य	स्थिति	क्षमता (मेगावाट)
गुजरात	काकरापारा	2×700
राजस्थान	रावत भाटा	2×700
तमिलनाडु	कुडुनकलम	2×1000
		500
हरियाणा	गोरखपुर	2×700

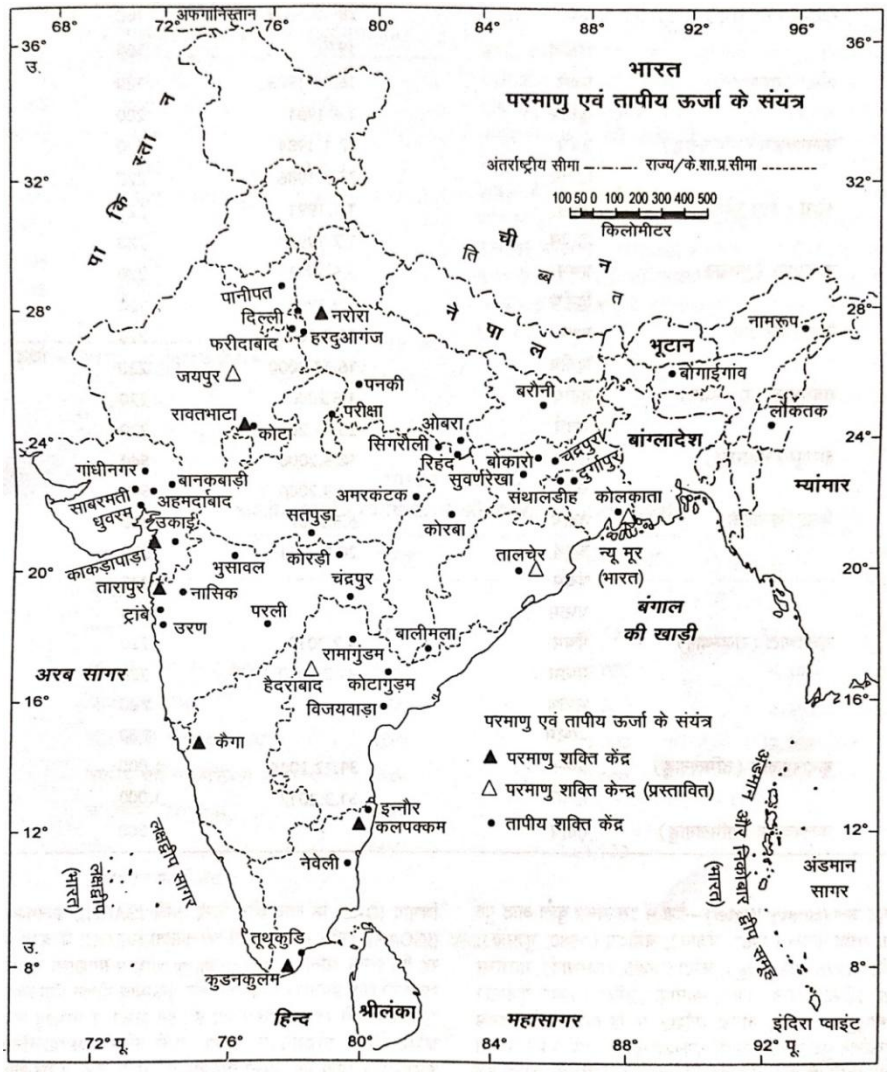

चित्र–1

सारणी 11.4
भारत के अनुमोदित भावी नाभिकीय संयत्र स्थल

राज्य	स्थिति	क्षमता (मेगावाट)	सहयोगी देश
महराष्ट्र	जैतपुर	6✕1650	फ्रांस
आन्ध्र प्रदेश	कोवाडा	6✕1208	USA
गुजरात	मीठी पिंडी	8✕1000	USA
पं0 बंगाल	हरिपुर	6✕1000	रूस
म0प्र0	भीमपुर	4✕700	स्वदेशी PHWR

11.3.1 भारी जल

देश में कुल आठ भारी जल के संयत्र थे जिसमें नागंल (1961, पंजाब), बड़ोदरा (1980, गुजरात), तुतीकोरन (1987, तमिलनाडु), कोटा (1985, राजस्थान), तलचर (1985, उड़ीसा), थाल (1987, महाराष्ट्र), हाजिरा (1991, गुजरात) एवं मानुगुरू (1991, तेलंगाना) में स्थापित व सक्रिय थे। वर्तमान समय में कुल 7 संयत्र सक्रिय व क्रियाशील हैं, क्योकि नांगल (1961, पंजाब) भारी जल संयत्र को 2002 में बन्द कर दिया गया। भारी जल का प्रयोग दाबित भारी जल रियेक्टरों (PHWRs) में मॉडरेटर तथा कूलैन्ट के रूप में होता हैं। हाल ही में भारत ने कोरियाई गणतन्त्र को 100 टन भारी जल का निर्यात भी किया हैं।देश में परमाणु ऊर्जा विभाग(DAE) के चार शोध केन्द्र ट्राम्बे (BARC), कलपक्कम (IGCAR), इन्दौर (CAT) और कोलकाता (VECC) में कार्य कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त उच्च तुगंता की शोध प्रयोगशाला गुलमर्ग , न्यूक्लीय शोध प्रयोगशाला श्रीनगर और भूकम्पीय स्टेशन गौरी बिदनूर (कर्नाटक) में स्थापित किये गये हैं। इन केन्द्रो में परमाणु ऊर्जा, फास्ट ब्रीडर प्रौद्योगिकी, लेजर, ऐसी लरेटर, क्रायोजेनिक, सुपरकंडक्टिविटी एवं अल्ट्रा हाई वैल्यूम आदि क्षेत्रों में महत्वपूर्ण शोध किये जा रहे हैं।

11.4 ऊर्जा संरक्षण

गाँधी जी ने कहा था कि पृथ्वी हर आदमी की जरूरतों को पूरा करने के लिए संसाधन प्रदान करती हैं। इसी संदर्भ में ऊर्जा के परम्परागत स्त्रोत सीमित तथा समाप्त होने वाले स्रोत हैं, वही ऊर्जा के गैर परम्परागत स्रोत पर्याप्त रूप से विकसित नहीं हैं। ऊर्जा संरक्षण हमारी जीविका तथा आने वाली की जीविका के लिए आवश्यक हैं। ऊर्जा संरक्षण के लिए उठाए जाने वाले कदम निम्नलिखित हैं।

(i) गैर– परम्परागत ऊर्जा के विकास पर बल। इससे जीवाश्म ईधन (कोयला, पेट्रोलियम गैस) का संरक्षण होगा।

(ii) ऊर्जा के खपत में कटौती होगी।

(iii) खाना पकाने के स्टोव एवं तापने वाली बत्ती में आधुनिक तकनीकों का प्रयोग।

(iv) विद्युत क्षेत्र का निजीकरण।

(v) बिजली के चोरी को कम करना।

(vi) बिजली के चोरी के लिये सख्त दण्ड देना।

यदि इन सभी उपायों को एक साथ लागू किया गया तो ऊर्जा संकट निःसंदेह कम हो जाएगा। हम जानते है कि ऊर्जा एक व्यापक शब्द हैं और

जीवन का मूल स्रोत हैं। ऊर्जा को उसकी प्रकृति के आधार पर विभिन्न प्रकारों में वर्गीकृत किया गया हैं। ऊर्जा संरक्षण ऊर्जा की खपत को कम करने का साधन हैं। समाज पर पर्यावरणीय प्रभाव को कम करने के लिए ऊर्जा संरक्षण के उपाए किये जा रहें हैं। याद रखे ऊर्जा बचाकर आप सीधे पर्यावरण की रक्षा कर रहे हैं। हम जानते है कि ऊर्जा एक व्यापक शब्द हैं और जीवन का मूल स्रोत हैं। ऊर्जा को उसकी प्रकृति के आधार पर विभिन्न प्रकारों में वर्गीकृत किया गया हैं। ऊर्जा संरक्षण ऊर्जा की खपत को कम करने का साधन हैं। समाज पर पर्यावरणीय प्रभाव को कम करने के लिए ऊर्जा संरक्षण के उपाए किये जा रहे हैं। याद रखें ऊर्जा बचाकर आप सीधे पर्यावरण की रक्षा कर रहे हैं। हम जानते हैं कि ऊर्जा अनमोल हैं। ऊर्जा को न तो बनाया जा सकता हैं और न ही नष्ट किया जा सकता है बल्कि इसे एक रूप से दूसरे रूप में बदला जा सकता हैं।

11.4.1 ऊर्जासरंक्षण के नियम

ऊर्जा के संरक्षण का नियम कहता हैं कि ''ऊर्जा को न तो बनाया जा सकता हैं और न ही नष्ट किया जा सकता हैं'' ऊर्जा संरक्षण के नियम के अनुसार, एक पृथक प्रणाली की कुल ऊर्जा समय के साथ संरक्षित रहती हैं। ऊर्जा के सभी रूप ऊर्जा संरक्षण के नियम का पालन करते हैं। रूपातंरण से पहले और बाद में कुल ऊर्जा स्थिर होती हैं।

11.4.2 दैनिक जीवन में ऊर्जासरंक्षण के वैकल्पिक तरीके–

- उपयोग में न होने वाले विद्युत उपकरणों को बंद करने के लिए अपने दैनिक व्यवहार को समायोजित करें। ऐसे उपकरण खरीदे जो कम ऊर्जाकी खपत करते हैं।
- स्मार्ट पावर स्ट्रिप्स का प्रयोग करें क्योंकि कुछ ऐसे उपकरण होते हैं जो प्रयोग में तो नही होते किन्तु ऊर्जा की खपत करते रहते हैं ऐसे मैं स्मार्ट पावर स्ट्रिप्स का प्रयोग आवश्यक हो जाता है।
- रेफ्रीजरेटर बिजली की खपत करने वाले प्रमुख उपकरणों में से एक हैं अतः ऊर्जा बचाने के लिए रेफ्रिजरेटर की सेंटिग कम रखें।
- ऊर्जा बचाने के लिए CFL व LED बल्ब का प्रयोग करं। नियमित प्रकाश देने वाले बल्ब CFL और LED की तुलना में अधिक ऊर्जा की खपत करते हैं।
- समयानुसार एयर फिल्टर को साफ करे या बदले क्योंकि एसी और हीटर अन्य उपकरणों की तुलना में अधिक ऊर्जा खपत करते हैं अतः एयर फिल्टर को साफ करने या बदलने से दक्षता में सुधार होता हैं और कम

ऊर्जा की खपत होती हैं।

- डिश वॉशर और वाशिंग मशीन को फुल लोड में चलाएं। प्रत्येक रन चक्र से सबसे अधिक ऊर्जा– बचत होती है।
- डेस्कटॉप कम्प्यूटर की बाजाए लैपटॉप का उपयोग करने से काफी ऊर्जा की बचत हो सकती हैं।
- साइकिल का चालन करना ऊर्जा के संरक्षण का महत्त्वपूर्ण तरीका होने के साथ स्वास्थ्य वर्धक भी होता हैं।
- कपड़ो को वाशिंग मशीन के ड्रायर में न सूखा करके प्राकृतिक रूप से धूप में सुखाएं।
- भोजन पकाने के लिए चीनी मिट्टी के बर्तनों का प्रयोग करें।
- बिजली उत्पादक गृहों में पारंपारिक ब्वायलरों की जगह गैसीफायरों और स्टीम टरबाइन को गैस टरबाइन में बदलकर उतने ही कोयले से 25–30 प्रतिशत अधिक बिजली पैदा की जा सकती हैं।
- समुचित देख–रेख एवं प्रबंधन से पारेषण और वितरण के 23 प्रतिशत ह्रास को कम किया जा सकता हैं।

सारणी 11.5

ऊर्जा संरक्षण का एक महत्वपूर्ण विवरण

विवरण	60 वाट का बल्ब	15 वाट का CF बल्ब	बचत
बल्ब की कीमत वाट टिकाऊ रहने की अवधि प्रतिवर्ष बिजली 2. 75 रू0 पूति यूनिट की दर से चार वर्ष का कुल लागत	10रू0 60 रू0 6 माह, 1 हजार घंटा 115 यूनिट 316.25 रू0 1265 रू0	116 रू0 15 रू0 4 वर्ष, 8 हजार घंटा 36 यूनिट 99 रू0 396 रू0	– 45 रू0 – 79 रू0 217.25 रू0 869 रू0

स्रोत– आंध्र प्रदेश गैर परम्परागत ऊर्जा विकास निगम लिमिटेड।

11.4.3 ऊर्जा नीति

भारत सरकार की राजीव गाँधी ग्रामीण विद्युतीकरण योजना (अप्रैल 2005) द्वारा सभी घरों तक बिजली पहुँचाने का लक्ष्य रखा गया था। इसी प्रकार राष्ट्रीय

विद्युत नीति (2004) में 2012 तक की बिजली की मांग को पूरा कर लेने, सन् 2012 तक प्रति व्यक्ति बिजली की उपलब्धता कों 1000 यूनिट से अधिक करने, ग्रामीण क्षेत्रों के विद्युतीकरण हेतु राज्यों को सब्सिडी देने, दलित, जनजातीय और कमजोर वर्गों को विशेष सुविधा देने जल विद्युत क्षमता का पूर्ण विकास करने, राष्ट्रीय ग्रिड बनाने, विद्युत उत्पादन पारेषण एवं वितरण में निजी क्षेत्र की भागीदारी को प्रोत्साहित करने, वितरण में नुकसान कम करने, बिजली चोरी को रोकने हेतु कडे कदम उठाने, राज्य स्तर पर बिजली की विश्वसनीयता और गुणवत्ता के निर्धारण हेतु स्टेट इलेक्ट्रिसिटी रेगुलेटरी कमीशन बनाये, बिजली की बिलिंग व्यवस्था में सुधार करने, विद्युत उत्पादन हेतु नयी प्रौद्योगिकी का सहारा लेने, गैर पारंपरिक ऊर्जा स्रोतों के विकास पर बल देने, विद्युत कर्मचारियों को प्रशिक्षित करने की बाते नहीं गई हैं।

हाल की में नीति आयोग के द्वारा प्रस्तुत ड्रॉफ्ट राष्ट्रीय ऊर्जा नीति (Draf+National Energy Policy -DNEP) के मसौदे में इस बात का अनुमान व्यक्त किया गया हैं कि 2017 से लेकर 2040 के बीच अक्षय ऊर्जा के संबंध में तेजी से वृद्धि होने की संभावना हैं। संभवतः यदि ऐसा होता है तो इससे जीवाश्म ईधन की ऊर्जा की तीव्रता में भारी कमी आयेगी। उल्लेखनीय हैं कि आर्थिक और जनसंख्या वृद्धि की वजह से भारत की प्रति व्यक्ति बिजली की खपत में 2015 – 6 में 1075Kwh की तुलना में वर्ष 2040 में 2900 Kwh तक होने की उम्मीद हैं।हाल ही में प्रधानमंत्री द्वारा निकट भविष्य में 100 प्रतिशत विद्युतीकरण के लक्ष्य को पूरा करने के लिए 2.5 विलियन डॉलर का निवेश करने की घोषणा की गई थी। इस घोषणा का लक्ष्य वर्ष 2018 के अंत तक भारत में हर घर को विद्युतीकरण करते हुए ऊर्जा दक्षता में निरंतर सुधार करना हैं।

11.5 हरित ऊर्जा

हरित ऊर्जा नवीनकरणीय स्रोतो से प्राप्त ऊर्जा के लिए प्रयुक्त शब्द है। हरित ऊर्जा प्रायः स्वच्छ, सतत या नवीनकरणीय ऊर्जा के रूप में भी जाना जाता हैं हरित ऊर्जा का उत्पादन वायुमंडल में जहरीली ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन नही करता, जिसका अर्थ हैं कि यह बहुत कम (नगण्य) पर्यावरणीय प्रभाव डालता हैं। कुछ महत्वपूर्ण हरित ऊर्जा स्रोतों में सौर, पवन, भूतापीय, बायोगैस, निम्न प्रभाव घर बिजली और कुछ योग्य बायोयास स्रोतों द्वारा उत्पादित बिजली शामिल हैं।

11.5.1 भारत में हरित ऊर्जा परिवर्तन संबंधी प्रयास–

- वर्ष 2019 में भारत ने घोषणा की कि वह 2030 तक नवीनकरणीय

ऊर्जाकी अपनी स्थापित क्षमता को 450 तक ले जायेगा।

- उत्पादन– संबद्ध प्रोत्साहन योजना (PLI) नवीनकरणीय ऊर्जा के लिए कच्चे माल के उत्पादन विनिर्माण क्षेत्र के संवर्हन के संबंध ये भारत सरकार की एक और पहल हैं।
- पी0एम0 कुसुम (प्रधानमंत्री किसान ऊर्जा सुरक्षा एवं उत्थान महाभियान) का लक्ष्य वर्ष 2022 तक 25750 मेगावाट की सौर ऊर्जा क्षमता का दोहन कर किसानों को वित्तीय एवं जल सुरक्षा प्रदान करना है।
- जल पंपो का सोलराइजेशन उपभोक्ता के दरवाजे पर उपलब्ध बिजली वितरण की दिशा में एक कदम हैं।
- नवीन और नवीनकरणीय ऊर्जा मंत्रालय अपनी वेबसाइट पर अक्षम ऊर्जा पोर्टल और इंडिया रिन्यूवल आइडिया एक्सचेंज (IRIX) पोर्टल की भी होस्टिंग करता हैं।
- IRIX एक ऐसा मंच हैं जो ऊर्जा के प्रति जागरूक भारतीयों और वैश्विक समुदाय के बीच विचारों के अदान–प्रदान को बढ़ावा देता हैं।

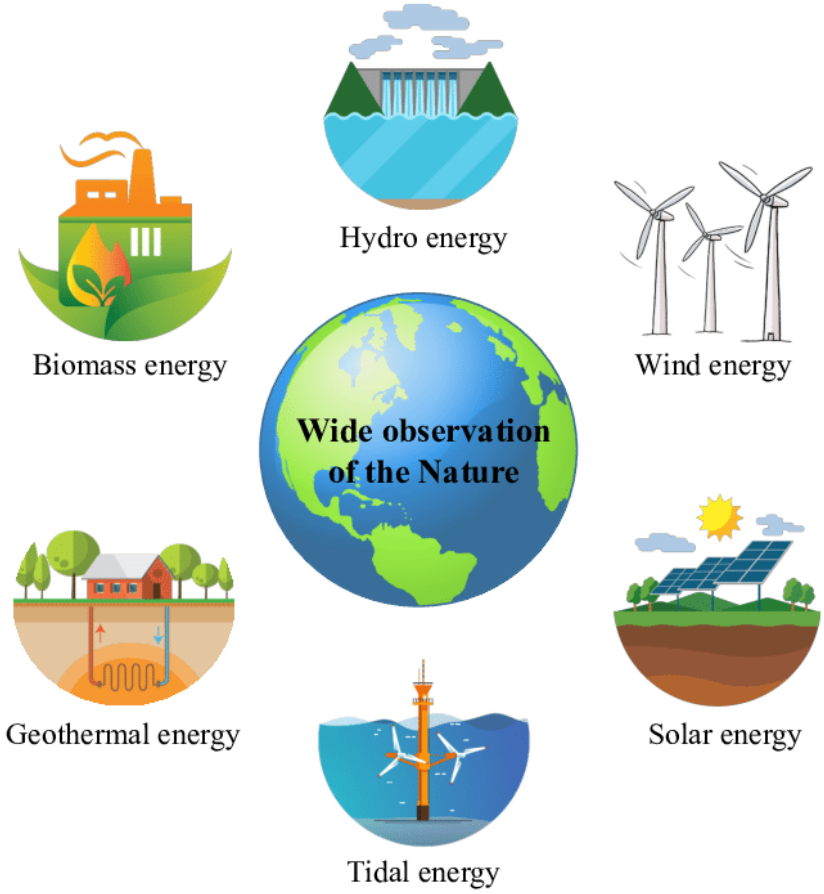

चित्र–2

11.5.2 हरित ऊर्जा गालियारा–

वर्तमान समय में भारत में ऐसे दो कारीडोर संचालित हो रहे हैं, यथा

- GEC -1
  - ग्रीन एनर्जी कॉरिडोर का पहला चरण पहले से ही गुजरात, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, हिमाचल प्रदेश, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, तमिलनाडू और राजस्थान में लागू किया गया हैं।
  - यह लगभग 24 अक्षय ऊर्जा ग्रिड एकीकरण और बिजली निकासी के लिए काम कर रहा ळें
- GEC-2
  - यह सात राज्यों गुजरात, हिमांचल प्रदेश, कर्नाटक, केरल, राजस्थान, तमिलनाडू और उत्तर प्रदेश में लगभग 20 गीगावॉट अक्षय ऊर्जा (RI) बिजली परियोजनाओं के ग्रिड एकीकरण और बिजली निकासी की सुविधा प्रदान करेगा।
  - ट्रांस मिशन सिस्टम वित्तीय वर्ष 2021–22 से 2025–26 तक पाँच वर्ष की अवधि में बनाए जाएंगे।
  - इसे 12031 करोड़ रूपये की कुल अनुमानित लागत के साथ स्थापित करने का लक्ष्य हैं जो केंद्रीय वित्त सहायता (CFA) परियोजना लागत का 33% होगा। CFA इंद्रा स्टेट ट्रांसमिशन शुल्क को पूरा करने में मदद करेगा और इस प्रकार बिजली की लागत को कम करेगा।

उद्देश्य –

- इसका उद्देश्य ग्रिड में पारंपरिक बिजली स्टेशनों के साथ नवीनीकरण संसाधनों जैसे पवन व सौर से उत्पादित बिजली को एकीकृत करना हैं।
- इसका लक्ष्य वर्ष 2030 तक 450 स्थापित RE क्षमता के लक्ष्य को प्राप्त करना हैं।
- GEC का उद्देश्य लगभग 20000 मेगावाट के साथ बड़े पैमाने पर अक्षय ऊर्जा की स्थापना करना और राज्य स्तर पर ग्रिड पे सुधार करना हैं।

महत्व–

- यह भारत की दीर्घकालिक ऊर्जा सुरक्षा में योगदान देगा और कार्बन फुटप्रिंट को कम करके परिस्थितिक रूप से सतत् विकास को बढ़ावा देगा।
- यह कुशल और अकुशल दोनों तरह के कर्मियों के लिये अधिक प्रत्यक्ष

और अप्रत्यक्ष रोजगार के अवसर पैदा करेगा।

11.5.3 भारत के ऊर्जा क्षेत्र से संबंधित चुनौतियाँ

ऊर्जा निर्धनता एवं असमानताः भारत में ऊर्जा तक पहुँच एक बड़ी समस्या हैं और पहुँच की बहुत असमानताओं से देश ग्रस्त है। भारत में लगभग 77 मिलियन परिवार अभी भी रोशनी के लिये मिट्टी के तेल या केरोसिन का उपयोग करते है।

- ग्रामीण भारत में यह समस्या और भी विकट हैं, जहाँ लगभग 44 प्रतिशत तक घरों में बिजली की सुविधा नही हैं।
- जबकि भारत ने ऊर्जा निर्धनता को दूर करने के लिए विभिन्न कार्यक्रमों और पहलों की शुरूआत की हैं, उन्हे स्थानीय स्तर पर लॉजिस्टिकल समस्याओं एवं अपर्याप्त कार्यान्वयन की स्थिति का सामना करना पड़ा हैं।

आयात पर निर्भरता और आपूर्ति श्रृंखला का शस्त्रीकरणः

भारत का कच्चा तेल आयात और वर्ष 2022–23 की पहली छमाही में 76 प्रतिशत बढ़कर 90.3 विलियन अमेरिकी डॉलर तक पहुँच गया और कुल आयात मात्रा में 15 प्रतिशत की वृद्धि हुई।

- आयातित तेल पर बढ़ती निर्भरता के साथ भारत की ऊर्जा सुरक्षा गंभीर दबाव में हैं, जबकि संकटग्रस्त भू–राजनीति के कारण वर्तमान में बाधित वैश्विक, आपूर्ति श्रृंखला इस समस्या को और बढ़ा रही हैं।
- नवीकरणीय ऊर्जा के मामले में भी भारत सौर मॉडयूल जैसी वस्तुओं के लिये व्यापक रूप से चीन जैसे अन्य देशों पर निर्भर हैं।
    - सौर मूल्य श्रृंखला में पश्चगामी एकीकरण (Backward Integration) अनुपस्थित हैं क्योंकि भारत में वर्तमान सौर वेफ़र्स और पॉलिसिलिकॉन के निर्माण की कोई क्षमता नहीं हैं। यह परिदृश्य स्वच्छ ऊर्जा संक्रमण में बाधक हैं।

जलवायु परिवर्तन प्रेरित ऊर्जा संकटः

जलवायु परिवर्तन प्रत्यक्ष रूप से ईधन की आपूर्ति, ऊर्जा की आवश्यकता के साथ–साथ वर्तमान और भविष्य की ऊर्जा अवसंरचना के भौतिक, लचीलेपन को प्रभावित करता है।

- जलवायु परिवर्तन से प्रेरित ग्रीष्म लहर (Heatwaves) और अनियमित मानसून पहले से ही मौजूदा ऊर्जा उत्पादन को दबाव में ला रहें हैं,

जिससे जीवाश्म ईंधन उत्सर्जन को कम करना और भी महत्त्वपूर्ण हो गया है।

महिला स्वास्थ्य के लिये जोखिमः

महिलाएँ घरेलू गतिविधियाँ में सक्रिय रूप से भाग लेती हैं, और स्वास्थ्य जोखिम का सामना करती हैं जब दीर्घकालिक घरेलू ऊर्जा जलावन लकड़ी, कोयला एवं गोबर के उपले जैसे गैर–स्वच्छ स्रोतो से प्राप्त की जाती हैं।

- गैर– स्वच्छ ऊर्जा स्रोतों के उपयोग से महिलाओं में श्वसन, हृदय और मनोवैज्ञानिक रोगों का खतरा बढ़ जाता हैं तथा मातृ एवं शिशु मृत्यु दर की भी वृद्धि होती हैं।

कोयले की मांग एवं आपूर्ति के बीच बढ़ता अंतरः

कोयला मंत्रालय के 2021 के आँकड़ों से पता चलता हैं कि कोयले की मांग और घरेलू आपूर्ति के बीच का अंतर बढ़ रहा है।

- पर्याप्त भंडार की उपलब्धता के बावजूद बड़े कोयला उत्पादक राज्यों में कोयले की निकासी में कमी आई हैं।
- बढ़ती कीमतों और बिजली संयंत्रों के साथ अनसुलझें लंबित अनुबंध संबंधी मुद्दों के कारण यह समस्या और भी गंभीर होती जा रही हैं।

बढ़ती मांग, बढ़ती ऊर्जा लागतः

शहरीकरण और औद्योगीकरण की बढती अंतर्राष्ट्रीय ऊर्जा एजेंसी (IEA) ने अपनी विश्व ऊर्जा आउटलुक रिपोर्ट में कहा हैं कि अकेले भारत की ऊर्जा आवश्यकता में ही प्रतिवर्ष 3 प्रतिशत की वृद्धि होगी।

- इसके साथ ही, वैश्विक स्तर पर पेट्रोलियम की कीमतों में तेज वृद्धि हुई हैं।

11.5.4 आगे की तरह हरित ऊर्जा के साथ महिला सशक्तिकरण को जोड़नाः

ऊर्जा क्षेत्र में महिला सशक्तिकरण और उनका नेतृत्व स्वच्छ ऊर्जा को बढ़ावा देकर निम्न कार्बन अर्थव्यवस्था की ओर संक्रमण को गति देने में मदद कर सकता हैं।

- उपयुक्त संक्रमण (Just Transition) एक लैंगिक, परिप्रेक्ष्य भी शमिल होना चाहिये ताकि कार्यबल में पुरूषों और महिलाओं दोनों के लिये हरित रोजगार अवसरों में समान अवसरों की गारंटी दी जा सके।
- विशेष रूप से घरों में जिम्मेदार माता, पत्नी और बेटी की तरह महिलाएँ उद्यमिता और नीति निर्माण में योगदान कर हरित ऊर्जा संक्रमण में भी

महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं।

हरित आपूर्ति श्रृंखला में विविधता लानाः

स्वच्छ ऊर्जा की आपूर्ति श्रृंखलाओं को केवल विकसित देशों तक सीमित रखने के बजाय अधिकाधिक देशों तक विविधकृत करने की आवश्यकता हैं।

- इस संबंध में, COP27 के जलवायु वित्त एजेंडे को एक वाहक के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता हैं। जैसे–जैसे पारंपरिक ऊर्जा स्रोतों को प्रतिस्थापित किया जाएगा। राजस्व एवं रोजगार कुछ भौगोलिक क्षेत्रों से दूसरे क्षेत्रों में स्थानांतरित होने जाएंगे और इसे सावधानी से प्रबंधित करने की आवश्यकता होगी।

न्यूनतम लागत ऊर्जा समाधानों में प्रोत्साहन प्रदान करनाः

भारत विश्वविद्यालय स्तर के नवाचारों को प्रोत्साहित कर सकता है जो भारत को आर्थिक रूप से व्यवहार्य स्वच्छ ऊर्जा संक्रमण को आगे बढ़ाने में मदद करेगा। इस प्रकार, भारत के जनसांख्यिकीय लाभांश का भी उपयोग किया जा सकता हैं और छात्रों को पारंपारिक शिक्षा की तुलना में अनुसंधान एवं नवाचार की ओर अधिक बढ़ावा दिया जाएगा।

- उदाहरण के लिये, उजाला कार्यक्रम (Unnat Jyoti by Afrordable LED for All-UJALA) ने एलईडी बल्बों की ईकाई लागत में 75 प्रतिशत से अधिक की कमी को संभव किया हैं।
- पर्यावरण, वानिकी और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय ने संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (UNDP) के साथ संयुक्त रूप से 'इन अवर लाइफटाइम' (In Our LiFEtime) अभियान शुरू किया हैं, जो 18 से 23 वर्ष आयुवर्ग के युवाओं से संवहनीय जीवनशैली के अनुकूल बनने और इसे बढावा देने का आग्रह करता हैं और उन्हे प्रोत्साहित भी करता हैं। यह इस दिशा में एक अच्छा कदम हैं।

हरित परिवहन पर ध्यान केंद्रित करनाः

सार्वजनिक परिवहन की पुनर्कल्पना करने और इसके प्रति भरोसे की पुनर्वहाली की आवश्यकता हैं। इस क्रम में अधिक बसों की खरीद, ई–बसों को अपनाने, बस गलियारों एवं रैपिड ट्रांजिट सिस्टम के निर्माण के साथ ही सार्वजनिक परिवहन के डिजिटलीकरण जैसे प्रयास किये जा सकते हैं।

- जैव ईंधन द्वारा जीवाश्म ईंधन को प्रतिस्थापित किये जाने के साथ ही उत्सर्जन मानदंडों को कठोर बनाया जाना चाहिये।
- विद्युतीकरण को बढावा देने के लिये विभिन्न इलेक्ट्रिक, फ्रेट कॉरिडोर का

विकास भी इलेक्ट्रिक वाहनों के लाभों को प्राप्त कर सकने के लिये महत्वपूर्ण हैं।

ऊर्जा संक्रमण के प्रति बहुक्षेत्रीय दृष्टिकोणः

भारत में भविष्य का विकास विभिन्न मोर्चों पर प्रत्यास्थता की मांग करेगा, जैसे ऊर्जा प्रणाली डिजाइन, शहरी विकास, औद्योगिक विकास एवं आंतरिक आपूर्ति श्रृंखला प्रबंधन और गरीबों की आजीविका।

- वितरित ऊर्जा प्रणालियों और घरेलू विनिर्माण को बढ़ावा देकर भारत कमोडिटी आयात एवं विदेशी आपूर्ति श्रृंखलाओं के लिये जोखिम को धीरे – धीरे कम कर सकता हैं।
- भारत की विनिर्माण क्षमता और प्रौद्योगिकीय नेतृत्व उसे अवसर दे रहा हैं कि वह मेक इन इंड़िया का लाभ उठाते हुए देश को एक अधिक आत्मनिर्भर हरित अर्थव्यवस्था और वैश्विक स्तर पर प्रतिस्पर्द्धी हरित ऊर्जा निर्यात केंद्र में बदल दें।
  - हरित ऊर्जा से संबद्ध चक्रीय अर्थव्यवस्था समाधान भारत की भविष्य की अर्थव्यवस्था की एक प्रमुख विशेषता बननी चाहिये।

11.6 सारांश

ऊर्जा आधुनिक विकास की कुंजी हैं। अतः इसके विकास पर विशेष ध्यान देने की जरूरत हैं। इसके लिए नवीनतम प्रौद्योगिकी को अपनाने, अधिक पूँजी निवेश कराने, गैर पांरपरिक ऊर्जा स्रोतों के विकास को प्रोत्साहित करने और लोगों में ऊर्जा बचानें और संरक्षण की आदतों को डालने के प्रयास किये जाने चाहिए। हरित ऊर्जा जैसे प्रौद्योगिकी को अपनाना चाहिये। परमाणु ऊर्जा का क्रमिक रूप से विकास करके देश को ऊर्जा की जरूरतों को पूरा किया जा सकता हैं। ऊर्जा संरक्षण के लिये लोगों को जागरूक किया जाना चाहियें।

11.7 शब्द सूची

Atmoic Energy	**परमाणु ऊर्जा**
Water potential	**जल सम्भाव्यता**
Hydro electric	**जल विद्युत**
Hydrogen Energy	**जल ऊर्जा**

Ptro chemicals	**पेट्रो रसायन**
Industrial cluster	**औद्योगिक गुच्छ**
Oft Shore	**अपतटीय**

शब्दार्थ

संरक्षण	भविष्य के लिए सुरक्षित रखना।
IA EA	अन्तर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा संस्थान।
AEC	परमाणु ऊर्जा आयोग (1948)।
DAE	परमाणु ऊर्जा विभाग (1954)।
BARC	भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र।
NPCR	भारतीय परमाणु विद्युत निगम।

11.8 स्वमुल्याकंन प्रश्न

1. काकरापारा परमाणु शक्ति केन्द्र किस राज्य में स्थित हैं–
   (अ) राजस्थान (ब) तमिलनाडु (स) गुजरात (द) केरल
2. तमिलनाडू के कुडनकुलम में यस परमाणु रिएक्टर्स की कितनी इकाइयां लगाने हेतु राजी हुआ हैं?
   (अ) 02 (ब) 05 (स) 04 (द) 06
3. भारत में कुल उत्पादित विद्युत में परमाणु शक्ति का भाग हैं लगभग–
   (अ) 4% (ब) 5% (स) 1% (द) 5%
4. हरितऊर्जा से संबंधित हैं।
   (अ) कोयला (ब) पेट्रोलियम (स) जीवाश्म ईंधन (द) जल विद्युत
5. राष्ट्रीय ऊर्जा संरक्षण दिवस कब मनाया जाता हैं–
   (अ) 12 दिसंबर(ब) 14 दिसंबर(स) 13 दिसंबर (द) 15 दिसंबर

आदर्श उत्तर

1. (स) ,2. (अ) ,3. (ब) ,4. (द) ,5. (ब)

11.9 सन्दर्भ व उपयोगी पुस्तके–

1. प्रो.आर.सी. तिवारी, भारत का भूगोल, प्रवालिका पब्लिकेशन।
2. डॉ. अलका गौतम, भारत का वृहद् भूगोल, शारदा पुस्तक भवन प्रयागराज।

3. प्रोफेसर माजिद हुसैन भारत का भूगोल, मैग्रा हिल।
4. Jagdish Singh, India A Comprehensive and systematic Geography. Gyanodaya Publication Grokhpur.
5. Singh R.L. – India A Regional Geography, N.G.S.I. Grokhpur
6.Nag, P. and Sengupta, S Geography , New Delhi.
7.Ford Foundation (1959) Report on Indian's Food crisis and step to meet It New Delhi : Ministry of food and agriculture and Ministry of community Developement.

11.10 अभ्यास प्रश्न (सत्रांत परीक्षा की तैयारी हेतु)

1. ऊर्जा से आप क्या समझते हैं किसी भी देश के लिए यह किस प्रकार महत्वपूर्ण हो।
2. परमाणु ऊर्जा से क्या आशय हैं? स्पष्ट कीजिए।
3. ऊर्जासंरक्षण से आप क्या समझते हैं?
4. हरित ऊर्जा क्या हैं इसमें शिक्षिक प्रभारों का वर्णन कीजिए।
5. हरितऊर्जा गलियारा क्या हैं?

इकाई–12 उद्योग– लौह इस्पात, वस्त्र उद्योग, चीनी उद्योग, औद्योगिक प्रदेश

इकाई की रूपरेखा–

12.1 प्रस्तावना
12.2 उद्देश्य
12.3 उद्योग
12.4 औद्योगिक विकास की ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि
12.5 औद्योगिक नीति
12.6 औद्योगिक विकास प्रतिरूप
12.7 औद्योगिक समस्यायें
12.8 लौह–इस्पात उद्योग
12.9 वस्त्र–उद्योग
12.10 चीनी उद्योग
12.11 औद्योगिक प्रदेश
12.12 सारांश
12.13 शब्द सूची
12.14 स्वमूल्यांकन प्रश्न एवं आदर्श उत्तर
12.15 सन्दर्भ
12.16 अभ्यास प्रश्न

12.1– प्रस्तावना

इस इकाई के माध्यम से आप भारत के सन्दर्भ में उद्योगो की अवस्थति को स्वतन्त्रता के बाद से वर्तमान समयावधि तक हुए परिवर्तनो को अध्ययन करेगें। आप यह भी जान सकेंगे कि किस प्रकार भारत में उद्योगो का वर्गीकरण सार्वजनिक, निजी व मिश्रित प्रणाली के आधार पर किया है। इस ईकाई के माध्यम से आप भारत के सन्दर्भ में विभिन्न प्रकार के उद्योगो जैसे लौह–इस्पात उद्योग, वस्त्र उद्योग, चीनी उद्योग के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त करेंगे तथा भारत के विभिन्न औद्योगिक प्रदेशो की अवस्थिति एवं उनकी विशेषता को समझ सकेंगे।

12.2–उद्देश्य

यह ईकाई भारतीय अर्थव्यवस्था का आधार प्रस्तुत करती है। इस इकाई के पढ़ने के बाद आप–

* भारत में उद्योगो के विकास क्रम को समझ सकेंगे।

* विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से स्थापित विभिन्न प्रकार के उद्योगो की रूप रेखा समझ सकेंगे।
* लौहे–इस्पात उद्योग के बारे में जान सकेंगे तथा भारत में इसके वितरण को स्पष्ट कर सकेंगे।
* वस्त्र–उद्योग की आधारभूत ईकाई तथा इसकी अवस्थिति के सन्दर्भ में इस पर पड़ रहे जलवायु प्रभावो को जान सकेंगे।
* चीनी–उद्योग की विस्तृत जानकारी तथा भारत में इसके क्षेत्रानुसार वितरण को समझ सकेंगे।
* इस ईकाई से सम्बन्धित पूछे जाने वाले महत्वपूर्ण प्रश्नो के वैज्ञानिक हल दे सकेंगे।
* यह जान सकेंगे की किस प्रकार विभिन्न प्रकार के उद्योगो के माध्यम से देश का संतुलित विकास होता है।
* उद्योगो से विभिन्न प्रकार के रोजगारो के अवसर को जान सकेंगे।

12.3 –उद्योग

''किसी क्षेत्र विशेष में भारी मात्रा में समान का निर्माण या वृहद् स्तरीय सेवा प्रदान करने के मानवीय कार्य को उद्योग कहते है।'' उद्योगों के कारण गुणवत्ता वाले वस्तु कम कीमत पर मिलते है कारण स्वरूप लोगो के जीवन स्तर में सुधार होता है और जीवन सुविधाजनक होता चला जाता है। प्राचीन काल में ही भारत अपने कुटीर उद्योगो, शिल्पो तथा वाणिज्य के लिए विख्यात था। आधुनिक औद्योगिक युग आने के पहले भारत में घरेलू तथा कुटीर उद्योग समृद्ध थे। भारतीय रेशमी वस्त्र, सूती वस्त्र, सूती छपे हुये वस्त्र, मलमल, कलात्मक वस्तुए आदि की वैश्विक मांग बहुत अधिक थी। किन्तु इंग्लैण्ड में हुई औद्योगिक क्रान्तिं ने भारत के परम्परागत हस्त शिल्पो पर कठोर वज्रपात किया। ब्रिटिश शासको के द्वारा भारत के कच्चे माल निर्यात व बने नये माल को आयात करने की प्रोत्साहित करने वाली नीति ने भारतीय परम्परागत हस्त शिल्पों का विनाश कर दिया। स्वतंत्रता के समय, भारत में निजी व्यापारिक घरानो क्षेत्र के स्वामित्व वाली अर्थव्यवस्था का बहुत छोटा हिस्सा था। उस समय निजी व्यापारिक क्षेत्र बड़ी रकम निवेश करने की स्थिती में नही था तथा न ही वे इसमें रूचि दिखाये क्योंकि इसमें उन्हे लाभ कम था। इसलिए सरकार ने अनिवार्य रूप से सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यम (PSE) नामक सरकारी उद्यमो की स्थापना करने को चुना।

12.4 औद्योगिक विकास की ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि

यहां पर औद्योगिक विकास की ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि अध्ययन हम निम्नलिखित बिन्दुओ के माध्यम से करेंगे–

12.4.1 स्वतंत्रता के पहले का औद्योगिक विकास

भारत में आधुनिक औद्योगिक विकास का इतिहास 170 वर्ष पुराना है। इसकी शुरूआत चारकोल पर आधारित पहली लौह प्रगलन (1853) से हुई थी जो कि असफल रहा। जबकि प्रथम सफल प्रयास 1854 ई0 में मुम्बई में स्थापित सूती वस्त्र कारखाने व 1855 में रिसरा (कोलकाता के निकट) में जूट कारखाने का रहा। लगभग इसी समय कोयला खनन की शुरूवात भी हुई (रानीगंज,WB)।

सन् 1874 में कुल्टी में कच्चा लोहा बनाने का कारखाना स्थापित किया गया जो कि कुछ ही वर्षो में बंद हो गया तथा पुनः 1881 में स्थापित हुआ। कालान्तर में सन् 1908 में जमशेदपुर में टाटा लौह इस्पातकम्पनी की स्थापना से भारतीय औद्योगिक विकास को एक नई दिशा मिली। इसका एक प्रमुख कारण यह भी रहा कि अमेरिकी गृह युद्धो से सूती वस्त्र उद्योग को, क्रिमियन युद्ध से जूट उद्योग को तथा प्रथम विश्व युद्ध से लौहइस्पात उद्योग को भारत में पनपने का अवसर मिला। इस प्रकार प्रथम विश्व युद्ध तक धीमा औद्योगिक विकास होता रहा। ब्रिटेन किसी भी कीमत पर भारतीय बाजार को खोना नही चाहता था तथा केवल उन्ही उद्योगो (चीनी, सीमेंट) पर ध्यान दिया जिनका विकास ब्रिटिश के प्रतिकूल था।द्वितीय विश्व युद्ध के बाद स्थितियों में बदलाव हुआ, युद्ध के कारण वस्तुओं की मांग घट गयी फलस्वरूप उदार निति अपनाते हुये इस्पात, चीनी, सीमेण्ट, कॉच, औद्योगिक रसायन इंजीनियरी सामान बनाने वाले उद्योगो को प्रोत्साहित किया गया। 1922 से 1939 के बीच इस्पात उत्पादन में लगभग 10 गुना की वृद्धि देखी गई। वहीं सूतीवस्त्र, कागज उद्योग में दोगुना की वृद्धि हुई।यद्धोत्तर काल में मुद्रास्फीति तथा 1947 में देश के विभाजन का औद्योगिक विकास पर प्रतिकुल प्रभाव पड़ा।

12.4.2–स्वतंत्रता के बाद का औद्योगिक विकास

स्वतंत्रता के बाद भारतीय औद्योगिक विकास की गति धीमी हो चुकी थी जिसका प्रमुख कारण भारत–पाकिस्तान मेन नोट्स में देखें। केन्द्रीय उद्योग मंत्री डॉ0 श्यामा प्रसाद मुखर्जी द्वारा देश की प्रथम औद्योगिक नीति की घोषणा की गई। इसमें मिश्रित अर्थव्यवस्था की संकल्पना पर बल दिया गया तथा निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्र के लिए स्पष्ट क्षेत्रो का बटॅवारा किया गया अर्थात मिश्रित एवं नियंत्रित अर्थव्यवस्था की नीव रखी गई। इसके अन्तर्गत उद्योगो को चार समूहों

में बांटा गया।कुछ वर्षो बाद समाजवादी ढंग के समाज की स्थापना के उद्देश्य से 1948 की औद्योगिक नीति में व्यापक परिर्वतन करते हुये दूसरी औद्योगिक नीति की घोषणा 30 अप्रैल 1956 को की गई। इसमें उद्योगों को तीन वर्गो में बाटा गया। प्रथम वर्ग के 17 उद्योग (केवल सार्वजनिक क्षेत्र), द्वितीय वर्ग के 12 उद्योग (सार्वजनिक व निजी दोनो क्षेत्र) तथा तृतीय वर्ग के शेष उद्योगो को निजी क्षेत्र के लिए विकास हेतु प्रदान किया गया। इस औद्योगिक नीति का मुख्य उद्देश्य औद्योगिक विकास में तेजी लाने के साथ–साथ आय एवं धन में असमानता को कम करना व एकाधिकार पर अंकुश लगाना था। इसमें लद्यु उद्योगो के विकास को भी महत्वपूर्ण माना गया।

12.4.3 विभिन्न प्रकार के पंचवर्षीय योजनाओ में हुआ औद्योगिक विकास

प्रथम पंचवर्षीय योजना–(1951–56)

* इस पंचवर्षीय योजना में सिन्द्रीं का उर्वरक कारखाना, चितरंजन लोकोमोटिव, इण्डियन टेलीफोन उद्योग, इंटीग्रल कोच फैक्ट्री, पेनसिलीन फैक्ट्री आदि प्रमुख कारखाने स्थापित किये गये।
* इसका प्रमुख उद्देश्य कृषि क्षेत्र में विकास था इसलिये इसमे पहले से स्थापित उद्योगो की क्षमता को बढ़ाने का प्रयास किया गया।
* यह योजना डोमर संवृद्धि मॉडल पर आधारित थी।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना (1956–61)

* यह योजना पी0सी0 महालनोविस मॉडल पर आधारित थी।
* 1956 के औद्योगिक नीति प्रस्ताव के आधार पर औद्योगिकीकरण का कार्यक्रम बनाया गया।
* सार्वजनिक क्षेत्र को सामरिक महत्व की भूमिका सौपी गई।
* इस योजना की महत्वपूर्ण उपलब्धि सार्वजनिक क्षेत्र में तीन इस्पात संयत्रो (राउरकेला, भिलाई, दुर्गापुर) की स्थापना रही।

तीसरी पंचवर्षीय योजना (1961–66)

* इस योजना को आत्मनिर्भर व स्वतः स्फूर्तिवान अर्थव्यवस्था बनाए जाने पर जोर दिया गया।
* रूपये का अवमूल्यन हुआ।

* मशीन निर्माण तथा तकनीकि एवं प्रबन्धकीय कौशल पर विशेष बल दिया गया।
* 1964 में रूस के सहयोग से बोकारो (झारखण्ड) में बोकरों ऑयरन एण्ड स्टील इण्डस्ट्रीज की स्थापना की गई।
* 1964 में युनियन ट्रस्ट आफ इण्डिया (UTI) व इण्डस्ट्रियल डेवलपमेन्ट बैंक ऑफ इण्डिया (IDBI) की स्थापना की गई।
* पहली का, अनुसरण किया। मेन नोट्स से पूरा देखिए
* इस योजना पर चीन (1962) व पाकिस्तान (1965) के युद्धो व सूजे का प्रतिकूल प्रभाव पड़ा।

तीन वार्षिक योजनाएं (1966–69)

* इसमें आर्थिक विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा।
* इस काल खण्ड को योजनावकाश की संज्ञा दी जाती है।
* 1969 में नरीमन समिति के सिफारिश के आधार पर लीड बैंक योजना, की सुरूवात की गई।
* इन वार्षिक योजनाओ के दौरान कृषि पर विशेष ध्यान दिया गया जिसके कारण औद्योगिक विकास पूर्णतः स्थगित रहा।
* 1966–67 में हरित क्रांति की शुरूआत हुयी।

चौथी पंचवर्षीय योजना (1969–74)

* इस योजना के केन्द्र बिन्दु में स्थिरता के साथ आत्म निर्भरता रहा।
* इसे गाडगिल योजना के नाम से जाना जाता है।
* 1969, जुलाई में 14 वाणिज्यिक बैंको का राष्ट्रीयकरण किया गया।
* 1974 में भूमिगत नाभिकीय परीक्षण (स्माइलिंग बुद्धा) किया गया।
* इस योजना में लियोंटिफ के आगत निर्गत मॉडल को लागू किया गया।
* सूखा प्रवण क्षेत्र कार्यक्रम (DPAP,1973–74) व परिवार नियोजन कार्यक्रम को लागू किया गया।
* औद्योगिक प्रगति लगभग निष्क्रय रही।

पांचवी पंचवर्षीय योजना (1974–78)

* इस योजना को डी0 पी0 धर माडल के नाम से जाना गया जिसके मुख्य केन्द्र में निर्धनता उन्मूलन तथा आत्म–निर्भरता रहा।

* 1974 में न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम की शुरूवात की गई।
* 2 अक्टूबर 1975 को क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक में उद्योगो को लगाने की वरीयता दी गई।
* निर्पाट को छोड़कर अनावश्यक वस्तुओं के उत्पादन को सीमित किया गया।

छठी पंचवर्षीय योजना (1980–85)

* यह योजना आगत–निर्गत माडल का विस्तार था जिसके मुख्य केन्द्र में 'सामाजिक न्याय और समानता के साथ आर्थिक समृद्धि' थी।
* इलेक्ट्रानिक उद्योग के विकास पर विशेष बल दिया गया।
* 1980 में 6 बैकों का राष्ट्रीयकरण,12 जुलाई 1982 को नाबार्ड की स्थापना की गई।

सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985–90)

* इसका मुख्य उद्देश्य संवृद्धि–आधुनिकीकरण,आत्मनिर्भरता और सामाजिक न्याय पर बल देना रहा। इसके लिए खाद्यान उत्पादन में वृद्धि, उत्पादकता व रोजगार अवसरों में वृद्धि पर विशेष ध्यान दिया गया।

आठवीं पंचवर्षीय योजना (1992–97)

* यह माडल जान डब्लू मुलर मॉडल पर आधारित था जिसके मुख्य केन्द्र में मानव संसाधन का विकास रहा।
* 1991 की नई औद्योगिक नीति में उदारीकरण के अनेक उपायों की घोषणा की।
* इस योजना में 1991 की नीति के कारण निजी क्षेत्र की भागीदारी को प्रोत्साहन मिला।
* विदेशी प्रत्यक्ष निवेश की अनुमति दी गई।
* व्यापार को बंधन मुक्त किया गया।

नौवी पंचवर्षीय योजना (1997–2002)

* इस योजना में विशेषकर उत्तरी–पूर्वी भारत के औद्योगिक विकास हेतु महत्वपूर्ण प्रयास किया गया।

* सार्वजनिक क्षेत्र के प्रतिष्ठानो को तीन वर्गो यथा अ–लाभकारी, ब– सीमान्त लाभकारी एवं स– पर्याप्त क्षतिकारी में बांटा गया।
* लघु उद्योगो के क्षेत्र में आरक्षण समाप्त करने का सुझाव दिया गया।

दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002–2007)

* दसवीं पंचवर्षीय योजना में मुख्य बल निम्नलिखित था–

i. आधुनीकरण, प्रौद्योगिकी में सुधार तथा निर्यात में वृद्धि;
ii. अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा का बढ़ावा देना;
iii. संतुलित क्षेत्रीय विकास;

ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना (2007–2012)

* ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में तीव्र विकास तथा सभी के चौमुखी विकास पर बल देना था।
* यह परियोजना सामाजिक न्याय पर बल देती है।

12वीं पंचवर्षीय योजना (2012–2017)

* इस योजना का प्रमुख उद्देश्य तीव्रतर, संपोषणीय और अधिक समावेशी विकास रहा।

12.5औद्योगिक नीति

सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यम (PSE) ने औद्योगिक नीति वक्तव्य, 1948,1956 के औद्योगिक नीति प्रस्तावों और 1973, 1977, 1980 और 1991 के वर्षो में नीति वक्तव्यों पर अपना वर्चस्व कायम किया।वर्ष 1991 को वाटरशेड वर्ष कहा जा सकता है, जो भारतीय अर्थव्यवस्था के उदारीकरण की घोषणा करता है।

यहां पर प्रमुख औद्योगिक नीति निम्नलिखित दर्शायें गये है।

12.5.1 औद्योगिक नीति 1948

* भारत सरकार ने 6 अप्रैल 1948 को प्रथम औद्योगिक नीति की घोषणा की ।
* इसके तहत उद्योगों को 4 वर्गो में विभाजित किया गया।

i. पूर्ण राज्य एकाधिकार।
ii. नये इकाइयो हेतु राज्य एकाधिकार।

iii. राज्य रिजलेशन।

iv. गैर विनियमित नीजि प्रतिष्ठान।

* इसके तहत सम्पूर्ण औद्योगिक क्षेत्र पर सरकार का नियंत्रण हो गया।

12.5.2 औद्योगिक नीति 1956

* इसे 30 अप्रैल 1956 में समाजवादी ढंग के समाज के निर्माण की प्राथमिकता देते हुये संसद द्वारा पारित किया गया।
* उद्योगो को तीन वर्गो में विभाजित किया गया था–

अ– कारखाना लगाने का पूर्ण अधिकार सरकार का था। इसमें कुल 17 उद्योगो को सम्मिलित किया गया।

ब–इस वर्ग में सरकार अथवा निजी उद्योग पतियों द्वारा कारखाने लगाए जा सकते थे। इसमें कुल 12 उद्योगों को शामिल किया गया था।

स– ये ऐसे उद्योग थे जिनकें विकास का उत्तरदायित्व निजी उद्योग पतियों पर छोड़ दिया गया।

12.5.3 औद्योगिक नीति 1977

* इस नीति में लद्यु एवं कुटीर उद्योग पर बल दिया गया।
* लद्यु और कुटीर उद्योगों के विकास हेतु प्रत्येक जनपद में औद्योगिक केन्द्र की स्थापना का निर्णय लिया गया।
* हैण्डलूम क्षेत्र को वरीयता दी गई।
* निर्यातोन्मुख इकाइयों को विशेष वित्तीय सुविधा प्रदान की गई।

12.5.4 औद्योगिक नीति–1980

* जुलाई 1980 में पारित किया गया।
* इसका प्रमुख उद्देश्य बिमार उद्योग के विकास पर बल देना था।

12.5.5 औद्योगिक नीति–1991

* इस नीति का मुख्य उद्देश्य भारतीय अर्थव्यवस्था को नौकरशाही के मकड़जाल से मुक्त कराना, विश्व अर्थव्यवस्था में एकी करण हेतु देश की उदारीकरण को चालू करना, प्रत्यक्ष विदेशी निवंश को प्रोत्साहित करना आदि था।

12.6–औद्योगिक विकास प्रतिरूप

स्वतंत्रता के बाद अगर कुछ कमियो को छोड़ दिया जाय तो भारतीय अर्थव्यवस्था में उल्लेखनीय प्रगति हुई है।औद्योगिक विकास की असमानता की सही व्याख्या कारखानों की संख्या को क्षेत्रफल ओर रोजगार को जनसंख्या से तुलना किए बिना नहीं की जा सकती है। यही कारण है कि प्रति एक हजार जनसंख्या पर तुलना करने पर उत्तर प्रदेश औद्योगिक दृष्टि से विकसित राज्यों की श्रेणी से बाहर हो जाता है जबकि हरियाणा इसमें सम्मिलित हो जाता है। इसी प्रकार प्रति 100 वर्ग कि0मी0 क्षेत्र पर कारखानों की संख्या के आधार पर कर्नाटक, तामिलनाडु और उत्तर प्रदेश विकसित औद्योगिक राज्यो से बाहर हो जाते है वही दूसरी तरफ हरियाणा व केरल शामिल हो जाते है।अर्थात सही आकलन हेतु शुद्ध परिवर्धित मूल्य, प्रति 100 वर्ग किमी0 क्षेत्र पर कारखानो की संख्या एवं प्रति 1000 जनसंख्या पर रोजगार के आधार पर औद्योगिक विकास के संयुक्त सूचकांक का परिकलन किया गया है। जिसके तहत विकसित राज्यो के अन्तर्गत महाराष्ट्र, पंजाब, गुजरात, तामिलनाडु एवं पश्चिम बंगाल और दो केन्द्रशासित प्रदेश (चण्डीगढ़ व दिल्ली) है। वही पर मध्यम विकसित वर्ग के अन्तर्गत केरल, कर्नाटक, आन्ध्रप्रदेश, हरियाणा और उत्तर प्रदेश राज्य आते है जबकि कम विकसित वर्ग के अन्तर्गत बचे हुये अन्य राज्यो को शामिल किया जाता है।

12.7 औद्योगिक समस्यायें

पहले विवरणो से स्पष्ट होता है कि भारत ने गत 7 दशको में महत्वपूर्ण औद्योगिक प्रगति की है। तथा वह विश्व के शीर्ष 10 बड़े औद्योगिक प्रदेशो में शामिल हो गया है। किन्तु औद्योगिक प्रगति बहुत ही धीमी रही है, सातवीं पंचवर्षीय योजना को छोड़कर यह सदैव लक्ष्य से पीछे रही है।

यहां पर ऐसी कुछ महत्वपूर्ण समस्याओं का उल्लेख किया गया है जिनसे औद्योगिक विकास में अवरोध हो रहा है–

1. क्षेत्रीय असन्तुलन।
2. असंतुलित औद्योगिक संरचना।
3. सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योगों में घाटा।
4. बुनियादी संरचना की कमी।
5. पूंजी की कमी।
6. लाइसेन्स नीति।
7. संस्थागत संगठनो का आभाव।

8. अधिक उत्पादन लागत व उत्पादो की निम्न गुणवत्ता।

भारत में औद्योगीकरण की शुरूआत विकसित देशो से लगभग एक शताब्दी बाद हुई। अर्थात यह जब विकसित देशों में परिपक्वता की अवस्था से गुजर रहा था तब भारत में शैशवावास्था में था। जिसके कारण भारत को औद्योगीकरण को बढ़ावा देने के साथ नवीन प्रौद्योगिकी को प्राप्त करने का दुहरा कार्य करना पड़ रहा है, फलस्वरूप भारत की औद्योगिक विकास की प्रगति धीमी हो गयी है।

12.8 लौह इस्पात उद्योग

लोहा एवं इस्पात औद्योगिक मशीनरी, विद्युत मशीनरी, रक्षा उपकरणों, रेल लाइनों, रेल के इंजनों, डिब्बो, पुलों, बांधों, जलपोतों, मोटरगाड़ियों तथा अनेक अन्य औद्योगिक तथा उपभोक्ता वस्तुओं के निर्माण के लिये आवश्यक है।

लोहा एवं इस्पात के पर्याप्त उत्पादन के बिना भारत जैसे कम विकसित देश के लिए आर्थिक तरक्की कर पाना संभव नहीं है।

12.8.1 विकास

भारत में लौह इस्पात उद्योग का इतिहास लगभग 4000 वर्ष पुराना है। दिल्ली के कुतुबमीनार के निकट लौह स्तंभ काफी पुराना है। भारत में आधुनिक तरीके से लौह एवं इस्पात उत्पादित करने का पहला प्रयास 1830 में पीर्टोनोवा (चेन्नई के निकट) में किया गया था जो कि असफल रहा। इस प्रकार का पहला सफल प्रयास 1874 ई0 में बंगाल आयरन वर्क्स कुल्टी द्वारा किया गया।इस उद्योग में वास्तविक प्रगति तब आई जब टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी द्वारा 1907 ई0 में साकची (जमशेदपुर) के निकट नया कारखाना स्थापित हुआ जिसमें 1908 में कच्चा लोहा और 1911 में इस्पात का निर्माण शुरू हुआ। 1918 में ही हीरापुर (आसनसोल) में इण्डियन आयरन एण्ड स्टील कम्पनी (IISCO) तथा 1923 में भद्रावती (कर्नाटक) में विश्वेश्वरैया आयरन एण्ड स्टील लि0 की स्थापना हुई।

- स्वतंत्रता के बाद द्वितीय पंचवर्षीय योजना के दौरान विदेशी तकनीकि सहायता से भिलाई (छत्तीसगढ़– सोवियत संघ के सहयोग से), दुर्गापुर (पं0 बंगाल, ब्रिटेन के सहयोग से), राउरकेला (उड़ीसा, पं0 जर्मनी के सहयोग से) में सार्वजनिक क्षेत्र में तीन इस्पात संयत्रों की स्थापना की गई।
- तृतीय पंचवर्षीय योजना में सोवियत संघ के सहयोग से बोकारो (झारखण्ड) में 1966 एक और इस्पात कारखाने की स्थापना की गई।

- चौथी पंचवर्षीय योजना के दौरान सलेम (तमिलनाडु), विजयनगर (कर्नाटक) व विशाखापट्टनम में नए सार्वजनिक इस्पात कारखानों की स्थापना की गई।
- 1974 में भारत सरकार ने सेल (स्टील अथारिटी ऑफ इण्डिया) की स्थापना की तथा इसे इस्पात उद्योग के विकास की सारी जिम्मेदारी दी गई।

12.8.2 वितरण प्रतिरूप

भारत में लौह इस्पात के वितरण प्रतिरूप पर कच्चामाल (लौह अयस्क, कोयला, चूना पत्थर, मैंगनीज, सिलिका, स्फटिक, क्रोमाइट)बाजार और बदंरगाह सुविधाओं का प्रभाव परिलक्षित होता है। भारत में उपरोक्त तीनों प्रकार की स्थितियां पायी जाती है, जहां जमशेदपुर, भद्रावती, भिलाई, राउरकेला, दुर्गापुर एवं निचला इस्पात दुबरी (उड़ीसा में निर्माणाधीन) के संत्रयों की स्थिति कच्चे माल के समीप है वहीं विशाखापट्टनम संयत्र की अवस्थति समुद्र तटीय है। इस इस्पात लौह इस्पात के 11 बड़े एकीकृत कारखाने 145 लघु कारखाने व भारत में स्थित है। TISCO को छोड़कर अन्य बड़े कारखाने सार्वजनिक क्षेत्र में कार्यरत हैं जिनका प्रबन्धन सेल के अन्तर्गत है।

11 बड़े कारखाने निम्न है–

1. टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी, जमशेदपुर।
2. इंडियन आयरन एण्ड स्टील कम्पनी, बर्नपुर।
3. विश्वेश्वरैया आयरन एण्ड स्टील लि0, भद्रावती।
4. हिन्दुस्तान स्टील लिमिटेड, राउरकेला।
5. एच0एस0एल0, भिलाई।
6. एच0एस0एल0, दुर्गापुर।
7. बोकारों स्टील लिमिटेड, बोकारो।
8. सलेम इस्पात संयंत्र, तमिलनाडु।
9. विशाखापत्तनम इस्पात संयंत्र, आन्ध्र प्रदेश।
10. विजय नगर इस्पात संयंत्र।

12.8.3 राष्ट्रीय इस्पात नीति 2017

* भारत सरकार द्वारा इसकी स्वीकृत 3 मई, 2017 की दी गई।
* 2030–31 तक 300 MT इस्पात उत्पादन क्षमता लक्ष्य व 255 MT उत्पादन लक्ष्य का निर्धारण।

* देश में इस्पात खपत बढ़ाने पर जोर।
* वर्तमान में देश में प्रति व्यक्ति इस्पात की खपत 74 किलो0 (2019) है। इसे 2030 तक 160 किलो0 करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है।

12.8.4 लौह इस्पात उद्योग की समस्यायें

1. भारी पूंजी निवेश की कमी।
2. नियंत्रित मूल्य।
3. गिरती मांग।
4. अच्छे ईधनों की कमी।
5. गुणवत्ता में कमी।

12.9 वस्त्र उद्योग

भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि के बाद वस्त्रोद्योग का स्थान दूसरा है। यह देश का प्राचीन उद्योग है। यह देश का सबसे बड़ा संगठित व व्यापक उद्योग है। यह कुल निर्यात आय का 15 प्रतिशत (2019–20) की आपूर्ति करता है।इस वर्ग के अन्तर्गत सूती, जूट, रेशमी ऊनी वस्त्रों के साथ–साथ कृत्रिम रेशा के उद्योगों को सम्मिलित किया जाता है।

12.9.1 सूती वस्त्र उद्योग

भारत का वस्त्रोद्योग मुख्यतः सूत पर ही आधारित है। भारत, सूती वस्त्र के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण व चीन के बाद दूसरा प्रमुख उत्पादक देश है। इस उद्योग में भारत पूर्णतः आत्मनिर्भर है।

12.9.1.1 विकास

देश में आधुनिक तरीके से सूती वस्त्र उद्योग का प्रथम कारखाना की स्थापना 1818 ई0 में फोर्ट ग्लोस्टर (कोलकाता) में हुआ, जो कि असफल रहा। सन् 1854 ई0 में मुम्बई में प्रथम सफल सूती वस्त्र के कारखाने की स्थापना कवास जी0 डाबर द्वारा की गई।

12.9.1.2 स्थानीकरण

सूती वस्त्र उद्योग का स्थानीकरण मुख्यतः कच्चे माल की उपलब्धता, बाजार की समीपता, पूंजी, बन्दरगाह, सस्ते एवं कुशल श्रमिकों की सुविधाओं से प्रभावित होता है।

12.9.1.3 वितरण

* भारत में सूती वस्त्र उद्योग का सकेन्द्रण मुख्यतः कपास उत्पादक और बाजार क्षेत्रों के समीप देखा जाता है।
* महाराष्ट्र राज्य का सूती वस्त्र उद्योग में प्रमुख स्थान है, यहां कुल 190 मीलें स्थापित है। मुम्बई को देश में सूती वस्त्र की राजधानीCottonopolis कहा जाता है।
* गुजरात में सूती वस्त्र की कुल 89 मिले है।
* तमिलनाडु में सूती कपड़ा सबसे अधिक (959) मिले है जिनमें अधिकाशं कताई मीले है।
* अन्य राज्यों के अन्तर्गत क्रमशः आन्ध्रप्रदेश (164), पंजाब (90), उत्तर प्रदेश (66), राजस्थान (62), मध्य प्रदेश (57), कर्नाटक (53) व पश्चिम बंगाल (30) राज्य सम्मिलित है।

12.9.1.4 उत्पादन

1950–51 से 2016–17 के दौरान देश में सूत और सूती वस्त्र के उत्पादन में क्रमशः 7.6 और 9.57 गुना की वृद्धि दर देखी गई है। आज देश में सूती वस्त्र के उत्पादन में पावरलूम और हथकरघा का प्रमुख योगदान रहा है।

12.9.1.5 निर्यात

भारत, विश्व में सूती वस्त्रों का दूसरा सबसे बड़ा निर्यातक देश है। यह निर्यात रूस, यू0के0, यू0एस0ए0, सूडान, नेपाल, फ्रांस, आस्ट्रेलिया, श्रीलंका, इण्डोनेशिया, थाईलैण्ड, नाइजीरिया, म्यांमार, सिंगापुर, तंजानिया, कीनिया, इथियोपिया आदि प्रमुख देशों को किया जाता है।

यूरोपीय आर्थिक समुदाय के साथ भारतीय सूती वस्त्रोपादों को विशेष दर्जा देने के लिए एक समझौता किया गया है।

भारत के निर्यात को पाकिस्तान, जापान एवं चीन से तीव्र प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ता है जिसके सामान सस्ते पड़ते है। कुछ देशों ने कोटा प्रतिबंध लगाना भी शुरू कर दिया है।

12.9.1.6 समस्याएं

सूती वस्त्र उद्योग देश के संगठित क्षेत्र के सबसे बड़े उद्योग होने के नाते समस्याओं से ग्रस्त है यथा–

1. कच्चे माल की कमी।
2. पुरानी मशीने।
3. निम्न श्रमिक उत्पादकता।
4. विदेशी बाजार में प्रतिस्पर्धा।
5. विकेन्द्रित क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा।
6. सरकारी नियंत्रण और भारी उत्पाद शुल्क।

12.9.1.7 कपड़ा नीति

जून 1985 में भारत सरकार ने अपनी कपड़ा नीति की घोषणा की जिसका प्रमुख उद्देश्य उचित कीमत पर स्वीकार्य गुणवत्ता वाले कपड़े का उत्पादन बढ़ाना था ताकि बढ़ती जनसंख्या की कपड़े की आवश्यकता पूरी की जा सके। भारत ने 2 नवम्बर 2000 को नई कपड़ा नीति की घोषणा की है। इस नीति की प्रमुख विशेषतांए निम्न प्रकार है–

* रेडीगारमेण्ट्स को लघु उद्योग आरक्षण सूची से हटाकर इसे अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अधिक प्रतिस्पर्धी बनाना।
* विदेशी प्रत्यक्ष विनियोग पर 24 प्रतिशत की अधिकतम सीमा को समाप्त करना।
* पटसन उद्योग में उत्पादकता बढ़ाने और विविधीकरण हेतु प्रौद्योगिकी मिशन स्थापित करना।
* जोखिम पूंजी कोष स्थापित करना।

12.9.2 जूट वस्त्र उद्योग

विश्व में भारत जूट से बनी वस्तुओं का सबसे बड़ा उत्पादक और दूसरा बड़ा निर्यातक राष्ट्र है। इस क्षेत्र में लगभग 40 लाख कृषक परिवारों को रोजगार मिला हुआ है। देश में 97 पटसन मिले है जिनमें पश्चिम बंगाल में 71, बिहार, ओडिशा और उत्तर प्रदेश में 3–3, आन्ध्र प्रदेश में 12 तथा असम एवं छत्तीसगढ़ में 2–2 तथा त्रिपुरा में एक है। देश का प्रथम जूट कारखाना जार्ज ऑकलैण्ड द्वारा 1855 में कोलकाता के निकट रिशरा स्थान पर लगाया गया था। 1947 में देश के विभाजन के फलस्वरूप भारतीय जूट उद्योग पर कठोर वज्रपात हुआ, क्योंकि 80 प्रतिशत जूट उत्पादक क्षेत्र पूर्वी पाकिस्तान (वर्तमान बांग्लादेश) के पास चला गया जबकि जूट के सभी कारखानें भारत में रह गये। फलतः अनेक कारखाने बन्द करने पड़े। जूट उद्योग के लिए स्वच्छ जल तथा प्रचुर एवं सस्ता श्रम आवश्यक है, कारण स्वरूप यह उद्योग हुगली नदी के किनारों पर अवस्थित

है। अन्तर्राष्ट्रीय जूट संगठन की स्थापना 1984 में हुई जिसका मुख्यालय ढाका, बांग्लादेश में स्थित है।

12.9.3 रेशमी वस्त्र उद्योग

भारत में प्राचीन काल से ही रेशमी वस्त्रों के उत्पादन की परम्परा रही है। यह चीन के बाद विश्व का द्वितीय वृहत्तम रेशम उत्पादक देश है। भारत रेशम की सभी 5 ज्ञात वाणिज्यिक किस्मों (मलबरी, ट्रॉपिकलटसर, ओकटसर, इरी और मूंगा) का उत्पादन करने वाला मात्र एक देश है।

- भारत के कुल कपड़ा निर्यात में रेशमी वस्त्रों का योगदान लगभग 3.0 प्रतिशत है।
- शीर्ष पांच रेशम उत्पादक राज्य क्रमशः कर्नाटक, आन्ध्रप्रदेश, असम, पं0 बंगाल वझारखण्ड है।
- देश में रेशम का आधुनिक कारखाना ईस्ट इण्डिया कम्पनी द्वारा 1832 में हावड़ा में प्रारम्भ किया गया।
- देश में लगभग 324 रेशमी वस्त्रों के कारखानें है जिसमें 8.60 मिलियन लोगों को रोजगार प्राप्त है।
- बिहार एवं झारखण्ड टसर रेशम तथा असम मूंगा रेशम का वृहत्तम उत्पादक राज्य है जबकि मणिपुर एवं जम्मू एवं कश्मीर में रेशम कीट पालन के लिए आदर्श जलवायु है।

12.9.4 ऊनी वस्त्र उद्योग

ऊनी वस्त्र उद्योग एक ग्रामीण आधारित निर्यातोन्मुखी उद्योग है जिसमें संगठित क्षेत्र, विकेन्द्रित क्षेत्र एवं ग्रामीण क्षेत्र एक दूसरे के पूरक है। भारत में अतीत काल से ही ऊनी वस्त्रों के निर्माण की लम्बी परम्परा रही है। ऊनी वस्त्रों से सम्बन्धित प्रथम आधुनिक कारखाना 1876 में कानपुर तथा 1881 में धारीवाल (पंजाब) में स्थापित किया गया।

* दुनिया में भारत भेड़ों की संख्या के मामले में तीसरा सबसे बड़ा देश है।
* भारत में शीर्ष पांच वस्त्र उत्पादक राज्य क्रमशः राजस्थान, जम्मू कश्मीर, तेलंगाना, कर्नाटक व गुजरात है।
* जम्मू एवं कश्मीर तथा हिमांचल प्रदेश में शाल बनाना एक उन्नत कुटीर उद्योग है।

12.10 चीनी उद्योग

गन्ना भारत का मूल पौधा माना जाता है। खांडसारी उद्योग भारत में प्राचीन काल से ही प्रचलित है जिसका उल्लेख अथर्ववेद, कौटिल्य के अर्थशास्त्र और मेगस्थनीज के लेखों में मिलता है। भारत विश्व में चीनी का सबसे बड़ा उत्पादक देश है।

12.10.1 ऐतिहासिक विकास

भारत में आधुनिक तरीके से चीनी बनाने का प्रथम प्रयास डच व्यवसायी द्वारा 1840 में उत्तरी बिहार में किया गया जो असफल रहा। सरकार द्वारा 1931 में चीनी के आयात पर शुल्क लगा देने से इस उद्योग को काफी प्रोत्साहन मिला। पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान चीनी उद्योग की प्रगति तेज रही। वर्तमान समय में भारत में 527 (2019) चीनी मिले है।

12.10.2 वितरण

चीनी उद्योग प्रधानतः कच्चे माल पर आधारित उद्योग है चीनी के कारखाने उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश, गुजरात एवं बिहार के गन्ना उत्पादक क्षेत्रों में सघन रूप से संकेन्द्रित है। ये राज्य मिलकर देश की 90 प्रतिशत चीनी का उत्पादन करते है।

* वर्तमान समय में (2018–19) गन्ना उत्पादक शीर्ष तीन राज्य क्रमशः उत्तर प्रदेश (44.91 प्रतिशत), महाराष्ट्र (10.10 प्रतिशत) व कर्नाटक (10. 51 प्रतिशत) है।
* शीर्ष गन्ना उत्पादकता वाले राज्य (2017–18) क्रमशः महाराष्ट्र, तमिलनाडु व हरियाणा है।
* वर्तमान समय में चीनी उत्पादक शीर्ष राज्य (मार्च 2019) क्रमशः महाराष्ट्र (36.59 प्रतिशत), उ0प्र0 (30.76) व कर्नाटक (15.52 प्रतिशत) है।

12.10.3 व्यापार

भारत में चीनी का आन्तरिक व्यापार सरकारी नीति द्वारा संचालित होता है जिसके तहत प्रत्येक मिल को उसके उत्पादन का 40 प्रतिशत भाग निर्धारित मूल्य पर सरकार को सार्वजनिक वितरण प्रणाली के लिए देना होता है। शेष 60 प्रतिशत भाग का विक्रय अधिक मूल्य पर खुले बाजार में किया जा सकता है। महाराष्ट्र, यू0पी0 और राजस्थान से चीनी बाहर भेजी जाती है।

12.10.4 समस्याएं

भारत में चीनी उद्योग निम्न प्रमुख समस्याओं से ग्रस्त है–

1. गुड़ और खाण्डसारी उद्योग से प्रतिस्पर्धा।
2. गन्ने की प्रति हेक्टेयर कम उपज।
3. चीनी की कम प्राप्ति।
4. त्रुटिपूर्ण सरकारी नीति।
5. छोटा पेराई काल।
6. शोध की कमी।

उपर्युक्त समस्याओं के समाधान हेतु निम्न प्रकार के सुधार किये जा सकते है–

* मिलों का आधुनिकीकरण किया जाय।
* सरकारी नीति की पुनः समीक्षा की जाय।
* उप उत्पादों से कागज, एल्कोहल और रासायनिक उद्योगों का विकास किया जा सके।
* शोध हेतु महत्वपूर्ण संस्थान खोले जाने चाहिये।

12.11 औद्योगिक प्रदेश

औद्योगिक प्रदेश का अभिप्राय विनिर्माणी प्रदेश से है। विभिन्न उद्योगों के अनेकों कारखानों के संकेन्द्रण से एक विशाल क्षेत्र में औद्योगिक भूदृश्य के विकास को औद्योगिक प्रदेश कहते है। ऐसे प्रदेशों के निर्धारण का कोई निश्चित मापदण्ड नहीं है। भारत के औद्योगिक प्रदेशों में विभाजित करने का श्रेय ट्रिवार्था तथा बर्नर (1944), पी0पी0करण तथा डब्ल्यूएल0 जेंकरिन्स (1959) हस्त लिखित नोट्स देखे, पृ0– 17 इन विद्वानों ने निम्नलिखित में से एक या एक से अधिक सूचकों का उपयोग भारत को औद्योगिक क्षेत्रों में विभाजित करने के लिए किया–

1. किसी प्रदेश में पंजीकृत कारखानों की संख्या।
2. औद्योगिक कर्मचारियों की संख्या।
3. द्वितियक क्रियाओं में व्यस्त जनसंख्या।
4. कुल कर्मचारियों में औद्योगिक कर्मचारियों का प्रतिशत।
5. कुल औद्योगिक उत्पाद।
6. मुद्रा के रूप में उत्पादन।

अधिकतर विद्वानों ने भारत को छः प्रमुख तथा लघु औद्योगिक प्रदेशों में विभाजित किया है।

12.11.1 प्रमुख औद्योगिक प्रदेश

प्रो0 आर0 एल0 सिंह द्वारा निर्धारित भारत के औद्योगिक प्रदेशों का एक संक्षिप्त परिचय–

1– मुबंई–पूणे औद्योगिक प्रदेश

* यह भारत का एक महत्वपूर्ण औद्योगिक प्रदेश है जिसे कई प्राकृतिक बंदरगाहों की सुविधा प्राप्त है।
* 1853 ई0 में मुम्बई एवं ठाणे के मध्य 34 किमी0 लम्बे रेलमार्ग के निर्माण से मुम्बई पत्तन पृष्ठभूमि से जुड़ गया।
* 1869 ई0 में स्वेज नहर मार्ग जुड़ने से मुम्बई पत्तन के विकास को प्रोत्साहन मिला।
* मुम्बई का पृष्ठ प्रदेश एक कपास उत्पादक क्षेत्र है जिसने इस प्रदेश में वस्त्रोद्योग के विकास को एक मजबूत आधार प्रदान किया।

2– कोलकाता– हुगली प्रदेश

* यह देश का एक महत्वपूर्ण व प्राचीन औद्योगिक प्रदेश है।
* हुगली नदी ने कोलकाता नदीय पत्तन के विकास के लिये उत्तम स्थान प्रदान किया, जिसने हुगली पेटी के औद्योगिक केन्द्र के नाभिक के रूप में कार्य किया है।

3–अहमदाबाद– बड़ोदरा प्रदेश

* यह देश का तीसरा सबसे बड़ा औद्योगिक प्रदेश तथा सूती वस्त्रों का दूसरा सबसे बड़ा औद्योगिक केन्द्र है।
* इस औद्योगिक प्रदेश के विकास का मुख्य कारण है–पृष्ठ प्रदेश में कपास की उपलब्धता, भूमि तथा सस्ते कुशल श्रमिकों की उपलब्धता, बंदरगाह की सुविधा, पेट्रोलियम की उपलब्धता (किपोली), ताप संयंत्र (धुवरन), जल–विद्युत परियोजना (उकाई) तथा परमाणु उर्जा केन्द्र (काकरापारा)।

4– मदुरई–कोयम्बटूर–बगंलौर औद्योगिक प्रदेश

* इस प्रदेश का विस्तार तमिलनाडु तथा कर्नाटक के दक्षिणी भाग में है। यह देश का प्रमुख कपास उत्पादन क्षेत्र है।

* बंगलौर इस प्रदेश का प्रमुख औद्योगिक केन्द्र है जहां एच0एम0टी0, एच0ए0, भारतीय दूरसंचार उद्योग, भारत इलेक्ट्रॉनिक्स, वी0एस0एल0 स्थित है।

5– छोटा नागपुर औद्योगिक प्रदेश

* इस औद्योगिक प्रदेश का विस्तार झारखंड, छत्तीसगढ़, ओडिशा, दक्षिणी बिहार तथा पश्चिमी बंगाल के पश्चिमी भाग में है।
* इसे भारत का रूर कहा जाता है।
* यह प्रदेश जीवाश्म ईंधन तथा खनिजों के मामले में धनी है।

6– आगरा–दिल्ली–कालका–सहारनपुर औद्योगिक प्रदेश

* यह प्रदेश स्वतंत्रता के पश्चात विकसित हुआ।
* कृषि आधारित उद्योगों के लिये सस्ते कच्चे माल की उपलब्धता है।
* भाखड़ा नागंल ग्रिड तथा यमुना जल विद्युत शक्ति परियोजनाओं से शक्ति की उपलब्धता है।

12.11.2 लघु औद्योगिक प्रदेश

इस औद्योगिक प्रदेश के अन्तर्गत असम घाटी, दार्जिलिंग तराई, उत्तरी बिहार, इन्दौर उज्जैन, नागपुर–वर्धा, धारवाड़–बेलगाम, गोदावरी–कृष्णा डेल्टा, केरल तट शामिल है।

12.12 सांराश

संक्षेप में हम कह सकते है कि भारत हमेशा से व्यापार के केन्द्र में रहा है जिसका महत्वपूर्ण कारण विभिन्न प्रकार उत्पादित उत्पाद रहे है। निश्चित रूप से स्वतंत्रता के पूर्व भारत की अर्थव्यवस्था दयनीय थी किन्तु आधारभूत उद्योगों की स्थापना हो चुकी थी। स्वतंत्रता के बाद विभिन्न प्रकार की पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान उद्योगों के विकास पर महत्वपूर्ण ध्यान दिया गया जिससे वर्तमान समय में भारत अपने आप को विश्व की 10 सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था में शामिल हो गया है। लौह इस्पात उद्योग के साथ–साथ, वस्त्र उद्योग एवं चीनी उद्योग में भारत की स्थिती महत्वपूर्ण बनी हुई है। भारत के औद्योगिक प्रदेश के वितरण में महत्वपूर्ण विद्वानों ने अपने–अपने वर्गीकरण को प्रस्तुत किया है जिसमें प्रो0 आर0एल0 सिंह का वर्गीकरण महत्वपूर्ण है।

12.13 शब्द सूची

Iron industry	लौह उद्योग
Cotton texile industry	सूती वस्त्र उद्योग
Fossil fuel	जीवाश्म ईधन
Industrial region	औद्योगिक प्रदेश
Silk texile	रेशमी वस्त्र उद्योग
Sugarindustry	चिनी उद्योग
Mica	अभ्रक
Coal washery	कोयला शोधन

परिभाषित शब्द

अवमूल्यन	:	जब किसी देश द्वारा मुद्रा की विनमय दर अन्य देशों की मुद्राओं से कम कर दी जाय।
पंचवर्षीय योजना	:	यह योजना 5 वर्ष के लिए केन्द्र सरकार द्वारा देश के लोगों के आर्थिक और सामाजिक विकास के लिए शुरू की गयी थी।
ट्रिकिल डाउन थियरी	:	एक अर्थशास्त्रीय सिद्धान्त जो व्यापार एवं धनी लोगों के उपर लगाये गये कर घटाने का पक्षधर है।
आत्मनिर्भर	:	स्वयं पर निर्भर होना।
त्रिवार्षिक योजना	:	पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान एक–एक वर्ष की योजनाएं जो तीन बार चलाई गई।
संवृद्धि	:	किसी समयावधि में किसी अर्थव्यवस्था में होने वाली वास्तविक आय वृद्धि से है।
उदारीकरण	:	ऐसे नियंत्रण में ढील देना, जिससे आर्थिक विकास को बढ़ावा मिले।
औद्योगिक नीति	:	किसी देश की वह नीति जिसका उद्देश्य उस देश के निर्माण उद्योग का विकास करना एवं उसे वांछित दिशा देना होता है।

12.14 स्वमूल्यांकन प्रश्न

1– आधुनिक लौह–इस्पात उद्योग का वास्तविक प्रारम्भ किस स्थान पर स्थापित कारखाने के साथ हुआ–

अ) बर्नपुर　　ब) कुल्टी

स) जमशेदपुर　　द) गोपालुपर

2– भिलाई, दुर्गापुर और राउरकेला में लौह इस्पात संयंत्र की स्थापना किस पंचवर्षीय योजना के दौरान की गई–

अ) प्रथम　　ब) द्वितीय

स) तृतीय　　द) चतुर्थ

3– जॉर्ज आकलैण्ड ने सर्वप्रथम भारत में 1855 ई0 में किस स्थान पर जूट मिल की स्थापना की थी?

अ) रिसरा　　ब) बजबज

स) टीटागढ़　　द) शिवपुर

4– भारत का सबसे प्राचीन औद्योगिक प्रदेश है–

अ) छोटानागपुर औद्योगिक प्रदेश।　　ब) मुम्बई–पुणे–कोल्हापुर प्रदेश।

स) विशाखापट्टनम औद्योगिक प्रदेश।　　द) कोलकाता–हुगली प्रदेश।

आदर्श उत्तर1. (ब), 2. (ब), 3. (अ), 4. (द)

12.15 सन्दर्भ/उपयोगी पुस्तकें

1. प्रो0 आर0सी0 तिवारी– भारत का भूगोल, प्रवालिका पब्लिकेशन।
2. प्रो0 काशी नाथ सिंह व प्रो0 जगदीश सिंह आर्थिक भूगोल, ज्ञानोदय प्रकाशन।
3. प्रो0 जगदीश सिंह– भारत भौगोलिक आधार एवं आयाम, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर।
4. सिंह आर0एल0– इंडिया ए रिजीनल ज्योग्राफी, एन0जी0एस0आई0, गोरखपुर।
5. प्रो0 माजिद हुसैन, भारत का भूगोल, मैग्रा हिल पब्लिकेशन।

12.16 अभ्यासप्रश्न

1. भारत में उद्योगों के विकास की एक रूप रेखा प्रस्तुत कीजिए।
2. पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान भारत में किस प्रकार उद्योगों का विकास हुआ?

3. लौह–इस्पात उद्योग क्या है तथा भारत में इसकी अवस्थति की चर्चा कीजिए?
4. भारत में वस्त्र उद्योग की विस्तृत चर्चा कीजिए।
5. भारत में चीनी उद्योग के विकास से सम्बन्धित प्रमुख समस्याओं का वर्णन कीजिए।
6. भारत के विभिन्न औद्योगिक प्रदेशों की वर्णन कीजिए।

MAGO-102 भारत का भूगोल

इकाई –13 जनसंख्या वृद्धि, एवं वितरण जनसंख्या की संरचना, आयु, लैंगिक

इकाई की रूपरेखा–

13.1 प्रस्तावना
13.2 उद्देश्य
13.3 जनसंख्या वृद्धि
13.4 जनसंख्या वृद्धि को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक
13.5 जनसंख्या वितरण
13.6 जनसंख्या वितरण एवं घनत्व को प्रभावित करने वाले कारक
13.7 आयु
13.8 लिंगानुपात
13.9 सारांश
13.10 शब्द सूची
13.11 परीक्षोपयोगी प्रश्न
13.12 महत्वनपूर्ण पुस्तकें/संदर्भ
13.13 अभ्यास प्रश्न

13.1 प्रस्तावना–

भारत भूगोल के इस इकाई के अन्तर्गत आप जनसंख्या वृद्धि, जनसंख्या वृद्धि को प्रभावित करने वाले कारक, जनसंख्या वितरण, जनसंख्या वितरण एवं घनत्व को प्रभावित करने वाले कारक, आयु, लिंगानुपात आदि का अध्ययन करेंगे। जनसंख्या वृद्धि के अन्तर्गत जनसंख्या वृद्धि की प्रवृत्ति, जनसंख्या वृद्धि का वितरण, जनसंख्या वृद्धि के वर्ग, जनसंख्या वृद्धि का स्थानिक प्रतिरूप, जनसंख्या वितरण, जनसंख्या वितरण की असमानता, जनसंख्या घनत्व, जसंख्या घनत्व का वर्ग, जनसंख्या घनत्व को प्रभावित करने वाले कारक, जनसंख्या घनत्व का देश में वितरण, आयु संरचना, आयु वर्ग, आयु वर्ग का असमान वितरण, लिंगानुपात तथा देश में असमान वितरण को आप समझ पायेंगे। इसके अलावा जनंसख्या वृद्धि का सामाजिक–आर्थिक उत्थान में बांधा, जनसंख्या के कारण खाद्यान्न संकट, सघन नगरीय क्षेत्र में पर्यावरण पर प्रभाव, तथा लोगों का रहन–सहन का स्तर आदि को भी समझ पायेंगे।

13.2 उद्देश्य–

भारत भूगोल के इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप–

- जनसंख्या वृद्धि की प्रवृत्ति तथा उसका वितरण समझ सकेंगे।
- जनसंख्या वृद्धि के स्तर को समझ सकेंगे।
- जनसंख्या वितरण तथा उसको प्रभावित करने वाले प्रमुख कारणों को समझ सकेंगे।
- आयु संरचना, आयु वर्ग तथा आयु वितरण को समझ सकेंगे।
- लिंगानुपात तथा उसको प्रभावित करने वाले कारक को समझ सकेंगे।
- जनसंख्या वृद्धि का स्थानिक प्रतिरूप को समझ सकेंगे।

13.3 जनसंख्या वृद्धि–

भारतीय जनसंख्या की विशेषताओं में एक मुख्य विशेषता इसकी तीव्र वृद्धि दर भी है। भारत की जनसंख्या वृद्धि औसतन प्रतिवर्ष 1.64 प्रतिशत है। यद्यति विश्व की जनसंख्या, जनसंख्या वृद्धि 1.8 प्रतिशत प्रति वर्ष है। भारत की जनसंख्या वृद्धि से कम चीन की वृद्धि वर्तमान में है। चीन की जनसंख्या वृद्धि दर 1.3 प्रतिशत है। प्रथम जनगणना के समय भारत की जनसंख्या 20.3 करोड़ थी, प्रथम जनगणना वर्ष 1871 में हुई थी। 1871 से लेकर 1901 तक जनसंख्या वृद्धि की दर बहुत मंद गति से बढ़ रही थी, जो 1871 से 1901 के मध्य केवल 3.3 करोड़ की वृद्धि हुई। इसका प्रमुख कारण दुर्भिक्ष एवं महामारी के परिणामस्वरूप उच्च मृत्यु दर थी।

20वीं सदी के दौरान बढ़ रही जनसंख्या वृद्धि को 4 चरणों में बांटा जा सकता है–

(अ) मन्द वृद्धि–

देश में 1901 से 1921 के बीच जनसंख्या अति धीमी गति (0.27 प्रतिशत/वर्ष) में बढ़ी है जो 23.84 करोड़ से बढ़कर 25.13 करोड़ हो गयी। भारत में 1911 से 1921 के दौरान इन्फ्लुएन्जा महामारी तथा सूखे के कारण जनसंख्या वृद्धि में कमी पायी गई।

(ब) स्थित वृद्धि–

1921 से 1951 के मध्य औसत जनसंख्या वृद्धि 1.45 प्रतिशत प्रति वर्ष थी जो 25.13 करोड़ से बढ़कर 36.11 करोड़ हो गई। वर्ष 1921 को जनांकिकीय विभाजक वर्ष कहा जाता है। यह जनसंख्या वृद्धि दर महामारी, अकाल पर

नियंत्रण तथा स्वास्थ्य सुविधा में सुधार का परिणाम है। मृत्यु दर को 47 प्रति हजार से घटकर 27 प्रति हजार हो जाने के कारण है।

(स) तीव्र वृद्धि–

1951 से 1981 के बीच जनसंख्या वृद्धि का औसत दर 2.2 प्रतिशत की रही है। वर्ष 1961 से 1971 के मध्य 24.8 प्रतिशत की सर्वाधिक जनसंख्या वृद्धि देखी गई। 1961 से 1971 के मध्य औसत वार्षिक घातीय वृद्धि दर 2.22 प्रतिशत दर्ज की गयी जो वर्ष 1971–81 में घटकर 2.20 प्रतिशत रह गई। जनसंख्या में यह वृद्धि चिकित्सा क्षेत्र में सुधार तथा विकास कार्य में तेजी के कारण हुई। इस दौरान मृत्यु दर 27 प्रति हजार से 15 प्रति हजार हो गयी जिसका परिणाम उच्च जनसंख्या वृद्धि के रूप में देखा जा सकता है।

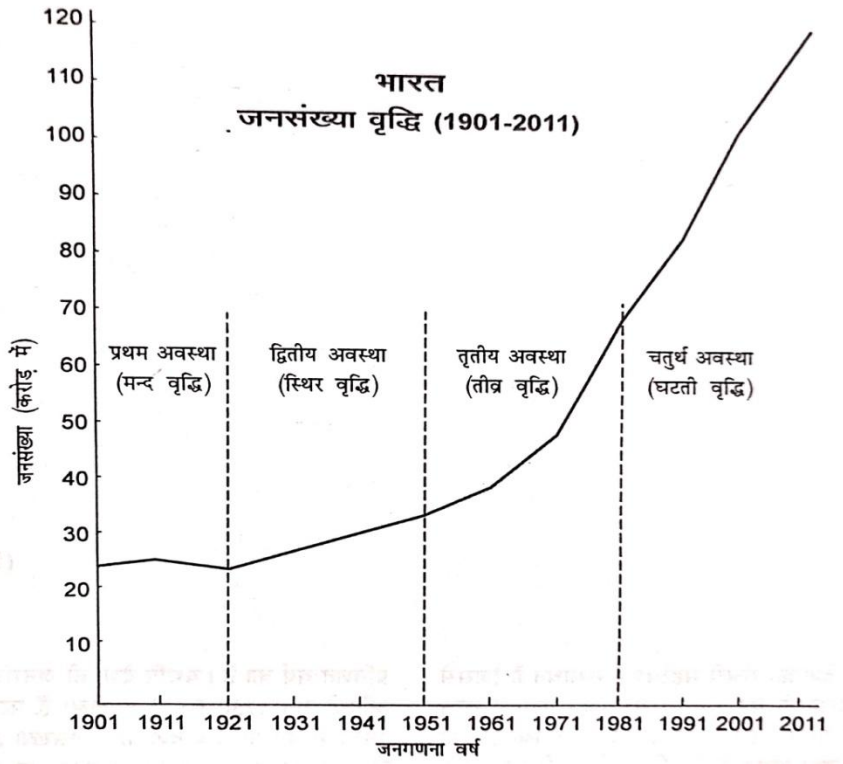

चित्र 1

(द) घटती वृद्धि–

वर्ष 1981 से 2011 के मध्य जनसंख्या वृद्धि में क्रमिक ह्रास देखा गया है लेकिन जनसंख्या में उच्च वृद्धि की प्रवृत्ति अब भी जारी है। इस समय जनसंख्या की औसत वार्षिक घातीय वृद्धि घटकर 1.63 (2001–2011) हो गई। इस बीच जन्म दर भी 38 प्रति हजार (1981) से घटकर 23 प्रति हजार (2008)

और मृत्यु दर 15 से घटकर 7 प्रति हजार हो गई। जनसंख्या घटवा की यह प्रवृत्ति लोगों द्वारा परिवार नियोजन अभिमुख का परिणाम है।

भारत में 30 प्रतिशत जनसंख्या की उम्र 15 वर्ष से कम है। यह वर्तमान में उच्च निर्भरता अनुपात के अलावा तीव्र जनसंख्या वृद्धि का संकेत भी है। दूसरा प्रमुख वर्ग युवा जनसंख्या का है जिसका वर्तमान उच्च वृद्धि में उल्लेखनीय योगदान है। उच्च वृद्धि के ही कारण देश के आर्थिक तथा सामाजिक विकास के कार्यक्रम आशानुकूल प्रभाव नहीं डाल पा रहे हैं।

1. जनसंख्या वृद्धि का स्थानिक प्रतिरूप–

देश के विभिन्न क्षेत्रों में जनसंख्या वृद्धि दर में पर्याप्त अन्तर पाया जाता है। वर्ष 2011 के आंकड़ों के अनुसार दादर एवं नगर हवेली (55.88 प्रतिशत) सर्वाधिक जनसंख्या वृद्धि दर्ज किया तथा नागालैण्ड (–0.58 प्रतिशत) राज्य सबसे कम दर्ज किया है। देश में 14 राज्य तथा 4 केन्द्र शासित प्रदेश ऐसे हैं जिनकी जनंसख्या वृद्धि राष्ट्रीय औसत (17.69 प्रतिशत) से अधिक है। देश में उच्च जनसंख्या वृद्धि वाले राज्य देश के उत्तर मध्य भाग में स्थित है। जबकि असम घाटी, पूर्वी तटीय तथा महाराष्ट्र के भागों में जनसंख्या वृद्धि दर धीमी रही है। सामान्य स्थिति में उच्च साक्षरता, अधिक सामाजिक आर्थिक–विकास का जन्म दर नियन्त्रण में सकारात्मक रोल होता है। जिसका प्रभाव धीमी वृद्धि दर के रूप में देखा जाता है।

वर्ष 1991 से 2001 और वर्तमान 2001 से 2011 के दशकों के दौरान जनसंख्या वृद्धि के तुलनात्मक अध्ययन से ज्ञात होता है कि जनसंख्या वृद्धि में घटाव हुआ है। जनसंख्या वृद्धि का सर्वाधिक घटाव नागालैण्ड (65 प्रतिशत) और सबसे कम घटाव झारखण्ड (0.94 प्रतिशत) में देखा गया है। पिछले दो दशकों के बीच धनात्मक वृद्धि हासिल करने वाले राज्यों का परिसर (तमिलनाडु) 3.89 प्रतिशत से (पुडुचेरी) 7.46 प्रतिशत के बीच पाया गया है।

ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों के बीच जनसंख्या वृद्धि की दर में भी पर्याप्त विस्तार पाया जाता है। ग्रामीण क्षेत्र की अपेक्षा शहरी क्षेत्र में वृद्धि दर अधिक पाया जाता है। देश में अरुणाचल प्रदेश तथा दादरा और नगर हवेली नगरीय जनसंख्या अधिक बढ़ी तथा केरल में सबसे कम दर्ज की गई। इसी तरह सबसे अधिक ग्रामीण जनसंख्या वृद्धि नागालैण्ड में (63.37 प्रतिशत) और सबसे कम केरल (10.05 प्रतिशत) एवं दिल्ली (1.5 प्रतिशत) दर्ज की गई है। गोवा तथा तमिलनाडु में ग्रामीण वृद्धि दर ऋणात्मक रही है।

13.4 जनसंख्या वृद्धि को नियन्त्रित करने वाले कारक–

किसी देश में जन्मदर, मृत्युदर व स्थानान्तरण को नियन्त्रित करना जनसंख्या वृद्धि को प्रभावित करना हैं इन तीनों तत्वों को प्रभावित करके जनसंख्या वृद्धि को नियन्त्रित किया जा सकता है। इनको प्रभावित करने वाले कारक अग्रलिखित हैं–

1. जन्मदर को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक–

इसको प्रभावित करने वाले प्रमुख कारकों में जनांकिकीय, सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक तथा जैविक कारक है। इनमें विवाह की आयु, उर्वरता, विवाह की अवधि तथा यौन सम्पर्क का स्वभाव आदि कारक जन्मदर पर प्रभाव डालते हैं।

2. मृत्युदर को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक–

जन्मदर की भांति मृत्युदर को भी जनांकिकीय, सामाजिक, आर्थिक कारकों के साथ–साथ अनेक मानव जनित एवं प्राकृतिक जनित आपदायें प्रभावित करती हैं। आयु यौन संरचना, जीवन प्रत्याशा, गर्भधारण करने की क्षमता, गर्भधारण करने की आयु, शिशु भ्रूण हत्या, दहेज कुप्रथा, आवास, पोषण तथा स्वच्छता आदि की मृत्युदर को नियंत्रित करते है।

3. जनसंख्या का स्थानान्तरण–

जनसंख्या का स्थानान्तरण भी जनसंख्या वृद्धि दर प्रभाव डालता है। जिन क्षेत्रों में जनसंख्या का उत्प्रवास या बर्हिप्रवास होता है। वहां पर जनसंख्या वृद्धि दर पर ऋणात्मक प्रभाव पड़ता है। जबकि जिन क्षेत्रों में अन्य क्षेत्रों से अप्रवास होता है वहां जनसंख्या वृद्धि दर धनात्मक रूप से प्रभावित होती है।

बाल जनसंख्या–

0 से 6 आयु समूह की बाल जनसंख्या के आंकड़ों का प्राथमिक आशय साक्षरता दर की गणना करना है, जिसे 7 वर्ष या उससे अधिक आयु की जनसंख्या की गणना करके निकाला जाता है। हालांकि, आंकड़े जनसंख्या वृद्धि से सम्बद्ध संभव व्यापक विश्लेषण हेतु हमें क्षमतावान बनाते हैं। यह सुरक्षित ढंग से माना जा सकता है कि इस वर्ग की जनसंख्या अंतरराज्यीय प्रवासन से बेहद कम प्रभावित होती है। 0–6 आयु समूह की जनसंख्या 2001 के लगभग 163.8 मिलियन की तुलना में 2011 में 164.5 मिलियन थी। इसमें, 121.3 मिलियन ग्रामीण क्षेत्रों में और 43.2 मिलियन शहरी क्षेत्रों में थे। बाल जनसंख्या 2001–2011 के दौरान 0.7 मिलियन बढ़ी है, जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में 5.2 मिलियन

की कमी और शहरी क्षेत्रों में 5.9 की बढ़ोतरी दर्ज की गई है। कुल जनसंख्या में बाल जनसंख्या का प्रतिशत 2001 में 15.9 प्रतिशत था, जो 2011 में घटकर 13.6 प्रतिशत हो गया है। जम्मू–कश्मीर, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखंड, अरुणाचल प्रदेश, मिजोरम एवं मेघालय में कुल जनसंख्या में बाल जनसंख्या का प्रतिशत 15 प्रतिशत है जबकि हिमाचल प्रदेश एवं पश्चिम बंगाल में यह अनुपात 9.5 प्रतिशत है। सिक्किम एवं त्रिपुरा अन्य राज्य हैं जिनका कुल जनसंख्या में बाल जनसंख्या का अनुपात 10 प्रतिशत से कम है।

जम्मू–कश्मीर ऐसा राज्य है, जिसने अपवाद के तौर पर कुल जनसंख्या में बाल जनसंख्या में 1.5 प्रतिशत तक की वृद्धि दर्ज की है, और नागालैंड में 0.1 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। बाकी अन्य राज्यों और संघ प्रदेशों में बाल जनसंख्या अनुपात में गिरावट दर्ज की गई है।

13.5 जनसंख्या वितरण–

भारत की जनसंख्या की विशेषताओं में एक प्रमुख विशेषता उसका असमान वितरण भी है। देश के पांच जनसंख्या बहुल राज्यों के 30 प्रतिशत क्षेत्र पर देश की लगभग 50 प्रतिशत जनंसख्या केन्द्रित है जबकि उत्तर एवं उत्तर पूर्व के राज्यों के 16 प्रतिशत भाग में देश की 4 प्रतिशत से भी कम जनसंख्या निवास करती है। इसी भांति देश की एक प्रतिशत से अधिक जनसंख्या वाले 18 राज्यों में समूचे भारत की 97 प्रतिशत जनसंख्या पायी जाती है।

1. जनसंख्या घनत्व–

भूमि पर जनसंख्या के दबाव को जनसंख्या घनत्व कहते हैं। वर्ष 1901 में भारत का जनसंख्या घनत्व 77 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी था जो वर्ष 2011 में बढ़कर 382 हो गया। भारत के राज्यों में जनसंख्या घनत्व में काफी अन्तर पाया जाता है। बिहार में सबसे अधिक जनसंख्या घनत्व (1002 व्यक्ति/वर्ग किमी0) तथा सबसे कम जनसंख्या घनत्व (17 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी0) पायी जाती है। भारत के 10 राज्यों तथा 6 केन्द्र शासित प्रदेशों में जनसंख्या घनत्व राष्ट्रीय औसत (382 व्यक्ति/वर्ग किमी0) से अधिक पाया जाता है। देश के सर्वाधिक घने बसे राज्यों में बिहार (1106 व्यक्ति/वर्ग किमी0) पश्चिम बंगाल (1028) तथा केरल (860) शामिल है इसके विपरीत अरुणाचल, मिजोरम, सिक्मि तथा मणिपुर में जनसंख्या घनत्व 125 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी0 से कम पाया जाता है। ये राज्य मुख्यतः अनुपजाऊ तथा पहाड़ी हैं। औसत घनत्व के आधार पर देश की जनसंख्या घनत्व को तीन वर्गों में बांटा जा सकता है–

(क) निम्न घनत्व–

इस वर्ग में जनसंख्या घनत्व 200 व्यक्ति प्रतिवर्ग किमी0 से कम पायी जाती है जिससे देश की 10 राज्य एवं एक केन्द्रशासित प्रदेश शामिल है जो रेगिस्तानी, बीहड़, पहाड़ी, वनाच्छादित, दलदली और कटाव ग्रस्त क्षेत्रों में स्थित हैं। इसमें पश्चिमी राजस्थान, मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ का क्षेत्र, उड़ीसा का कुछ क्षेत्र, पूर्वी कर्नाटक, जम्मू कश्मीर, आन्ध्र प्रदेश का मध्यवर्ती भाग, हिमाचल प्रदेश, मणिपुर का पहाड़ी वाला भाग, मिजोरम, नागालैण्ड, मेघालय, उत्तराखण्ड, सिक्किम तथा अरुणाचल प्रदेश शामिल है।

(ख) मध्यम घनत्व–

इस वर्ग में 200–400 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी0 पाये जाते हैं जिसमें 10 राज्य शामिल है। इसका विस्तार गुजरात, महाराष्ट्र, तमिलनाडु के कुछ भाग में, कर्नाटक के दक्षिणी भाग में, तेलंगाना, रायल सीमा तथा तटवर्ती आन्ध प्रदेश में है। इन क्षेत्रों में अनुपजाऊ भूमि, सिंचाई साधनों का अभाव तथा विषम धरातलीय क्षेत्र पाये जाते है। इन क्षेत्रों में औद्योगिकीय तथा नगरीकरण के कारण जनसंख्या घनत्व में सकारात्मक परिवर्तन हुआ है। इसके अलावा पंजाब, हरियाणा तथा राजस्थान के कुछ भागों में मध्यम घनत्व पाया जाता है। जहां सिंचाई का विकास जनसंख्या घनत्व में विशेष योगदान करता है।

(ग) उच्च घनत्व–

इस वर्ग में 800 व्यक्ति/वर्ग किमी से अधिक पाये जाते हैं जिसमें 8 राज्य तथा 6 केन्द्रशासित प्रदेश शामिल हैं। पं0 बंगाल, बिहार, उत्तर प्रदेश, दिल्ली, हरियाणा तथा पंजाब के कुछ क्षेत्रों में 500 व्यक्ति/वर्ग किमी0 से भी अधिक पाया जाता है। जहां उच्च उर्वरक मृदा, कृषि का विकास तथा नगरीकरण अधिक जनसंख्या घनत्व का प्रमुख कारण है। इसके अलावा केरल तथा तमिलनाडु के कुछ क्षेत्रों में तथा महानदी, गोदावरी और कृष्णा नदियों के डेल्टाओं, महाराष्ट्र एवं गुजरात के क्षेत्रों में भी जनसंख्या घनत्व अधिक पाया जाता है।

13.6 जनसंख्या के वितरण एवं धनत्व को प्रभावित करने वाले कारक–

धरातल– जनसंख्या वितरण एवं घनत्व को धरातल की विभिन्न आकृति मैदान, पठार तथा पर्वत आदि के कारण वितरण असमान पाया जाता है। इस प्रकार के धारातलीय उच्चावच, कृषि, यातायात एवं निवास के लिए अनुपयुक्त होता हैं इन क्षेत्रों में असमतल भूमि, अनुपजाऊ भूमि, यातायात मार्ग का अभाव

तथा ऊबड़–खाबड़ भूमि आदि के कारण जनसंख्या वितरण एवं घनत्व असमान पाया जाता है।

जलवायु–जलवायु, जनंसख्या वितरण को सर्वाधिक प्रभावित एवं नियन्त्रित करता है। अति उष्ण, आर्द्र एवं अतिशीतल जलवायु मानव निवास पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है। जैसे राजस्थान के थार मरुस्थल में शुष्क जलवायु के कारण जनसंख्या वितरण निम्न पाया जाता है। देश के वर्षा वाले (प्रायद्वीप के पूर्व एवं पश्चिम) क्षेत्रों में सघन जनसंख्या पायी जाती है तथा उच्च एवं निम्न तापमान वाले क्षेत्रों में निम्न जनसंख्या वितरण पाया जाता है। इस प्रकार जलवायु जनसंख्या वितरण को प्रभावित एवं नियन्त्रित करती है।

जल की उपलब्धता– जल जीवन के लिए एक महत्वपूर्ण तत्व है जिसके अभाव में जीवन की कल्पना नहीं किया जा सकता है। अतः जहां जल पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है वहां जनसंख्या वितरण भी अधिक पायी जाती है तथा जहां जल की मात्रा कम होती है वहां जनसंख्या वितरण कम पाया जाता है। जल का प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होने के कारण सिंचाई, पेयजल संचालित होती है।

खनिज संसाधन– जहां संसाधन अधिक मात्रा में उपलब्ध होता है वहां पर जनसंख्या घनत्व भी अधिक पाया जाता है। खनिज क्षेत्रों में औद्योगिक एवं यातायात के विकास के कारण लोगों को रोजगार मिलेगा और इससे अन्य आवश्यक सुविधाओं का विकास होता है।

मृदा– यह खाद्यान्न उत्पादन का एक अनिवार्य कारक है। खाद्यान्नों का उत्पादन उपजाऊ मृदा में होता है। अतः जहां उपजाऊ मृदा पायी जाती है वहां जनसंख्या का वितरण अधिक तथा जहां मृदा अनुपजाऊ होती है वहां जनसंख्या वितरण निम्न पाया जाता है। भारत निदियों द्वारा निक्षेपित जलोढ़ मृदा में जनसंख्या वितरण अधिक पाया जाता है।

यातायात के साधन–परिवहन मार्ग के कारण ही लोगों को अपने गन्तव्य स्थल पर पहुंचने में सुविधा होती है। जिन क्षेत्रों में यातायात का तीव्र विकास हुआ है वहां पर सघन जनसंख्या निवास करती है तथा जहां पर इनका विकास कम हुआ है। वहां जनसंख्या वितरण निम्न पाया जाता है। यातायात पर ही उद्योग तथा अन्य क्रिया निर्भर होती है।

सामाजिक कारक– जनसंख्या वितरण, धार्मिक, सांस्कृतिक, भाषा, रहन–सहन आदि के द्वारा भी प्रभावित होता है। लोगों को अपने परिवार, भूमि,

खान–पान, जलवायु तथा धर्म में विश्वास के कारण जनसंख्या वितरण असमान पाया जाता है।

राजनैतिक एवं आर्थिक कारक– असुरक्षा, असंतोष, आन्तरिक गृह युद्ध तथा राजनीतिक उथल–पुथल अत्यधिक प्रभावित होती है। जहां पर शान्त एवं सुरक्षित वातावरण है वहां पर जनसंख्या सघन है। जहां पर शान्त एवं सुरक्षित वातावरण है वहां पर जनसंख्या सघन तथा स्थिति विपरीत है वहां जनसंख्या कम पायी जाती है। औद्योगीकरण एवं नगरीय क्रिया–कलाप जनसंख्या वितरण को अधिक प्रभावित करती है।

13.7 आयु–

जनसंख्या का अध्ययन में आयु की गणना भी महत्वपूर्ण तत्व है। जिससे कार्य शक्ति, निर्भर जनसंख्या, दीर्घ आयु के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। आयु के आधार पर जनसंख्या को तीन प्रमुख वर्गों में में बांटा जा सकता है। किशोर–जिनकी आयु 15 वर्ष से कम, प्रौढ–़ जिनकी आयु 15–59 वर्ष तथा वृद्ध– जिनकी आयु 60 वर्ष से अधिक होती है। किशोर तथा वृद्ध को निर्भर कहा जाता है। प्रौढ़ को श्रमजीवी या कार्यरत वर्ग भी कहते हैं।

सारणी

भारत का आयु वर्ग (प्रतिशत)

वर्ष	0–14 वर्ष	15–59वर्ष	60 वर्ष से अधिक
1901	38.1	56.8	5.1
1911	37.8	56.9	5.2
1921	38.6	56.0	5.4
1931	38.5	56.4	5.1
1941	39.1	55.2	5.7
1951	37.5	56.9	5.6
1961	41.0	53.3	5.6
1971	42.0	52.0	6.0
1981	39.7	54.1	6.2
1991	36.5	57.1	6.4
2001	35.6	58.1	6.3
2011	29.7	64.1	5.5

वर्ष 1901 में देश की 38.1 प्रतिशत जनसंख्या किशोर वर्ग, 56.59 प्रतिशत जनसंख्या प्रौढ वर्ग तथा 5.1 प्रतिशत जनसंख्या वृद्ध वर्ग की है। वर्ष 1901 में किशोर वर्ग 38.1 प्रतिशत था जो 1961 में बढ़कर 41 प्रतिशत तथा 1971 में 42 प्रतिशत हो गई। इस प्रकार 1901 से 1971 तक किशोर जनसंख्या उतार–चढ़ाव करते हुए बढ़ी है। वर्ष 2011 में यह घटकर 29.7 प्रतिशत हो गई।

वर्ष 1901 में प्रौढ़ वर्ग की जनसंख्या 56.8 प्रतिशत थी जो वर्ष 2011 में बढ़कर 64.8 हो गई। यह जनसंख्या वृद्धि वर्ष 1901 से 2011 के बीच घटती एवं बढ़ती हुई बढ़ी है।

वर्ष 1901 में वृद्ध वर्ग की जनसंख्या देश में 5.1 थी जो वर्ष 2011 में 5.5 हो गई। वर्ष 1901 में वृद्ध वर्ग 2011 के मध्य वृद्ध जनसंख्या प्रतिशत काफी उतार–चढ़ाव करते हुए बढ़ी है। वर्ष 1971 में किशोर 42 प्रतिशत, प्रौढ़ 52 प्रतिशत तथा वृद्ध 6 प्रतिशत थे। वर्ष 1971 के आंकड़ों से अधिक कार्यशील जनसंख्या एवं उच्च निर्भरता अनुपात का बोध होता है। साथ ही साथ किशोर वर्ग के ऊँचे प्रतिशत से निकट भविष्य में भी तीव्र जनंसख्या वृद्धि का संकेत मिलता है। किशोर वर्ग का अधिक अनुपात उच्च जन्मदर तथा तीव्र से घटता शिशु मृत्युदर के कारण है। यह वर्ग आर्थिक दृष्टि से एक आश्रित और अनुत्पादक वर्ग है। वर्ष 1971 से वर्ष 2011 के बीच किशोर वर्ग के प्रतिशत में कमी आयी है तथा प्रौढ़ एवं वृद्ध वर्ग के प्रतिशत में बढ़ोत्तरी हुई है। ऐसा जन्मदर में कमी तथा जीवन प्रत्याशा में सुधार के कारण सम्भव है। भारत के गांवों में किशोरों तथा वृद्धि वर्ग के लोग पाये जाते हैं। भारत जैसे देश में आयु एवं लिंग पिरामिड का आधार चौड़ा तथा शिखर सकरा व पतला होता है।

13.8 लिंगानुपात–

इसको प्रति हजार पुरुषों पर स्त्रियों की संख्या के रूप में व्यक्त किया जाता है। लिंगानुपात को सामाजिक संकेतक के रूप में व्यक्त किया जाता है। वर्ष 2011 के आंकड़ों के अनुसार भारत का लिंगानुपात 943 था। अर्थात् 1000 पुरुष पर 943 स्त्रियों का अनुपात पाया जाता है। वर्ष 1901 में 972 लिंगानुपात था लेकिन वर्ष 2011 में यह घटकर 943 हो गया। सामान्य रूप से देखा जाये तो लिंगानुपात वर्ष 1901 से लगातार घटा है। वर्ष 2001 में 933 तथा वर्ष 2011 में 943 लिंगानुपात जो 2001 से 2011 के बीच 10 अंकों की वृद्धि हुई। वर्ष 1981 से 1991 के बीच 8 अंक की कमी पायी गई है।

लिंगानुपात की कमी का प्रमुख कारण स्त्री व शिशु की अधिक मृत्युदर है। लड़कियों की मृत्यु विकसित देशों की प्रमुख समस्या है। जहां स्त्री शिशु की अपेक्षा पुरुष शिशु पाने की अधिक ललक है साथ ही इसके लालन–पालन पर

भी अधिक ध्यान दिया जाता है। वर्तमान समाज विकसित तकनीक के माध्यम से लिंग जांच कर कन्या भ्रूण हत्या को और भी आसान बना दिया है। इसका प्रभाव भी लिंगानुपात पर पड़ता है।

सारणी

भारत–लिंगानुपात

वर्ष	लिंगानुपात	वर्ष	लिंगानुपात
1901	972	1961	941
1911	964	1971	930
1921	955	1981	934
1931	950	1991	926
1941	945	2001	933
1951	946	2011	943

Census of India

देश में लिंगानुपात में बहुत भिन्नता पाई जाती है। हरियाणा राज्य सबसे कम 879 तथा केरल राज्य में सबसे अधिक 1084 लिंगानुपात है। केन्द्रशासित प्रदेशों में दमन और दीव में लिंगानुपात सबसे कम 618 तथा पुडुचेरी में लिंगानुपात सबसे अधिक 1037 पाया जाता है। छत्तीसगढ़ (991), तमिलनाडु (996), मणिपुर, (992) तथा आन्ध्र प्रदेश (993) ऐसे राज्य हैं जो संतुष्टि लिंगानुपात की ओर अग्रसर है। राष्ट्रीय औसत से अधिक लिंगानुपात वाला 16 राज्य तथा 2 केन्द्रशासित प्रदेश है। देश के दक्षिण एवं उत्तर पूर्व के राज्यों में लिंगानुपात राष्ट्रीय औसत लिंगानुपात से अधिक पाया जाता है। भारत के उत्तरी भारत में केवल हिमाचल प्रदेश (972) तथा उत्तराखण्ड (963) राज्य राष्ट्रीय औसत लिंगानुपात से अधिक है। भारत के मध्य भाग के सभी राज्यों तथा केन्द्रशासित प्रदेशों में लिंगानुपात राष्ट्रीय औसत लिंगानुपात से कम पाया जाता है। देश के उत्तर–पूर्व सिक्किम, नागालैण्ड तथा अरुणाचल प्रदेश में भी लिंगानुपात कम पाया जाता है। इस प्रकार भारत के सभी प्रदेशों में लिंगानुपात की गिरावट देखी गई है।

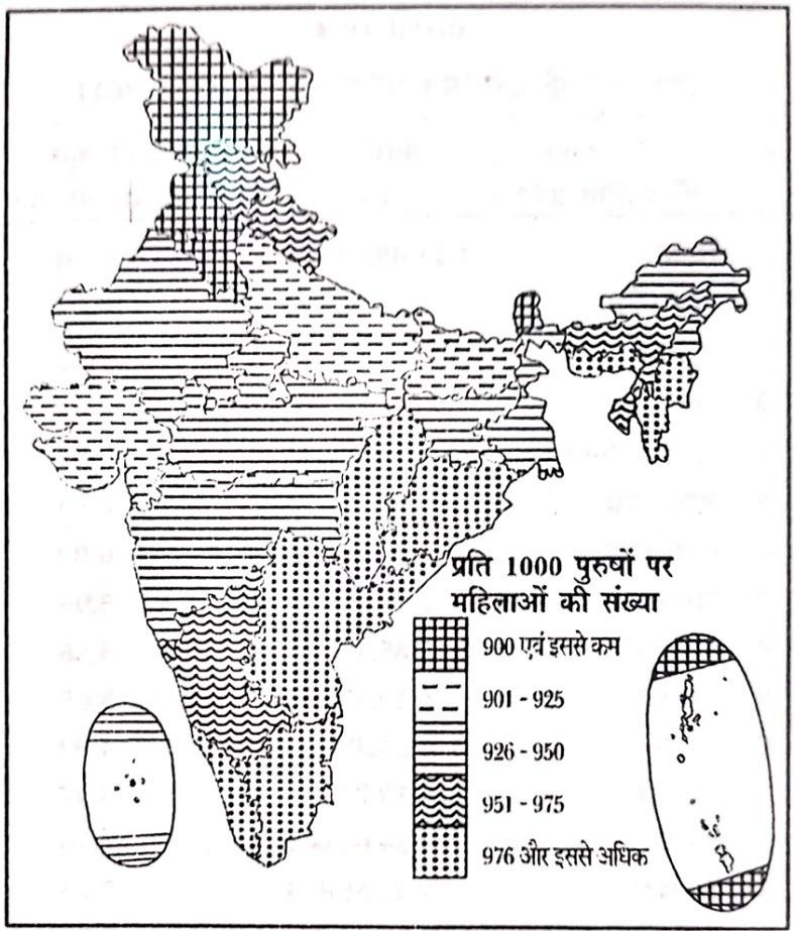

चित्र 2

देश में लिंगानुपात का वितरण बड़ा असमान पाया जाता है। ग्रामीण प्रदेशों की अपेक्षा शहरी भाग में लिंगानुपात कम पाया जाता है। ग्रामीण क्षेत्रों का लिंगानुपात 946 तथा नगरीय भाग का 901 है। अधिकांश राज्यों एवं केन्द्रशासित प्रदेशों में यह प्रवृत्ति देखी जाती है। लेकिन कुछ राज्यों तथा केन्द्रशासित प्रदेशों में यह प्रवृत्ति नहीं देखी जा सकती है। नगर में कम लिंगानुपात का प्रमुख कारण गांवों से नगरों की ओर पुरुष प्रधान का प्रवास है।

देश में सर्वाधिक लिंगानुपात वाले राज्यों में केरल (1084), तमिलनाडु (996), आन्ध्र प्रदेश (993), मणिपुर (992) तथा छत्तीसगढ़ (991) आदि है। सबसे कम लिंगानुपात में हरियाणा (879), जम्मू एवं कश्मीर (889), सिक्किम (890) तथा पंजाब (895), है। इसके अलावा केन्द्रशासित प्रदेश में दमन और दीव (618), दादरा और नगर हवेली (774), चण्डीगढ़ (818), राष्ट्रीय राधानी क्षेत्र दिल्ली (868), अण्डमान और निकोबार द्वीप समूह (876), लक्ष्यद्वीप (946) तथा पुडुचेरी (1037) लिंगानुपात पाया जाता है। उपरोक्त सभी आंकड़ा जनसंख्या 2011 के आंकड़ों के अनुसार है।

बाल लिंगानुपात–

1981 से आगे, भारतीय जनगणनाओं ने 0–6 वर्ष आयु वर्ग के पुरुष एवं महिलाओं के लिए जनसंख्या आंकड़े जारी किए। इसने इस आयु वर्ग के बच्चों के लिंगानुपात की गणना में सक्षम बनाया । 0–6 वर्ष के आयु समूह के बच्चों के लिंगानुपात की गणना ने समग्र तौर पर जनसंख्या में लिंगानुपात के निकट भविष्य की प्रवृत्तियों की ओर संकेत करने के अलावा, बालिकाओं के प्रति समाज के दृष्टिकोण में नूतन परिवर्तन को प्रतिबिम्बित भी किया है। (बाल लिंगानुपात 0–6 आयु समूह में प्रति 1000 पुरुषों पर महिलाओं की संख्या है।)

1991 के बाद, समग्र लिंगानुपात में निरंतर वृद्धि हुई, लेकिन 1961 से बच्चों के लिंगानुपात में निरंतर गिरावट भी आई। बाल लिंगानुपात, 2001 में 927 था जो 2011 में घटकर 919 रह गया है। 0–6 आयु वर्ग के सर्वोच्च लिंगानुपात में सभी राज्यों में अरुणाचल प्रदेश, मिजोरम और मेघालय अग्रणी हैं।

प्रमुख राज्यों में (10 मिलियन और अधिक की जनसंख्या वाले) छत्तीसगढ़, केरल, असम, पश्चिम बंगाल, झारखंड और कर्नाटक बाल लिंगानुपात में अग्रणी राज्य हैं। इस मामले में निम्नतम स्थान पर हरियाणा, पंजाब, जम्मू और कश्मीर, राजस्थान, और गुजरात हैं। संघ शासित प्रदेशों में दिल्ली, चंडीगढ़ और लक्षद्वीप निम्नतम स्थान पर हैं। हालांकि, सकारात्मक संकेत यह है कि 2001 की जनगणना में सोचनीय स्तर तक बाल लिंगानुपात में गिरावट वाले राज्यों ने 2011 में थोड़ा बेहतर प्रदर्शन किया। यह वृद्धि महत्वपूर्ण रूप से पंजाब, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, चंडीगढ़, गुजरात और तमिलनाडु में दिखाई दी। इसके अलावा, मिजोरम और अंडमान–निकोबार द्वीपसमूह ने भी 2001–2011 के दौरान बाल लिंगानुपात में बढ़ती प्रवृत्ति का प्रदर्शन किया।

दूसरी ओर, 2001–2011 के दौरान जम्मू और कश्मीर, दादरा एवं नगर हवेली, लक्षद्वीप, महाराष्ट्र, राजस्थान, मणिपुर, उत्तराखण्ड, झारखंड और मध्य प्रदेश में बाल लिंगानुपात में तीव्र गिरावट दर्ज की गई। यहां तक कि सिक्किम, अरुणाचल प्रदेश और नागालैंड जैसे पूर्वोत्तर राज्यों ने भी गिरावट की प्रवृत्ति का प्रदर्शन किया।

ग्रामीण क्षेत्र में बाल लिंगानुपात (0–6 वर्ष) महत्वपूर्ण रूप से गिरकर 2001 में 934 की तुलना में 2011 में 923 रह गया। शहरी क्षेत्र में यह गिरावट 1 अंक तक सीमित रही जो कि 2001 में 906 से गिरकर 2011 में 905 तक पहुंच गई।

13.9 सारांश–

आप इस इकाई में भारत भूगोल से सम्बन्धित जनसंख्या वृद्धि, जनसंख्या वृद्धि का स्थानिक प्रतिरूप, जनसंख्या वृद्धि को प्रभावित करने वाले कारक, जनसंख्या वितरण, जनसंख्या घनत्व, आयु तथा लिंगानुपात आदि का अध्ययन किये हैं। अब आप समझ गये होंगे कि जसंख्या वृद्धि में मन्द वृद्धि, स्थिर वृद्धि तथा घटती वृद्धि, जनसंख्या वृद्धि का स्थानिक प्रतिरूप में जनसंख्या वृद्धि का असमान वृद्धि, ग्रामीण एवं नगरीय स्तर पर असमान वितरण को, राज्य स्तर पर असमान वितरण, जनसंख्या वृद्धि को नियन्त्रित करने वाले कारक में जन्मदर को प्रभावित करने वाले कारक, मृत्युदर को प्रभावित करने वाले तथा जनसंख्या स्थानान्तरण को प्रभावित करने वाले कारक, जनसंख्या घनत्व में निम्न घनत्व वाल प्रदेश, मध्यम घनत्व वाले प्रदेश तथा उच्च घनत्व वाले प्रदेश, जनसंख्या के वितरण एवं घनत्व को प्रभावित करने वाले कारक में धरातल, जलवायु, जलवायु की उपलब्धता, खनिज सांसाधन, मृदा, यातायात के साधन, सामाजिक कारक, राजनैतिक कारक एवं स्थानिक कारक, आयु में आयु वर्ग, आयु वर्ग का आर्थिक क्रिया पर प्रभाव, आयु वर्ग का असमान वितरण, लिंगानुपात में लिंगानुपात की स्थिति तथा असमान विवरण आदि को।

13.10 शब्द सूची–

जनांकिकीय विभाजक	Demographic divide
भू जोत	Landholding,
वृहद नगर	Megapolis
जनसंख्या घनत्व	Population density
जनसंख्या वृद्धि	Population growth
जनसंख्या प्रवास	Population Migration,
जनसंख्या नीति	Population Policy,
गरीबी	Poverty,
नगरीय आकारिकी	Urbgan Morphology
नगरीय नियोज	Urgban Planning.

13.11 परीक्षापयोगी प्रश्न–

1. जनसंख्या घनत्व की गणना किस राज्य में सबसे अधिक पाया जाता है?

(क) उत्तर प्रदेश (ख) राजस्थान (ग) तमिलनाडु (घ) बिहार

2. लिंगानुपात के लिए स्त्रियों की संख्या पुरुषों की कितनी संख्या निर्भर करती है?

(क) 800 (ख) 1000 (ग) 1100 (घ) 1200

3. वर्ष 2011 के आंकड़ों के अनुसार आयु वर्ग में किसका प्रतिशत अधिक है?

(क) किशोर वर्ग (ख) प्रौढ़ वर्ग (ग) वृद्ध वर्ग (घ) कोई नहीं

4. लिंगानुपात किस राज्य में सबसे कम पाया जाता है?

(क) केरल (ख) तमिलनाडु (ग) बिहार (घ) हरियाणा

5. भारत वर्ष में निर्भरता आयु वर्ग का क्या प्रतिशत है, वर्ष 2011 के आंकड़ों के अनुसार?

(क) 35.2 (ख) 40.4 (ग) 41.3 (घ) 20.4

13.12 महत्वपूर्ण पुस्तकें/संदर्भ–

1. जनसंख्या वृद्धि तथा जनसंख्या वृद्धि का स्थानिक प्रतिरूप का स्पष्ट व्याख्या कीजिए।
2. जनसंख्या वितरण तथा जनसंख्या वितरण को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन कीजिए।
3. आयु संरचना तथा आयु वर्ग का विशद् वर्णन कीजिए।
4. लिंगानुपात को स्पष्ट कीजिए।
5. जनसंख्या वितरण को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन कीजिए।

इकाई 14– जनसंख्या नीति, नगरीकरण, नगरीकरण की समस्याएं एवं समाधान

इकाई की रूपरेखा

14.1 प्रस्तावना

14.2 उद्देश्य

14.3 जनसंख्या नीति

14.4 नगरीकरण

14.5 नगरीकरण समस्याएं

14.6 नगरीकरण समस्याओं का समाधान

14.7 सारांश

14.8 शब्द सूची

14.9 परीक्षोपयोगी प्रश्न

14.10 महत्वपूर्ण पुस्तके एवं संदर्भ

14.11 अभ्यास प्रश्न

14.1 प्रस्तावना

भारत भूगोल के लिए लेखन की इस इकाई की रूपरेखा में आप जनसंख्या नीति नगरीकरण की समस्या एवं समाधान का अध्ययन करेगें, भारत भूगोल में जनसंख्या नीति से सम्बन्धित इमरजेन्सी के समय जनसंख्या नीति, नेशनल पापुलेशन पॉलिसी जनसंख्या नीति की आवश्यकता एवं जनसंख्या नीति के उद्देश्य एवं जनसंख्या नीति के समय हुए परिवर्तन एवं उत्तरदायी शक्तियां कौन–कौन सी थी। यह परिवर्तन कार्य जनसंख्या नीति में हुऐ परिवर्तनों का परिणाम देखने को मिलेगा। इस इकाई में आप जनसंख्या नीति से सम्बन्धित विभिन्न भूगोलवेत्ताओं के विचार तथा सरकार की नीति का अध्ययन करने को मिलेगें।

14.2 उद्देश्य

भूगोल में आधार पाठयक्रम भारत भूगोल के प्रथम खण्ड के द्वितीय इकाई है इस इकाई में आपको पढ़ने के बाद आप जनसंख्या नीति की समस्याओं एवं समाधान से अवगत होगें जनसंख्या नीति से आर्थिक पिछड़ापन, बेरोजगारी, की समस्या का अनुमान लगाया जा सकता है। इस नीति के द्वारा इन समस्याओं का समाधान के अध्ययन करेगें। इसके अलावा नगरीकरण की अवस्थाएं 1. प्राथमिक अवस्था 2. त्वरण की अवस्था 3. अंतिम अवस्था। इनके अलावां नगरीकरण की समस्याएं, नगरीकरण में स्लम बस्तियां, जलपूर्ति की समस्या, महानगरों में जल की मांग एवं पूर्ति, इन सभी सस्मयों का अध्ययन करेगें।

14.3 जनसंख्या नीति

जनसंख्या नीति का तात्पर्य किसी भी देश की जनसंख्या के आकार एवं उसके विभिन्न अंगों को देखा की अधिक, सामाजिक एवं राजनीतिक सन्दर्भ में नियमित करने के लिए कानूनी प्रावधान, प्रशासनिक कार्यक्रम और अन्य सरकारी सक्रियता है। भारत विश्व में चीन के बाद दूसरा सर्वाधिक जनसंख्या वाला देश माना जाता है यह विश्व के लगभग 2.4 प्रतिशत क्षेत्रफल पर 16.7 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है।

संयुक्त राष्ट्र के द्वारा जनसंख्या को परिभाषित करते करते हुए लिखा है कि "जनसंख्या नीति के अन्तर्गत वे समस्त कार्यक्रम एवं कार्यवाहियाँ शामिल की जाती है, जो जनसंख्या के आकार, उनके वितरण एवं विशेषताओं में परिवर्तन लाकर आर्थिक सामाजिक जनांकिकीय, राजनैतिक अथवा अन्य किसी सामूहिक उद्देश्य की पूर्ति के लिए प्रयुक्त की जाती हैं।

यूनेस्को (UNESCO) के द्वारा दी गयी परिभाषा में यह कहा गया है कि "जनसंख्या नीति के अन्तर्गत वे सभी उपाय एवं कार्यक्रम सम्मिलित किये जाते हैं जो विशिष्ट जनाकिकीय चरो जैसे–जनसंख्या आकार, भौगोलिक वितरण, जनसंख्या वृद्धि एवं जनांकीय विशेषताओं को प्रभावित करते हुए आर्थि, सामाजिक, राजनीतिक एवं अन्य उद्देश्यों की प्रति के लिए योगदान करने के लिए तैयार किये जाते हैं। उपर्युक्त परिभाषा से स्पष्ट होता है कि जनसंख्या समस्या को दूर करने के लिए यह लागू किया जाना सरकारी प्रयास है। सर्वप्रथम वर्ष 1960 में एक विशेषज्ञ समूह के द्वारा भारत में एक जनसंख्या नीति बनाने का सुझाव दिया गया। तत्पश्चात् वर्ष 1976 में भारत के द्वारा पहली जनसंख्या नीति अपनायी गयी थी। वर्ष 1976 में भारत सरकार के द्वारा पहली राष्ट्रीय जनसंख्या नीति की घोषणा की गयी। इस नीति में जनसंख्या वृद्धि को

रोकने के उपाय को सम्मिलित किया गया है। भारत प्रथम देश है, जिन्होंने स्वतन्त्रता के पश्चात् परिवार नियोजन कार्यक्रम को औपचारिक रूप में स्वीकार किया। जनसंख्या वृद्धि की गम्भीर समस्या तृतीय योजना में आरम्भ हो गया। तत्पश्चात् विभिन्न योजनाओं में जनसंख्या वृद्धि को कम करने का प्रावधान आरम्भ किया गया। तृतीय योजना के दौरान नैदानिक उपागम "के स्थान पर" प्रसार शिक्षा उपागम को अधिक महत्व दिया गया। चौथी योजना में छोटे परिवार को विकास का प्रमुख अंग मानते हुए वर्ष 1978–79 में जन्मदर को 39 प्रति हजार से 23 प्रति हजार करने का प्रावधान निर्धारित किया गया। पंचम योजना (1974–79) के समय परिवार नियोजन सेवाओं को कल्याणकारी योजना के से सम्बद्ध करने का प्रयास किया गया।

इमरजेन्सी के समय जनसंख्या नीति

16 अप्रैल 1976 ई0 को सरकार के द्वारा राष्ट्रीय जनसंख्या की घोषणा की गयी। जिसमें कुछ प्रावधान निर्धारित किये गये जो निम्न है–

1. विवाह के लिए लड़कियों की उम्र 18 वर्ष और लड़को की उम्र 21 वर्ष निर्धारित की गयी।
2. गरीबों वर्गो द्वारा परिवार नियोजन को स्वीकार के लिए क्षतिपूर्ति वर्ष 1976 से बढ़ा दी गयी।
3. राज्य सरकार के द्वारा नसबन्दी कराने के नियम में विशेष छूट दी गयी।
4. सरकार के द्वारा नसबन्दी अभियान इस नीति की मुख्य विशेषता थी।

छठी योजना (1980–85) में स्वास्थ्य, परिवार कल्याण और पोषण सेवाओं को समन्वित करते हुए जन्मदर को योजना के अन्त तक 30 प्रति हजार करने का तक्ष्य रखा गया। सातवीं योजना के (1985–90) समय परिवार कल्याण योजना सर्वाधिक प्रभावशाली रहा। जिसमें जन्मदर 29.1 प्रति हजार और मृत्युदर 10.4 प्रति हजार करने का लक्ष्य रखा गया। आठवीं योजना को प्रोत्साहित करते हुए जन्मदर को 26 प्रति हजार और शिशु मर्त्यता को 70 प्रति हजार करने का प्रावधान किया। नवीं योजना (1992–2000) में मातृ एवं स्वास्थ्य की देख–रेख को प्रभावी बनाकर गर्भ निरोधक को उपलब्ध कराकर जन्मदर को 23 प्रति हजार और मृत्युदर को 50 प्रति हजार तक लाने का प्रावधान किया।

नेशनल पापुलेशन पॉलिसी 2000

नेशनल जनसंख्या नीति की घोषणा केन्द्र सरकार के द्वारा 15 जनवरी 2000 को किया गया। इस नीति का प्रमुख उद्देश्य दो बच्चों के मानक को

निर्धारित हुए वर्ष 2045 तक जनसंख्या को स्थायी करना है। उपरोक्त लक्ष्य की प्रति हेतु निम्न उपायो का उल्लेख किया गया–

1. लोकसभा की सीटो की संख्या के आधार पर वर्ष 2026 तक 543 यथावत बनाये रखना।
2. दो बच्चों के छोटे परिवार के मानक को अपनाने के लिए लोगों में जागरूकता को प्रोत्साहित करना।
3. लड़कियों के विवाह की उम्र को 18 वर्ष से ऊपर ले जाना।
4. प्रति 1000 जन्में जीवित बच्चों पर शिशु मर्त्यता दर 30 हजार तक लाना।
5. सर्व व्यापकता प्रतिरक्षण
6. अस्पतालों में प्रसव के लिए 80 प्रतिशत प्रशिक्षित स्टाफ की सेवा को उपलब्ध करवाना।
7. एड्स एवं संक्रामक रोगों पर नियंत्रण करना।
8. जन्म पूर्व लिंग–निर्धारण कराना, अपराध है, कानून का कड़ाई के साथ पालन करवाना।
9. प्रजनन तथा बाल स्वास्थ्य सेवाओं के लिए चिकित्सा के लिए भारतीय पद्धति का समन्वय करना।
10. 21 वर्ष की आयु के बाद विवाहित दम्पत्ति को पुरस्कृत किया जाय।
11. दूसरे बच्चे के जन्म के पश्चात् गर्भधारण समाप्ति महिलाओं को भी पुरस्कृत किया जाना चाहिए।
12. दो बच्चों के बाद नसबन्दी कराने वाले या बन्ध्यकरण गरीबी रेखा से नीचे जीवन–यापन करने वाले व्यक्तियों को भी पुस्तकृत किया जाना चाहिए।
13. जनसंख्या नीति के कार्यान्वयन पर निगरानी के लिए प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में जनसंख्या पर एक राष्ट्रीय आयोग का गठन करना।

उपरोक्त उपायो का सफलतापूर्वक लागू कराने के लिए ग्राम पंचायत स्तर पर स्वयं सहायता समूहो, गृहणियो, प्राथमिक शिक्षा को निःशुल्क एवं अनिवार्य बनाने, जन्म एवं मृत्यु के साथ विवाह एवं गर्भ पंजीकरण को अनिवार्य के लिए सुझाव दिया जाय।

वास्तव में जनसंख्या नीति को अधिक व्यापक स्तर रूप देते हुए इसमें सामाजिक, आर्थिक, एवं जानांकिकीय तथ्यों को शामिल करना चाहिए। तीव्र जनसंख्या वृद्धि को रोकने के लिए बाध्यता को नजरंदाज नहीं किया जा सकता है। जाति–धर्म, लिंग के प्रति बिना पक्षपात किये, स्पष्ट रूप से जनसंख्या नीति

को लागू कराने की जरूरत है। जिसने समय के उपायो का भरपूर समावेश किया गया है।

जनसंख्या नीति की आवश्यकता

जनसंख्या नीति की आवश्यकता पर विभिन्न विचाराको ने अपने–अपने मतो को रूप से स्पष्ट किया है–

फ्रेक डब्लू नोटेस्टीन ने अपने विचार को लिखते हुए स्पष्ट किया है कि जनसंख्या नीति का मुख्य उद्देश्य जन्मदर एवं मृत्युदरों में गिरावट के बीच समय अन्तराल को कम करना तथा लोगों के बीच कम से कम जनसंख्या करने का विचार उत्पन्न करना, परिवार को सीमित करने के उपायो को अपनाने के लिए लोगों प्रोत्साहित करना। जिससे इसके लिए निम्न दृष्टिकोण से अध्ययन किया जा सकता है।

1. अंको के दृष्टिकोण

अंको के दृष्टिकोण के अन्तर्गत पुर्ननिरीक्षण करते है। अस्वास्थ्यता एवं मृत्यु को कम करने का प्रयास करते हैं। जनसंख्या नीति के अन्तर्गत माइग्रेशन (प्रवसन) की नीति का निर्धारण करते है। जिससे लोगों में पुर्ननिरीक्षण के द्वारा जनसंख्या के क्षेत्रों वृद्धि हो जाती है।

2. गुणात्मक दृष्टिकोण

गुणात्मक दृष्टिकोण के अन्तर्गत प्रत्याशित आयु, श्रम की आवश्यकता, स्वास्थ्य, साक्षरता एवं जोखिम की क्षमता की मापते हैं। जिससे इन सभी क्षेत्रों में गुणात्मक वृद्धि होने के साथ आकलन किया जा सके। पाल मिडास जनसंख्या विदों के द्वारा जनसंख्या नीति की आवश्यकता को निर्धारित किये है, जो निम्न है–

1. जनसंख्या की संरचना में सुधार करना।
2. जन्मदर एवं मृत्युदर को नियंत्रित करने को सुधार करना।
3. जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रित करना एवं उसका नियमन करना।
4. जनसंख्या के भौगोलिक वितरण में विषमता को दूर करना।
5. आर्थिक विकास करने के साथ–साथ जनसंख्या का नियमन करना एवं प्रवास सम्बन्धी नीतियों को निर्धारित करना।

जनसंख्या नीति के उद्देश्य

जनसंख्या नीति की आवश्यकता एवं उद्देश्य (Need & Aims) दोनों एक–दूसरे पर आधारित है। यह कहा जा सकता है कि जनसंख्या नीति के मूल आवश्यकताएं जो एक दूसरे के साथ–साथ संकलित रहती है, उनके निम्न उद्देश्य है–

1. जनसंख्या के आकार को नियमित करके, उनके तीव्र वृद्धिदर को कम करना।
2. जनसंख्या नीति के अन्तर्गत बढ़ती जनसंख्या में स्थापित लाना।
3. कुछ देशों में जनसंख्या वृद्धि को प्रोत्साहित करना और उनको वहां के आकार बढ़ाने के लिए प्रोत्साहित करना।
4. प्रवास की नीति को जनसंख्या नीति के अन्तर्गत सम्मिलित।

उपर्युक्त जनसंख्या विदों की नीतियों के आधार पर इस निष्कर्ष पर पहुंचे है कि इन्हीं मूलभूत उद्देश्यों एवं आवश्यकताओं के मध्य जनसंख्या नीतियों को निर्धारित जाता है।

14.4 नगरीकरण

नगरीयकरण एक सामाजिक–आर्थिक प्रक्रिया है। जिसमें किसी देश कृषि से औद्योगिक समाज की ओर अग्रसर होता है। जिसके द्वारा किसी क्षेत्र की जनसंख्या का बड़ा हिस्सा कस्बों एवं नगरो में संकेन्द्रित हो जाता है। भारत जैसे विकासशील देशों में नगरीकरण वर्तमान शताब्दी की सबसे महत्वपूर्ण घटनाओं में गिनी जाती है। भारत की नगरी जनसंख्याओं के माध्यम से विश्व नगरीय जनसंख्या के भाग का निर्णय किया जाता है। इस तथ्यों से अनुमान लगाया जा सकता है कि विश्व का प्रत्येक बारहवां एवं विकासशील देशों का प्रत्येक सांतवें नगरीय क्षेत्रों में रहने वाला एक व्यक्ति भारतीय है। इस प्रकार से स्पष्ट होता है कि भारत में उतने छोटे कस्बे 20,000–49.999 आबादी के हैं। जितने की संयुक्त राज्य अमेरिका में, उतने मध्यम आकार के (50000–99999) के नगरों का है, जितने पूर्व सोवियत संघ में और उतने महानगर +500,000 है, जितने कि अस्ट्रेलिया, फ्रांस एवं ब्राजील के देशों में मिलाकर कार्य किये जाते हैं। भारत में नगरीकरण का बहुत प्राचीन इतिहास रहा है। जिसके अन्तर्गत सिंधु घाटी सभ्यता से लेकर आज वर्तमान समय के नगरों के विकास की एक परम्परा विगत वर्षों से चली आ रही है। यही कारण है कि देश में अनेक ऐसे सैकड़ों नगर पुराने हैं, जो एक अनुमान के आधार पर देश की कुल जनसंख्या में नगरीय जनसंख्या का प्रतिशत मिलता है।

भारत मे ंनगरीय विकास

2011 की जनगणना के मुताबिक, कस्बों की संख्या 2001 के 5,161 से बढ़कर 2011 में 7,933 हो गई। शहरी जनसंख्या 2001 के 28.3 करोड़ की अपेक्षा 2011 में 37.7 करोड़ हो गई। शहरी जनसंख्या के प्रतिशत में भी बढ़ोतरी हुई है जो 2001 के 27.8 प्रतिशत से बढ़कर 2011 में 31.16 प्रतिशत तक पहुंच गई है। 2011 में ग्रामीण जनसंख्या 83.34 करोड़ या 68.84 प्रतिशत हो गई है। भारत के 63 शहर एक मिलियन से अधिक जनसंख्या वाले हैं जिसके परिणामस्वरूप भारतीय शहर विश्व में सर्वाधिक बड़े शहरों में से हैं।

नगरीकरण की वृद्धि

वर्ष 1901 में, कुल जनसंख्या का (2.56 करोड़) मात्र 11 प्रतिशत जनसंख्या, शहरी थी। उस समय 1834 कस्बे तथा शहर थे। शहरी–ग्रामीण अनुपात 1 : 8.1 था। 1951 तक, शहरी जनसंख्या बढ़कर 6.16 करोड़ हो चुकी थी, जोकि कुल जनसंख्या का 17.6 प्रतिशत थी। इस प्रकार 1901–1951 के बीच शहरी जनसंख्या में वृद्धि 240 प्रतिशत थी, जबकि 1951–2001 के बीच यह प्रतिशत लगभग 450 थी। 2001–11 के दशक में, स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से पहली बार, शहरी जनसंख्या में कुल वृद्धि ग्रामीण जनसंख्या में वृद्धि से अधिक थी। ग्रामीण क्षेत्र में जनसंख्या वृद्धि में 1991 से निरंतर कमी हुई है। पिछले कुछ दशकों में शहरी जनसंख्या में तीव्र वृद्धि, तेजी से औद्योगिकीकरण तथा शहरी क्षेत्र की ओर प्रवास के कारण रही है, जिसमें से 50 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्र के लोग होते हैं ।

17वीं शदी के अन्त में एवं 19वीं शदी के अन्तिम काल की उपेक्षा अधिक था। मध्य काल में वर्ष 1586 के आस–पास हस्तकारी उद्योग और तृतीयक क्रियाओं में विकसित होने के कारण 3200 कस्बें एवं 120 नगर अस्तित्व में थे। (रजा 1985, पृष्ठ–60) औपनिवेशिक समय में देश औद्योगिक ढांचे के विक्षत होने कारण नगरीकरण की इस प्रक्रिया को गम्भीर चोट पहुंच गयी। वर्तमान समय में नगरीकरण पद्धति पर कारखाने उद्योग के विकास से प्रभावित नगरीकरण है। जिसका प्रारम्भ बीसवीं शदी में माना जा सकता है। डेविस महोदय के अनुसार सामान्यता नगरीय जनसंख्या के प्रतिशत के 50 प्रतिशत से अधिक होने पर वक्र की प्रवणता घटने लगती है। 75 प्रतिशत से अधिक यह प्रवणता लगभग समाप्त हो जाती है, और वक्र पूर्वरूप से समाप्त हो जाता है। नीचे की ओर झुकने लगता है। नगरीकरण के वक्र क्षेत्र को निम्न तीन अवस्थाओं में प्रदर्शित किया जा सकता है–

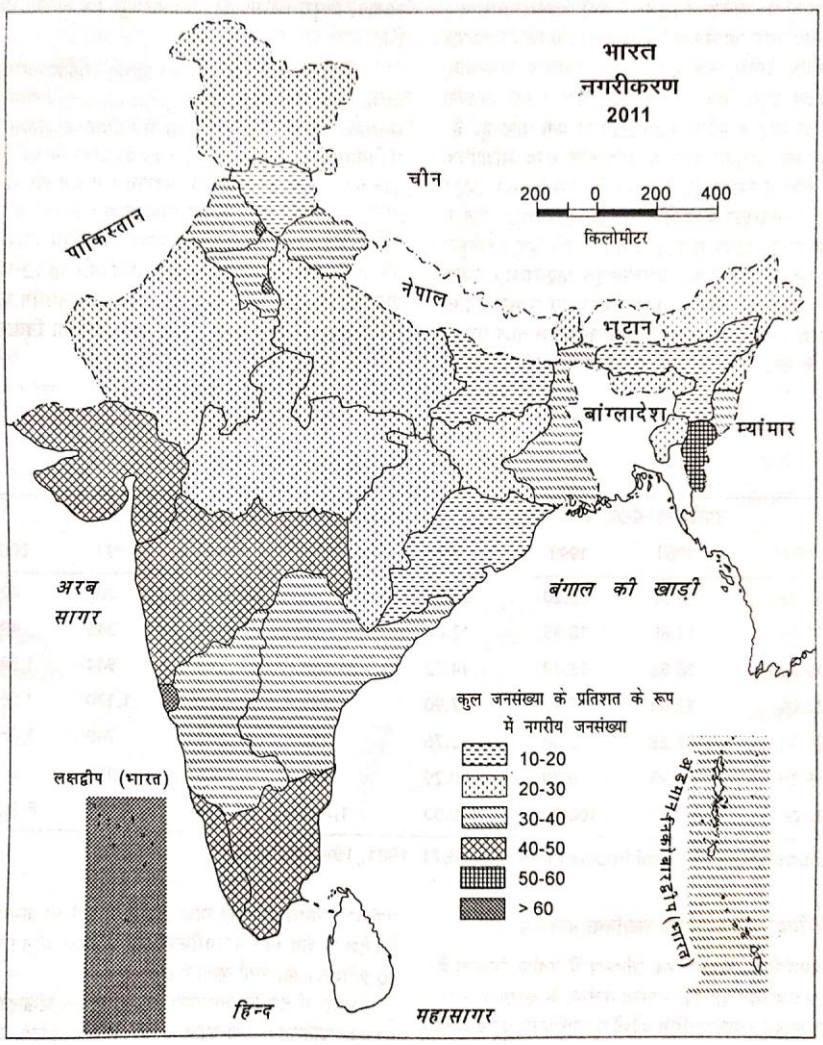

चित्र–1

1 प्रारम्भिक अवस्था

प्रारम्भिक अवस्था नगरीकरण के शुरूआत का घोतक माना जाता है। जिसके समय कुल जनसंख्या में नगरीय जनसंख्या का प्रतिशत धीरे–धीरे बढ़ता है। इस अवस्था में वक्र की प्रवणता कम होती है। नगरीकरण की यह अवस्था प्राथमिक उत्पादन पर आधारित कृषि बहुल आर्थिक समाज का घोतक होती है। प्रारम्भिक अवस्था के अन्तर्गत, यूगाण्डा, तंजानिया, सूडान, इथियोपिया, कीनियां, बंग्लादेश, नेपाल, भूटान आदि देशों को सम्मिलित किया जा सकता है।

2 त्वरण अवस्था

त्वरण की अवस्था नगरीकरण की सबसे मुख्य अवस्था है। इस अवस्था में नगरीय जनसंख्या का प्रतिशत तीव्रता से बढ़ने लगता है। इस समय नगरीकरण की वक्र की प्रवणता तीव्र हो जाती है। उद्योग, व्यापार, परिवहन, सेवा

कार्यो में लगे लोगों की भारी संख्या में रोजगार उपलब्ध होने लगता है। इसके प्राथमिक क्रिया–कलाप में रोजगार की सम्मावना कम होने लगती है। विश्व के नार्वे, रूमानिया, आस्ट्रिया पोलैण्ड, डेनमार्क, इराक, रूस, टर्की, ईरान, कोलम्बिया, पेरू, ब्राजील आदि सभी देश त्वरण अवस्था से गुजर रहे है। भारत श्रीलंका एवं पाकिस्तान इत्यादि सभी देश वर्तमान समय में इस अवस्था में प्रवेश किये हुए हैं।

3 अन्तिम अवस्था

नगरीकरण की अन्तिम अवस्था का प्रारम्भ नगरीय जनसंख्या के 70 प्रतिशत या अधिक हो जाने से होती है। नगरीय जनसंख्या में वृद्धि की गति मन्द हो जाने से नगरीकरण की वक्र की प्रवणता समाप्त हो जाती है। विश्व के अधिकांश विकसित देश–इंग्लैण्ड, फ्रांस संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, जर्मनी, जापान, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड, स्वीडेन, आदि सभी देश इसी अवस्था से गुजर रहे हैं। इसमें से कुछ देशों की संख्या में से नगरीय जनसंख्या के ह्रास की प्रवृत्ति भी प्रारम्भ हो गयी है, लोग नगरों से ग्रामीण क्षेत्रों की पलायन करते हुए दिख रहे हैं।

14.5 नगरीयकरण की समस्याएं

नगरीयकरण एवं जनसंख्या वृद्धि से समीपवर्ती पर्यावरण पर भारी दबाव पड़ता है। वर्तमान में आधुनिक नगरों का विकास वृहत पैमाने पर संसाधन का उपयोक्ता केन्द्र के रूप में रहा है। एक अनुमान के आधार पर बताया जाता है कि दस लाखी नगरों का प्रत्येक दिन 6,25000 टन जल, 2000 खाद्यान्न एवं 9500 टन ईंधन की जरूरत होती है। इस प्रकार प्रतिदिन 5,00000 टन प्रदूषित जल, 2000 टन अपशिष्ट पदार्थ, तथा 950 टन वायु प्रदूषक उत्पन्न होते है। इस प्रकार नगर का उसके प्रति नगरीय एवं समीपवर्ती क्षेत्र के पर्यावरण पर दो तरफा प्रभाव देखा जाता है। अनियोजित एवं अयनियंत्रित नगरीकरण न केवल नगरीय जीवन की गुणवता में ह्रास होता है। ब्लकि इससे निकटवर्ती क्षेत्रों में भौतिक–सामाजिक एवं आर्थिक पर्यावरण को भारी नुकसान पहुंचता है। इस प्रकार से नगरीय समस्याएं दो प्रकार की है– 1. आन्तरिक क्षेत्र जिनसे नगरीय क्षेत्र एवं वहां के निवासियों को प्रभावित करते है। 2. बाह्य क्षेत्र जिनसे उनका उपान्त और परिनगर क्षेत्र प्रभावित होता है–

1. प्लेस की समस्या

नगरों की वृद्धि के लिए अधिक से अधिक क्षेत्रों की आवश्यकता पड़ती है। इन क्षेत्रों की पूर्ति के लिए समीपवर्ती ग्रामीण एवं उपान्त क्षेत्रों के उपनिवेश द्वारा द्वारा की जाती है। कभी–कभी भौतिक बाधाओं के कारण नगर

बांधित होने लगते हैं। मुम्बई की द्वीपीय स्थिति और कोलकाता के पूरब में खारा पानी की झीलों के कारण ऐसी ही कुछ समस्याएं उत्पन्न हो रही है। नगरों के निवासियों में कारखाना एवं कार्यस्थल के समीप होने से विशेषकर वहाँ, जहाँ नगरीय यातायात सस्ता और विकसित नहीं है की प्रवृत्ति पायी जाती है। नगरीय नियोजन में औद्योगिक, आवासीय और व्यापारिक कार्यो के लिए अलग सेक्टर निर्धारित होते है। स्थानों की कमी के कारण भीड़–भाड़ में और भूमि मूल्य में वृद्धि होने लगती है। इससे कम आय वर्ग के लोगों का रहन–सहन प्रभावित होता है, मलिन बस्तियों के निर्माण को प्रोत्साहन प्राप्त होता है।

2. आवास की समस्या

नगरीय जनसंख्या में तीव्र वृद्धि के कारण इन क्षेत्रों में सदैव आवास की कमी देखी जाती है। एक अनुमान के आधार पर भारत में प्रतिवर्ष नगरों में लगभग 170000 आवास की कमी हो रही है। जिससे आवास के किराये में तेजी के साथ वृद्धि हो रही है। जिससे परिवार के मॉसिक आय 30 से 50 प्रतिशत भाग किराये पर खर्च किये जाते हैं। इस कारण कम आय वर्ग के लोग मजबूर होकर मलिन बस्तियों और सड़को की पटरियों पर रहने के लिए विवश हो रहे हैं। मुम्बई, कोलकाता, दिल्ली आदि बड़े–बड़े महानगरों में ऐसी मलिन बस्तियों में एवं फुटपाथों रहने वाले लोगों की संख्या में दिनो–दिन बढ़ोत्तरी हो रही है।

3. स्लम बस्ती –

मलिन (स्लम बस्ती) गिरावट की एक चरमावस्था है। जिसमें आवास इतने अनुपयुक्त हो जाते हैं कि वे समाज के नैतिक मूल्यों एवं स्वास्थ्य लोगों के लिए समस्या उत्पन्न करने लगते हैं। (डिकिन्सन आर0ई0) स्लम एक ऐसा आवासीय क्षेत्र है जिनके आवास त्रुटिपूर्ण डिजाइन, वायु संचार, प्रकाश, अवहास, जनातिरेकता, स्वास्थ्य सुविधाओं के अभाव के कारण असुरक्षित और नैतिकता के अभाव में हानिकर हो जाते हैं (संयुक्त राजा अमेरिका अधिनियम 1949) ये एक या दो मकान झोपड़ीनुमा बनाकर जिनकी दीवाले मिट्टी, या ईंट की और छत टिन या छप्पर बांस की चटाई, टाटपट्टी, बोरा, प्लास्टिक आदि से ढ़की होती है। इनके बस्तियों का विकास पुरानी इमारतो, सरकारी भूमि (रेलमार्गों एवं सड़कों के किनारे) निजी आहातो आदि क्षेत्रों में होता है। यह स्लम बस्तियों के लोग बहुत कम किराये पर आवासीय सुविधाएं प्रदान करती है। ये लोग गांव से रोजगार की तलाश में शहर आने वाले छोटे–छोटे अस्वास्थ्यकर आवासों में रहते हैं भारतीय जनगणना 2001 के अनुसार देश कुल 26 राज्यों। केन्द्रशासित प्रदेशों के 607 नगरों और करके में 40 मिलियन लोग स्लम बस्तियों में निवास करते है। देश में मलिनबस्ती में निवास करने वाले लोगों की सबसे

अधिक संख्या (76) पायी जाती है। इसके बाद उत्तर–प्रदेश में (65) तमिलनाडु में (63) महाराष्ट्र (62) पं बंगाल (51) मध्यप्रदेश (42) एवं कर्नाटक (35) का स्थान है। इस प्रकार मलिन बस्तियों की जनसंख्या की दृष्टि से महाराष्ट्र का प्रथम स्थान है। इसके बाद क्रमशः आन्ध्र प्रदेश (51.5 लाख), उत्तर–प्रदेश (41.6 लाख, पं बंगाल (38.2 लाख), तमिलनाडु (25.3 लाख) मध्य प्रदेश (23.9 लाख) एवं दिल्ली (20.3 लाख) आते है। कुछ बड़े–बड़े महानगरों में स्लम बस्तियाँ जैसे–मुम्बई महानगर कुल जनसंख्या का 48.88 प्रतिशत, नगर के विभिन्न भागों में निवास करती है। बुम्बई की ये स्लम बस्तियां नगरीय सभ्यता का भयावह दृश्य प्रस्तुत करती है। जिसमें रहने वाले लोग सामान्य सुविधाओं के अभाव में पशुवत जीवन व्यतीत करते है। दिल्ली कोलकाता, चेन्नई, हैदराबाद एवं नागपुर में भारी संख्या में स्लम बस्तियां निवास करती है।

सारणी संख्या–1

भारत के प्रमुख नगरों में स्लम बस्तियां, वर्ष 2001

क्र०सं०	नगरों के नाम	स्लम बस्ती जनसंख्या लाख में	प्रतिशत
1.	मुम्बई	58.24	48.9
2.	कोलकाता	14.91	32.6
3.	दिल्ली	18.55	18.9
4.	चेन्नई	7.48	17.7
5.	बंगलौर	3.45	8.0
6.	हैदराबाद	6.01	17.4
7.	अहमदाबाद	4.40	12.5
8.	पुणे	5.31	20.9
9.	सूरत	4.06	16.7
10.	कानपुर	3.69	14.6
11.	जयपुर	3.50	15.1
12.	नगपुर	7.27	35.4
13.	पटना	0.04	0.25
14.	इन्दौर	2.60	16.3
15.	बड़ोदरा	1.07	8.2
16.	भोपाल	1.26	8.8
17.	लुधियाना	3.15	22.6
18.	आगरा	1.22	9.7
19.	वाराणसी	1.38	12.6
20.	मेरठ	4.71	43.9

21.	नसिक	1.42	13.2
22.	फरीदाबाद	4.91	46.6
योग	भारत	403.01	22.6

Source- Provisinal Population totals census of India, 2001

4. यातयात के साधनों की समस्या

देश के नगरों में मार्ग अवरोधक एवं भीड़–भाड़ की भारतीय नगरों की प्रमुख समस्या है। सड़क परिवहन की दृष्टि से दिल्ली महानगर में सबसे अच्छी स्थिति है। यहां पर प्रति 100 वर्ग किलोमीटर सड़कों की लम्बाई औसत 1284 किमी है। (मुम्बई 380 किमी), (अहमदाबाद 680 किमी), (चण्डीगढ़ 1280 किमी) 6000 PCU (Passenger corcnits) यातायात प्रवाहित होते हैं। वर्ष 1964–65 में निर्मित ITO की क्षमता 40000–50000 PCU निर्धारित थी। वर्तमान में आज 100,000 पी0सी0ओ0 यातायात दिखाई पड़ते है। कोलकाता में मेट्रो रेल विवेकानन्द पुल निर्माण के बाद कई पुराने मुहल्ले और हाबड़ा पुल के पास जाम होने की प्रतिदिन की समस्या है। इलाहाबाद (प्रयागराज) नगरों में सड़को के अतिक्रमण मन्द और तीव्र गति से वाहनों मिले–जुले प्रवाह, पशुओं के विचरण, यातायात के नियमों के उल्लंघन आदि के कारण सड़को पर जाम एवं दुर्घटना होती है।

5. जल के पूर्ति की समस्या –

मानव जीवन में जल का विशेष महत्व है। जल के बिना मानव को क्रियाए संचालित नहीं हो सकती है। आधुनिक नगरों में घरेलू और औद्योगिक आवश्यकताओं के लिए बड़ी मात्रा में जल की आवश्यकता होती है। औसत प्रतिदिन कोलकाता में 272 लीटर, मुम्बई में 190 लीटर, दिल्ली में 90 लीटर जल की खपत होती है। इस प्रकार प्रति टन एल्यूमिनियम, रेयान, सूतीवस्त्र, ऊनीवस्त्र, और इस्पात के उत्पादन में क्रमशः 1280,780,560,218 एवं 170 धन मीटर की आवश्यकता होती है। भारत के केन्द्रीय सार्वजनिक स्वास्थ्य एवं पर्यावरण इंजीनियरिंग संगठन (CPHEEO) ने 50,000 से अधिक जनसंख्या वाले नगरों के लिए 125–200 लीटर/व्यक्ति/दिन, 10,000 से 50,000 के बीच जनसंख्या वाले नगरों के लिए 100–125 लीटर तथा 10,000 से कम जनसंख्या वाले नगरों के लिए 70–100 लीटर जल का मानक निर्धारित दिया गया है। जल का उपयोग पीने, रसोईघर, स्नान कपड़ा, धोने, फर्श, सफाई एवं बागवानी में होता है। केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रय बोर्ड दिल्ली के अनुसार चार बड़े महानगरों (दिल्ली,

मुम्बई कोलकाता एवं चेन्नई) में जल के मांग एवं आपूर्ति के बीच निम्न सारिणी के माध्यम से जल संकट का आभास देखने को मिलता है।

सारणी संख्या–2

भारत के प्रमुख महानगरों में जल की मांग एवं आपूर्ति वर्ष–1993

क्र०सं०	महानगर	मांग	आपूर्ति	अन्तराल
1.	मुम्बई	3,360	2,448	912
2.	दिल्ली	2,840	2,145	695
3.	टहमदाबाद	653	432	221
4.	बड़ोदरा	234	177	56

Source- Niva urban environmental Map-1994.

उपर्युक्त आंकड़े से स्पष्ट होता है कि दिल्ली, मुम्बई, अहमदाबाद, बड़ोदरा महानगरों में लगभग 10 प्रतिशत जल की कमी है। चेन्नई में जल संकट के समाधान के लिए Water express नामक विशेष रेलगाड़ी चलायी जाती है। दिल्ली जल संकट समाधन के लिए हरियाणा, टेहरी, रेगुला और किशाऊ बांधों से जल ग्रहण की योजना है।

6. नगरों के प्रदूषण की समस्या –

भारत में तेजी से बढ़ते नगरीकरण के साथ–साथ नगरों में उद्योग एवं वाहनों की संख्या में तेजी से वृद्धि हुई है। जिसके कारण नगरीय पर्यावरण की गुणवत्ता में कमी आयी है। उपभोक्तावाद, विलासितापूर्ण जीवन और पर्यावरण बोध के अभाव के कारण समस्या की गम्भीरता बढ़ गयी है। नगरों के पर्यावरण ह्रास में वायु प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, जल प्रदूषण, ठोस अपशिष्ट प्रदूषण का प्रमुख योगदान है। भारत के कई महानगरों में वायु प्रदूषण स्थिति चिन्ताजनक है। विलम्बित कणकीय पदार्थो (SPM) की दृष्टि से दिल्ली, कोलकाता और चेन्नई का विश्व 41 सर्वाधिक प्रदूषित नगरों में क्रमशः चौथा तेरहवां एवं इकतालिसवाँ स्थान है। इस प्रकार कार्बन डाई आक्साइड (SO_2) के स्तर में मुम्बई, दिल्ली, कोलकाता क्रमशः 18,27 एवं 37 स्थान पर है। मुम्बई के कुल प्रदूषण भार में 52 प्रतिशत योगदान वाहनों के द्वारा, 48 प्रतिशत उद्योग एवं 33 प्रतिशत ताप सयंत्रों के द्वारा प्रदान की जाती है। दिल्ली में वायु प्रदूषण में

परिवहन सेक्टर की भूमिका 60 प्रतिशत है। यहां पर 11 लाख से अधिक पंजीकृत वाहन प्रतिदिन 250 टन कार्बन मोनोआक्साइड, 400 टन हाइट्रोकार्बन, 6 टन सल्फर डाई आक्साइड और पर्याप्त मात्रा में निलम्बित कणकीय पदार्थ का उत्सर्जन होता है। NEERI की 1981 की एक रिपोर्ट के अनुसार कोलकाता महानगर में 1305 टन प्रदूषकों का उत्सर्जन वायुमण्डल में होता है। औद्योगिक प्रतिष्ठानों से 600 टन परिवहन क्षेत्रों से 360 टन, लाप गृहों से 195 टन रसोई घरो से 150 टन प्रदूषक सम्मिलित है।

महानगरों में जल प्रदूषण मल–जल के स्रोतों एवं पाइपलाइनों में प्रवेश के कारण होता है। भारत के नगरों में परिशोधन मल जल का पर्याप्त व्यवस्था नहीं है, जिसके कारण प्रदूषित जल–नदियों में मिलता रहता है। दिल्ली महानगर में मलजल शोधन हेतु सात संयंत्र कार्यरत है जिनकी कुल क्षमता 1272 mld है, जबकि नगर में 1716 mld मल जलों का निर्माण होता है। शेष 444 mld जल अशोधित रूप से यमुना नदी में पहुँचता रहता है। अवांक्षित रूप से तेज आवाज, जो मनुष्य के श्रवण शक्ति, स्वास्थ्य एवं शान्ति को कष्ट पहुंचाती है, जिसे ध्वनि प्रदूषण कहा जाता है। भारत में विकासशील देशों में बढ़ते नगरीकरण और औद्योगीकरण के कारण ध्वनि प्रदूषण की समस्या बढ़ रही है। देश के अधिकांश नगरों में ध्वनि प्रदूषण की समस्या बढ़ रही है। देश के अधिकांश नगरों में ध्वनि प्रदूषण का स्तर 70db से अधिक है– चेन्नई–89db मुम्बई–85db कोलकाता 87db, कोच्चि 80db, मदुरै एवं कानपुर 75db, इसके अलावा पूजा स्थलो, त्यौहारों, सामाजिक आयोजन एवं चुनाव–प्रचार लाउडस्पीकरों की आवाज से ध्वनि प्रदूषण का स्तर 110db तक पाया गया है। ध्वनि प्रदूषण नियंत्रण के लिए कानून नहीं, जो कठिनाई से पालन नहीं कराया जाता है। ठोस अपशिष्ट उसे कहा जाता है, जिन्हें उपयोग के बाद बेकार मानकर फेक दिया जाता है। जैसे–घरेलू कूड़ा–करकट, प्लास्टिक और टिन के डिब्बे, पुराना कागज, टूटे कांच के सामान, जंग लगी टिन, आदि पदार्थो से नगरों में ठोस अपशिष्ट उत्तरोतर बढ़ रहे हैं।

7. नगरों में अपराध की समस्या

बढ़ते हुए अपराध अच्छे नगरीय जीवन एवं शान्ति के लिए गम्भीर समस्या उत्पन्न कर रहे है। नगरों में अपराधिक प्रवृत्ति के अनेक कारण जैसे–भौतिक वादी संस्कृति, आर्थिक असमानता, बेरोजगारी, सामुदायिक जीवन का अभाव, स्वार्थपरता, बढ़ता उपभोक्तावाद, तेजी से धन कमाने की प्रवृत्ति आदि प्रमुख है। दत एवं वेगुगोपाल (1983), हिंसात्मक अपराधों में बालात्कार, कत्ल, अपहरण, डकैती लूट अपराधों की प्रधानता पायी जाती है। एक सर्वेक्षण के

अनुसार दिल्ली की 30.5 प्रतिशत जनसंख्या, मुम्बई की 31.8 प्रतिशत जनसंख्या अपराध का शिकार रही है। जिसमें महिलाओं और वरिष्ट नागरिकों की संख्या अधिक है।

14.6 नगरीकरण से उत्पन्न समस्याओं का समाधान

नगरीकरण के उत्पन्न समस्याओं को दूर करने के लिए निम्न समाधान एवं उपाय है–

1. आवास की भूमियों का विकास

नगरीकरण से जनसंख्या की वृद्धि होने से आवासीय भवनों की कमी देखने को मिलती है। इसलिए नये आवासीय क्षेत्रों को विकसित करना चाहिए, जिससे नगर के केन्द्रीय भाग में आवासों का जमघट न बढ़े। नये आवास की बस्तियों के विकास से नगर के केन्द्रों पर जनसंख्या का भार घटता है। जिससे निवासियों को नियमित आवास भी प्राप्त होते हैं।

2. यातायात व्यवस्था में सुधार

नगरों की सबसे बड़ी समस्या सड़को पर अतिक्रमण है। जिसके कारण गैर आवासीय या बाजार क्षेत्रों में यह समस्या विकट परिस्थितियाँ उत्पन्न करती है। सड़को पर चलती–फिरती दुकाने, वाहन, ठेला, आदि जमघट सड़कों को तंग बना देते है। इसके लिए उपर्युक्त पार्किंग की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए।

3. स्वच्छ पेयजल के साथ मल–जल निकास एवं सफाई की व्यवस्था

नगरों में स्वच्छ पेयजल, बिजली एवं मल–जल निकास आदि की भारी समस्याओं का सामाना करना पड़ता है। इसके लिए उपयुक्त कदम उठाये जाने चाहिए। नाली–नालो की सफाई, कूड़ा–करकट तथा मल निकास की उपयुक्त व्यवस्था आवश्यक है।

4. स्लम बस्तियों की उचित व्यवस्था

निर्धन, बेरोजगार एवं मजदूर और गांवों से पलायन करने वाले लोग मकान खरीदने या किराये पर लेने के लिए असमर्थ होते हैं। अतः वे नगरों के बाहर और सड़कों के किनारे झुग्गी–झोपड़ी डालकर जीवन–यापन करते है। ऐसी स्लम बस्तियों में बिजली, पानी, सड़कों एवं नालियों की कोई व्यवस्था

नहीं होती है। जिसके कारण इन क्षेत्रों में सामाजिक अपराध पनपते है। इन क्षेत्रों में सुधार के लिए उपयुक्त एवं समुचित व्यवस्था करनी चाहिए।

5. आवश्यक वस्तु की उपलब्धता

नगरीय क्षेत्र में जनसंख्या बढ़ रही है के लिए दैनिक उद्योगों को वस्तुओं जैसे–फल, सब्जी, अण्डे, दूध आदि की कमी हो जाती है, इन वस्तुओं की पर्याप्त उपलब्धता की समुचित व्यवस्था करनी चाहिए।

6. प्रदूषण पर नियंत्रण

प्रदूषण पर नियंत्रण के लिए उद्योगों की नगर के क्षेत्रों से बाहर विशिष्ट क्षेत्रों में स्थानान्तरित करना चाहिए। जिससे नगरों के छोटे–बड़े अनेक कारखाने प्रदूषण पर नियत्रित निगरानी में रहने की व्यवस्था करनी चाहिए।

14.7 सारांश

उपर्युक्त तथ्यों से स्पष्ट होता है कि जनसंख्या नीति एवं नगरीकरण की समस्याएं, जिसमें आवास की समस्या, यातायात के साधनों की समस्या, जलपूर्ति की समस्या, प्रदूषण की समस्या, अपराधों की समस्या एवं हिस्सात्मक अपराध अपहरण, डकैती, लूट एवं अपराध की समस्याएं आदि। मानवीय विवेक के माध्यम से नगरीय क्षेत्रों में समुचित व्यवस्था करने से नगरों से सम्बन्धित समस्याओं को सुलझाया जा सकता है। इन समस्याओं नगरीकरण के द्वारा समाधान के लिए आवासीय भूमियों के विकास, स्वच्छ पेयजल की व्यवस्थ के साथ–साथ सफाई की व्यवस्था एवं यातायात सुधार में पार्किंग की व्यवस्था, आवश्यक वस्तुएं की उपलब्धता एवं दैनिक उपभोग की वस्तु की व्यवस्था करने एवं नियंत्रित रूप से निगरानी करने से इन समस्याओं का समाधान किया जा सकता है।

14.8 शब्द सूची

Population Policy	जनसंख्या नीति
Poverty	गरीबी
Urbanization	नगरीयकरण
Initail Stag	प्राम्भिक अवस्था
Acceloration Stag	त्वरण अवस्था
Terminal Stag	अन्तिम अवस्था
Slam	मलिन

Envirmental पर्यावरण

Demographic Divide जनांकिकीय विभाजक

14.9 स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. विश्व में भारत जनसंख्या में कौन–सा स्थान है।
   (अ) प्रथम (ब) द्वितीय (स) तृतीय (द) चतुर्थ
2. राष्ट्रीय जनसंख्या नीति की घोषणा कब की गयी।
   (अ) 16 अप्रैल 1976 (ब) 16 अप्रैल 1978 (स) 16 अप्रैल 1962
   (द) 16 अप्रैल 1971
3. नगरीकरण की कितनी अवस्थाये हैं।
   (अ) एक (ब) दो (स) तीन (द) चार
4. भारत के किस नगरों में स्लम बस्तियां सर्वाधिक है।
   (अ) मुम्बई (ब) दिल्ली (स) कोलकाता (द) चेन्नई
5. भारत के किस नगर में सबसे कम स्लम बस्तियां पायी जाती है।
   (अ) पटना (ब) नागपुर (स) जयपुर (द) सूरत

आदर्श उत्तर

1. (अ) द्वितीय **2.** (अ) 16 अप्रैल 1976 **3.** (स) तीन
4. (अ) मुम्बई **5.** (अ) पटना

14.10 सन्दर्भ उपयोगी पुस्तके –

1. भारत में उद्योगों के विकास की एक रूप रेखा प्रस्तुत कीजिए।
2. पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान भारत में किस प्रकार उद्योगों का विकास हुआ?
3. लौह–इस्पात उद्योग क्या है तथा भारत में इसकी अवस्थति की चर्चा कीजिए?
4. भारत में वस्त्र उद्योग की विस्तृत चर्चा कीजिए।
5. भारत में चीनी उद्योग के विकास से सम्बन्धित प्रमुख समस्याओं का वर्णन कीजिए।
6. भारत के विभिन्न औद्योगिक प्रदेशों की वर्णन कीजिए।

14.11 अभ्यास प्रश्न

1. जनसंख्या नीति से क्या तात्पर्य है?
2. नेशनल पापुलेशन पॉलिसी वर्ष 2000 के लक्ष्यों का उल्लेख कीजिए?
3. नगरीकरण से क्या आशय है?
4. नगरीकरण अवस्थाओं का उल्लेख कीजिए?
5. नगरीकरण की समस्याओं का उल्लेख कीजिए?
6. नगरीकरण की समस्या एवं समाधान के उपायों के बारे में लिखो?

MAGO- 102 भारत का भूगोल

इकाई 15– जनसंख्या एवं पर्यावरण, भारत में संविकास का प्रयास

इकाई की रूपरेखा–

15.1 प्रस्तावना
15.2 उद्देश्य
15.3 मानव तथा पर्यावरण का सम्बन्ध
15.4 जनसंख्या वृद्धि का पर्यावरण पर दुष्प्रभाव
15.5 संविकास की संकल्पना
15.6 भारत में संविकास का प्रयास
15.7 सारांश
15.8 शब्द सूची
15.9 परीक्षोपयोगी प्रश्न
15.10 महत्वपूर्ण पुस्तकें/संदर्भ
15.11 अभ्यास प्रश्न

15.1 प्रस्तावना–

भारत भूगोल के इस इकाई के अन्तर्गत आप पर्यावरण एवं जनसंख्या तथा भारत में संविकास के प्रयास का अध्ययन करेंगे। जनसंख्या वृद्धि का परिणाम, जनसंख्या बढ़ोत्तरी के कारण उत्पन्न विभिन्न दुष्प्रभावों का अध्ययन, पर्यावरण के दुष्प्रभाव में जलमण्डल पर दुष्प्रभाव, वायुमण्डल पर दुष्प्रभाव, स्थल मण्डल पर दुष्प्रभाव तथा अन्य तत्वों पर दुष्प्रभावों का अध्ययन करेंगे। जल मण्डल के दुष्प्रभावों में भूमिगत जल तथा वाहित जल में मानव की विविध क्रिया–कलाप से उत्पन्न प्रदूषणों के दुष्प्रभावों, वायुमण्डल के दुष्प्रभावों में जनसंख्या विकास के कारण उत्पन्न तरह–तरह के प्रदूषणों एवं उनसे उत्पन्न बीमारियों तथा स्थलमण्डल पर बढ़ती जनंसख्या का भरण–पोषण के मांग के कारण अनुर्वरक मृदा, प्रदुषण तथा बीमारियों का अध्ययन करेंगे। संविकास की संकल्पना में अनुकूल विकास, संधृत विकास एवं समन्वित विकास तथा भारत में संविकास के विभिन्न प्रयासों का अध्ययन करेंगे।

15.2 उद्देश्य–

भारत भूगोल के इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप–

- मानव एवं पर्यावरण सम्बन्ध को समझ सकेंगे,

- जनसंख्या वृद्धि का पर्यावरण पर दुष्प्रभावों को समझ सकेंगे,
- संविकास की संकल्पना को समझ सकेंगे,
- भारत में संविकास के प्रयास को समझ सकंगे,
- बढ़ती जनसंख्या का विभिन्न पक्षों पर दुष्प्रभावों को समझ सकेंगे,
- बढ़ती जनसंख्या विकास को किस स्तर तक प्रभावित कर रहा है यह समझ सकेंगे,
- बढ़ती जनसंख्या से उत्पन्न तरह–तरह की बीमारियों तथा अन्य समस्याओं को समझ सकेंगे।

15.3 मानव तथा पर्यावरण सम्बन्ध–

मानव पर्यावरण का एक प्रमुख सक्रिय घटक है। मानव तथा पर्यावरण का सम्बन्ध निरन्तर बदलता रहता है। आदिम मानव पूर्णरूप से प्रकृति पर आश्रित रहता था। विकास के साथ–साथ जनसंख्या का स्वरूप भी बदलता गया है। मानव अपनी क्षमता के अनुसार प्रकृति में लगातार बदलाव करता रहा है। मानव प्राकृतिक संसाधनों का अविवेक तथा अवैज्ञानिक तकनीक से किये गये दोहन के परिणाम स्वरूप आधुनिक मानव के सामने अनेक पर्यावरणीय समस्याएं विकराल रूप धारण कर सामने खड़ी हैं। बढ़ती जनसंख्या का पर्यावरण पर व्यापक प्रभाव पड़ा है।

15.4 जनसंख्या वृद्धि का पर्यावरण पर दुष्प्रभाव–

आदिम मानव सर्वप्रथम शिकार तथा संग्रहण का कार्य प्रारम्भ किया था। मानव 30 लाख वर्ष पहले जंगलों में निवास करता था। उस समय इनकी जनसंख्या एक करोड़ से कम थी लेकिन धीरे–धीरे कृषि के विकास से लोगों को आहार की सुविधा होती गई जिसके परिणामस्वरूप जनसंख्या का विकास होता गया है और लोगों का भोजन की आपूर्ति भी होती गई। पाषाण युग में जनंसख्या लगभग स्थायी हो गयी थी, पर्यावरण अनुकूल था तथा मानव द्वारा बना संसाधनों का उपयोग न के बराबर था। चिकित्सा व्यवस्था के अभाव के कारण मृत्यु दर अधिक थी। लोगों की मृत्यु सामान्य बीमारियों से भी हो जाती थी जिसका कारण बीमारियों के ज्ञान का अभाव था। 14वीं सदी में प्लेग नाम बीमारी का प्रकोप छा गया था जिससे यूरोप तथा एशिया 50 प्रतिशत लोगों की मृत्यु हो गई थी।

पशुपालन काल तथा कृषि के प्रारम्भिक काल में यह संख्या लगभग 20 से 200 लाख के मध्य रही होगी। लगभग 2 हजार वर्ष पूर्व यह लगभग 25–30

करोड़ पर पहुंच गयी होगी। 1650 में 55 करोड़, 1800 में 93 करोड़, 1900 में 166 करोड़, 2000 में 614 करोड़ तथा 2011 में 702 करोड़ तक पहुंच गयी है।

विश्व की जनसंख्या

समय	जनसंख्या
2000 वर्ष पूर्व	2500–3000 लाख
1600 ईस्वी	5500 लाख
1750 ईस्वी	7200 लाख
1800 ईस्वी	9300 लाख
1850 ईस्वी	13300 लाख
1900 ईस्वी	16600 लाख
1950 ईस्वी	25100 लाख
2000 ईस्वी	61400 लाख
2011 ईस्वी	70200 लाख

संसार में जनसंख्या वृद्धि को आंकड़ों के मदद से स्पष्ट किया गया है– वर्ष 1750 तक जनसंख्या वृद्धि का प्रतिशत अत्यन्त कम रहा है, इसे मन्द वृद्धि वाला काल कहा जाता है। 1750 से 1900 तक जनसंख्या वृद्धि सामान्य रही है। 1900 से 1950 तक जनसंख्या वृद्धि सामान से अधिक रही है। 1950 से 1980 तक जनसंख्या वृद्धि तीव्र गति से हुई है तथा 1980 के बाद से वृद्धि की दर में कुछ कमी आई है।

विश्व मं तीव्र गति से बढ़ रही जनसंख्या तथा जनंसख्या के लिए बढ़ती विभिन्न प्रकार की गतिविधियां पर्यावरण को प्रदूषित तो कर ही रही है साथ ही प्रदूषित करने की गति इतनी बढ़ गयी है कि पर्यावरण के सम्भरण करने की क्षमता से अधिक है। अब ऐसा महसूस होने लगा है कि वह समय आ गया है जब हमें खाद्यान्न की कमी से अधिक पर्यावरण निम्नीकरण की चिन्ता करनी होगी और भविष्य में खाद्यान्न की कमी से कहीं ज्यादा पर्यावरण अवनयन पर ध्यान देना होगा। बढ़ती जनसंख्या का पर्यावरण पर दुष्प्रभावों को तीन वर्गों में बांटकर अध्ययन किया जा सकता है–

(क) वायुमण्डल पर दुष्प्रभाव–

विश्व की बढ़ती जनसंख्या तथा मानव के बढ़ते क्रिया–कलाप वायुमण्डल में अनेक प्रदूषक समाहित कर रहे हैं। मानव की अनेक औद्योगिक क्रिया–कलाप ऐसे हैं जिनसे वायुमण्डल में कई प्रदूषक फैलते हैं तथा वायुमण्डल प्रदूषित होता है। औद्योगिक गतिविधियों से जिन प्रदूषकों का समायोजन हो रहा है उसमें

नाइट्रोजन आक्साइड, हाइड्रो–कार्बन, सल्फर डाई आक्साइड, कार्बन मोनो आक्साइड तथा प्रदूषक कण आदि प्रमुख हैं इन प्रदूषकों का प्रमुख स्रो खनिज, खनिज तेल शोधन, पत्तों का जलाना तथा रासायनिक उद्योग आदि हैं। औद्योगिक देश जहां पर खनिज तेल आधारित दहन का प्रचलन है वहां पर सर्वाधिक मात्रा में सल्फर डाईआक्साइड को वायुमण्डल में भेजा जाता है। इन प्रदूषकों का वायुमण्डल में जलवाष्प के मिलन होने पर वह अम्ल वर्षा के रूप में धरातल पर प्रकट होती है जिससे जन–जीवन को काफी नुकसान होता है।

पृथ्वी पर जीवन वायुमण्डल के क्षोभमण्डल तक ही सीमित है। इस क्षोभमण्डल को ओजोन परत जीवन जीने हेतु अनुकूल वातावरण प्रदान करनी है। यह परत (ओजोन परत) सूर्य से आने वाली पराबैगनी किरणों को अवशोषित करके लोगों की रक्षा करती है। मानवीय क्रिया–कलाप से कार्बन डाईआक्साइड, ओजोन, नाईट्रेट आक्साइड, CFCs आदि गैसों की मात्रा में वृद्धि होने से ओजोन परत पतली होती जा रही है जिससे होकर सूर्य की पराबैगनी किरणे धरातल तक पहुंच रही है जिसके कारण विभिन्न प्रकार की समस्याएं जन्म ले रही है। इस समस्या से पृथ्वी का सारा जीवन अस्त–व्यस्त हो रहा है।

वायुमण्डल को दुष्प्रभावित करने में ऊर्जा उत्पादन व उपयोग प्रक्रिया की भूमिका सर्वाधिक है। ऊर्जा उत्पादन के लिए बड़ी मात्रा में प्राकृतिक साधनों का विदोहन किया जाता है जिससे वायुमण्डल में विभिन्न प्रकार के प्रदूषण जन्म तथा विकास करते हैं लगातार बढ़ रही जनसंख्या के लिए ऊर्जा की मांग भी बढ़ रही है जिसके कारण पर्यावरण का दोहन की सीमा भी बढ़ रही है जिसके कारण अनेक वायुमण्डलीय समस्या जन्म ले रही है। संयुक्त राज्य अमेरिका सबसे उन्नतशील देश है जहां औद्योगिक क्रिया–कलाप के कारण से यह सबसे अधिक मात्रा में वायुमण्डल में कार्बन डाई आक्साइड भेज रहा है। चीन जो जनसंख्या की दृष्टि से विश्व में प्रथम स्थान पर यह भी वायुमण्डल में कार्बन डाईआक्साइड बड़ी मात्रा में भेज रहा है। इसके अलावा विश्व के सभी देश कुछ न कुछ मात्रा में कार्बन डाई आक्साइड का उत्सर्जन कर रहे हैं विश्व के सभी उन्नत देश ग्लोबल वार्मिंग के लिए अधिक उत्तरदायी है।

(ख) स्थलमण्डल पर दुष्प्रभाव–

स्थलमण्डल पर भूमि व भूमिगत संसाधन अल्प मात्रा में पाये जाते हैं। यह अल्प या सीमित मात्रा प्रत्येक क्षेत्र में समान मात्रा या भरपूर मात्रा में भी नहीं है। संसार में बहुत से ऐसे स्थान भी हैं जहां संसाधनों का एकदम अभाव पाया जाता हैं अतः इस अल्प मात्रा में उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों का क्षतिग्रस्त होने से पृथ्वी के जीवमण्डल की क्षमता की हानि होती है। भूमि पृथ्वी का एक बड़ा ही

अनमोल तत्व है जो मानव का लालन–पालन करता है। 20वीं शताब्दी में संसार में जनसंख्या की तीव्र वृद्धि हुई जिसके परिणामस्वरूप कई समस्याएं जन्म लिये हैं जिसका दुष्प्रभाव कृषि, आर्थिक व पर्यावरण के क्षेत्रों पर स्पष्ट परिलक्षित होता है। भूमि से अधिक उत्पादन के लिए मानव अधिक मात्रा में भूमि को दुष्प्रभावित किया है साथ ही साथ भूमि उपयोग में महत्वपूर्ण बदलाव भी किया है। बड़े–बड़े बांध नदियों में बनाया जा रहा है, खनिजों का मनमानी ढंग से दोहन किया जा रहा है, नई–नई बस्तियों का निर्माण किया जा रहा है तथा अकृषीय उपयोग हेतु मांग बढ़ रहा है जिसका प्रभाव पर्यावरण पर पड़ेगा।

स्थलमण्डल पर बढ़ती हुई जनसंख्या का दुष्प्रभावों का उल्लेख इस प्रकार है। मृदा प्रदूषण, मृदा अपरदन, मरुस्थलीकरण, वन विनाश, ऊर्जा संसाधन का ह्रास, खतरनाक अवशिष्टों का नष्टीकरण तथा जैवीय विविधता निम्नीकरण। ऐसा माना जाता है कि मानव धरातल से कृषि का अधिक उत्पादन के लिए जो भी कुछ करता है चाहे वह उर्वरक का प्रयोग हो, कीटनाशक का उपयोग हो, सिचांई का प्रयोग हो, ऊर्जा का प्रयोग हो या फिर नये–नये मशीन के उपकरण का प्रयोग हो वह कहीं न कहीं पर्यावरण पर दुष्प्रभाव अवश्य डालता हैं। कुछ वैज्ञानिकों का मानना है कि पर्यावरण पर कृषि तथा पशुपालन का सबसे अधिक दुष्प्रभाव पड़ता है।

कृषि भूमि की मृदा की ऊपरी सतह का अपरदन होने से जब उर्वरा शक्ति समाप्त हो जाती है तो इसकी भरपाई किसी भी उर्वरक से नहीं किया जा सका। हालांकि भूमि के उपजाऊपन में गिरावट को फसल चक्र तथा जैविक खाद का प्रयोग करके कम किया जा सकता है लेकिन मृदा को सतत उपजाऊ बनाये रखने के लिए मृदा की रासायनिक संरचना तथा पोषण चक्र को भली भांति समझना होगा। मानवीय गतिविधियों का धरातल पर सर्वाधिक दुष्प्रभाव मृदा अपरदन के रूप में होता है। मृदा के सभी कारक में से जल प्रवाह व वायु प्रभाव ही गम्भीर दुष्प्रभाव डालते हैं। जल जनित मृदा अपरदन की प्रचंडता निम्न कारक पर निर्भर करता है ढलान, वर्षा की मात्रा एवं तीव्रा, भूमि उपयोग का प्रकार, मृदा का स्वरूप आदि है। इन दोनों का कार्य एक ही क्षेत्र में साथ ही साथ हो सकता है तथा इन दोनों का कार्य एक ही क्षेत्र में एक साथ नहीं भी हो सकता है। मृदा का अपरदन वायु द्वारा उड़ाकर तथा जल द्वारा बहाकर किया जाता है।

अधिक उत्पादन के लिए भूमि को उर्वरक की आवश्यकता होती है जो प्रत्येक फसल के लिए बड़ी मात्रा में प्रयोग किया जाता है। अधिकांश लोगों को यह पता भी नहीं होगा कि उर्वरक की मृदा प्रदूषण का प्रमुख कारक है। जब कभी भी मृदा में रासायनिक पदार्थों का प्रयोग किया जाता है तो इससे मृदा के

साथ विभिन्न प्रकार के रासायनिक अभिक्रिया शुरू हो जाती है। इन्हें के कारण मृदा के भौतिक लक्षणों में भी परिवर्तन आता है। मृदा में रासायनिक उर्वरक का प्रयोग कितनी मात्रा में किया जाना चाहिए, इसकी जानकारी होनी चाहिए। उर्वरक तथा सिंचाई दोनों का अधिक प्रयोग मृदा को प्रदूषित करता है। इन दोनों का गलत उपयोग से भी मृदा की उर्वरता हनन होती है। उर्वरक के अतिरिक्त मृदा प्रदूषण के अन्य कारक मृदा की लवणीयता तथा जलाक्रान्ति हैं

विश्व में बढ़ती जनसंख्या के कारण पशुचारण, बागवानी तथा कृषि क्षेत्र आदि में विस्तार हो रहा है जिससे वन विनाश लगातार हो रहा है।

जल के समुद्र से वाष्पीकरण से लेकर वर्षा व नदियों के माध्यम से जल का समुद्र में पुनः वापस आने की सम्पूर्ण प्रक्रिया को जलचक्र कहते हैं। इस प्रक्रिया के दौरान जल का रूपान्तरण भी होता रहता है। इस प्रकार के जलचक्र में वनों की महत्वपूर्ण भूमिका मानी गयी है। वनों के माध्यम से वायु को 50 प्रतिशत जलवाष्प प्रदान होता है। जब वन का विनाश हो जाता है तो उस क्षेत्र की जलवायु शुष्क हो जाती है और वह क्षेत्र धीरे–धीरे मरुभूमि में बदल जाता है। ऐसा माना जाता है कि 2600 वर्ष पूर्व राजस्थान का थार मरुस्थल घना वन से ढका था। इसी कारण से वन को पृथ्वी का फेफड़ा कहा जाता है। वन के ह्रास के कारण लगातार तापमान में वृद्धि होती है जिसको ग्लोबल वार्मिंग कहा जाता है जिसके कारण कई समस्याएं जन्म लेती है।

विश्व की तीव्र बढ़ती जनसंख्या व मानव समाज की बढ़ती विविध प्रक्रियाओं से विश्व में ठोस कचरे की कुल मात्रा, प्रति व्यक्ति मात्रा में वृद्धि के साथ–साथ इनके संगठन में भी परिवर्तन आया है। जैसे–जैसे लोगों की जीवन शैली में बदलाव आयेगा उसी भांति कचरे के पदर्थों में वृद्धि होगी। ठोस कचरे का एकत्र, परिवहन व निपटारन सबसे बड़ी समस्या है। ठोस कचरे का उपचार हमें इस प्रकार करना होगा जिससे वह पर्यावरण अनुकूल हो, ऊर्जा तथा खाद की प्राप्त भी किया जा सके।

(ग) जलमण्डल पर दुष्प्रभाव–

जल जीवन जगत का एक अनमोल तोहफा है। पृथ्वी पर यह जल एक निश्चित जल चक्र के माध्यम से निरन्तर प्राप्त होता रहता है। वाष्पीकरण, द्रवण तथा वर्षण आदि जल–चक्र की मुख्य प्रक्रिया है। जल मण्डल के तीन मुख्य विषय का उल्लेख इस भांति है– जल वितरण, जल शुद्धता तथा जल सन्दुषण। बढ़ती जनसंख्या के कारण प्रति व्यक्ति शुद्ध जल की उपलब्धता निम्न है तो साथ–ही साथ लगातार कम भी हो रहा है। हालांकि प्रकृति द्वारा जलचक्र के माध्यम से समुद्र का खारा जल मीठा जल बनकर पृथ्वी के सभी भागों में पहुंच

जाता है। लेकिन यदि यह खारा पानी मनुष्य द्वारा जल प्रकृति से प्राप्त होता रहे तो उसका संरक्षण करके ठीक प्रयोग किया जाना होगा।

मानव जान–बूझकर जल में पर्याप्त मात्रा में प्रदूषण मिलता रहता है जिससे भूजल प्रदूषित होता रहता है। जल में प्रदूषक के रूप में मल–मूत्र, आपंक, अजैविक तत्व, खनिज पदार्थ, नाईट्रेट्स प्लास्टिक, खनिज तेल, इलेक्ट्रिक पदार्थ तथा आणविक कचरा आदि प्रमुख है। जिसके कारण टाइफाट, हैजा तथा दस्त जैसी अनेक बीमारियां जन्म लेती है।

खनन तथा औद्योगिक इकाईयों से जल में काफी मात्रा में प्रदूषक निरन्तर मिल रहे हैं। भारत जैसे देश में आर्सेनिक, पारा, सिक्का, मैग्नीशियम, कोबाल्ट, तांबा तथा सिलेनियम पदार्थ धरातल से अपक्षय के परिणामस्वरूप निकल कर जल में मिल जाते हैं जो शरीर में जाकर कई बीमारियों को जन्म देते हैं। समुद्र में तेल वाहन के दुर्घटना ग्रस्त होने से खनिज तेल समुद्र पर फैल जाता है तथा खनिज तेल के आस–पास में खनिज तेल रिसकर जल में मिल जाता है।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि बढ़ती जनसंख्या तथा बढ़ती औद्योगिक गतिविधियों से स्थलमण्डल, जलमण्डल तथा वायुमण्डल दुष्प्रभावित है।

(घ) अन्यु दुष्प्रभाव–

बढ़ती जनसंख्या का दुष्प्रभाव पारितन्त्र के पोषक तन्त्र पर भी अनुभव हो रहा है। जैव तथा अजैव ये पारितन्त्र के पोषक तन्त्र है। पृथ्वी पर बढ़ रही लगातार मानवीय गतिविधियों से नाईट्रोजन, कार्बन, फास्फोरस आदि का तेजी से परिसंचरण होने लगा है जिससे पोषक तत्व में असंतुलन हो गया है।

विश्व में बढ़ते नगरीयकरण का पर्यावरण पर अनेक दुष्प्रभाव पड़ रहे हैं जिसमें भूजल की खपत बढ़ जाती है, मूल स्थल में बदलाव, शोर तथा ठोस कचरा में वृद्धि आदि हैं।

विकासशील देशों में घनी आबादी वाले क्षेत्रों का सार्वजनिक स्वास्थ्य तंत्र डमाडोल हो गया है जिसके कारण हैजा तथा प्लेग जैसी बीमारियों का खतरा बना रहता है। घनी आबादी वाले क्षेत्र में कुपोषण की समस्या बनी रहती है।

15.5 संविकास की संकल्पना–

यह पर्यावरण के रख–रखाव एवं बचाव पर विशेष बल देता है न कि विकास पर बल देता हैं परन्तु बिना विकास के पर्यावरण का संरक्षण सम्भव भी नहीं है। पर्यावरण ह्रास केवल अत्यधिक आर्थिक विकास के कारण ही नही परन्तु

अत्यधिक गरीबी के कारण भी होता है। पर्यावरणीय गुणवत्ता की ह्रास के रूप में विकास को इसकी कीमत चुकानी पड़ेगी अर्थात् यह कहना अनुचित नहीं होगा कि बिना पर्यावरण को हानि पहुंचाये आर्थिक विकास सम्भव नही है लेकिन ऐसा नहीं लोगों द्वारा यह महसूस किया जाने लगा है कि ये दोनों तत्व परस्पर अन्योन्याश्रित होते हैं। पर्यावरण संरक्षण के साथ ही विकास हो सकता तथा विकास के साथ ही पर्यावरण संरक्षण हो सकता हैं। पर्यावरण का विनाश विकसित देश का प्रतीक है जबकि अल्पविकसित देश में पर्यावरण का ह्रास विपन्नता का प्रतीक है। पर्यावरणीय विनाश को रोकने की क्षमता विकसित देशों में पाया जाता हैं जबकि अल्पविकसित देश पर्यावरण सम्बन्धित समस्याओं को हल करने में असमर्थ होते हैं। अतएव विकास तथा पर्यावरण संरक्षण एक ही सिक्के दो पहलू है जो संविकास का मूलाधार है। संविकास का तात्पर्य बिना विनाश किये विकास करना। संविकास निम्न तत्वों से मिलकर बना है–

अनुकूल विकास–

संतुलित विकास से तात्पर्य ऐसे विकास से है जिससे समाज एवं समुदाय के सभी वर्गों को समुचित लाभ मिल सके। पर्यावरण ह्रास का यह भी एक प्रमुख कारण है कि विकास के लाभ का वितरण अत्यन्त असमान है। संसार के विभिन्न देशों में विकास का स्तर तथा भौतिक स्तर में बनी असमानता पायी जाती है। एक तरफ विकसित देश के लोग विविध भौतिक वस्तुओं को अनावश्यक उपयोग करते हैं तो दूसरी तरफ अल्पविकसित देशों के लोग जीवित रहने के लिए आवश्यक वस्तुओं एवं सुविधाओं से परे है– गरीब व निर्धन लोगों का जैव संसाधनों से सीधा सम्बन्ध पाया जाता है। संसार के गरीब तथा कुपोषण से प्रभावित लोग लकड़ी, गोबर, फसल का अपशिष्ट पदार्थ के ईंधन पर निर्भर करते हैं। इनके लिए संरक्षण एवं विपन्नता के बीच चयन करना मुश्किल होता है। अतः जीवित रहने के लिए ये लोग जो भी संसाधन उपलब्ध है उसका भरपूरक दोहन करते हैं। उनके लिए पर्यावरण संरक्षण का अर्थ– मृत्यु से बचना ही है। ऐसे लोग अपने चारों ओर के पेड–पौधौं को ईधन के रूप में प्रयोग करते हैं। मृदा चाहे जैसी हो फसल उगाने की चेष्टा करते हैं जिसके परिणामस्वरूप इनके चारों ओर वनस्पति विहीन तथा अनुर्वरक मृदा की वृद्धि होती जाती है। ऐसे लोगों से उनके आवश्यक वस्तुओं व सेवाओं को त्याग करने तथा पर्यावरण संरक्षण की बात करना हास्यस्पद है। इस प्रकार गरीब व निर्धन लोग अपने जीवन का निर्वहन करने के लिए पर्यावरण का विनाश करते हैं जो धीरे–धीरे विश्वव्यापी समस्या का रूपधारण कर लेता है। इस प्रकार की समस्याओं को संविकास नामक अस्त्र से ही खत्म किया जा सकता है।

समन्वित विकास–

इसका तात्पर्य ऐसे विकास से है जो आर्थिक–सामाजिक–पारिस्थितिकी तंत्रों की समग्रता को ध्यान में बढ़ता है। सम्पूर्ण विश्व में पर्यावरण का संकट, विकास का संकट, ऊर्जा का संकट, सामाजिक विषमता, एवं सांस्कृतिक विविधता की समस्याएं एक–दूसरे से अलग नहीं होता है वरन् एक–दूसरे पर अन्योन्याश्रित हैं इस प्रकार सम्पूर्ण संसार का अर्थतंत्र एवं सम्पूर्ण संसार का पारिस्थितिकी की एक–दूसरे से सम्बन्धित होता है। मृदा का अनुर्वरक, नदियों में जल का परिवर्तन, वायुमण्डल में प्रदूषण एवं वनों का घटता क्षेत्र का प्रभाव आर्थिक विकास की असफलता में दिखाई देता है। किसी स्थानीय पर्यावरण ह्रास का प्रभाव केवल स्थानीय तक ही सीमित नहीं रहता है बल्कि विश्वव्यापी होती है। पर्यावरण ह्रास का प्रभाव विकसित तथा अल्पविकसित दोनों देशों पर पड़ता है। यह पर्यावरण ह्रास चाहे विकसित देशों द्वारा चाहे फिर अल्पविकसित देशों द्वारा किया गया हो लेकिन इसका प्रभाव सम्पूर्ण देश पर पड़ता है। इस प्रकार संविकास की संकल्पना आर्थिक विकास एवं पारिस्थितिकी में किसी को श्रेष्ठ या फिर प्रधान एवं किसी को गौड़ न मानकर दोनों को अन्योन्याश्रित मानते हुए समन्वित संश्लिष्ट विकास पर ध्यान केन्द्रित करता है।

संधृत विकास–

संधृत विकास का आशय यह है कि विकास ऐसा होना चाहिए कि जो न केवल मानवीय समाज के आवश्यकताओं का आपूर्ति तथा स्थायी भविष्य के लिए भी निर्बाध विकास का आधार प्रस्तुत करता है। शाश्वत विकास की व्याख्या सर्वप्रथम 1987 में ब्रुण्टलैण्ट प्रतिवेदन में प्रकट हुई जिसमें आर्थिक विकास भावी पीढ़ी के विकास के अवसर पर प्रभाव न आये। संधृत विकास का उद्देश्य–मानवीय समाज की उपस्थित मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति को बिना भावी–भविष्य की आने वाली पीढ़ी की मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति की क्षमता को किसी भी प्रकार से नुकसान पहुंचाये सुनिश्चित करना। इस प्रकार संधृत विकास वातावरण के ऐसे संरक्षण पर बल देता है जो वर्तमान में जैवमण्डल का उपयोग करने के साथ–साथ भावी पीढ़ी के लिए जरूरतों एवं आकांक्षाओं के लिए उसकी संभाव्यता सुरक्षित रखे। संधृत विकास स्वीकार करता है कि पारिस्थितिकी तंत्र किसी के पूर्वजों से प्राप्त विरासत नहीं है वरन् सन्ततियों की धरोहर है। संधृत विकास, पारिस्थितिकी तंत्र के उपभोग की कोई सीमा स्वीकार नहीं करता है परन्तु तकनीक एवं सामाजिक संगठन को स्वीकार करता है।

सार रूप में संविकास एक ऐसा विकास है जो सामाजिक दृष्टि से वांछित आर्थिक दृष्टिकोण से संतुष्टप्रद एवं पर्यावरण दृष्टि से पुष्ट हो।

15.6 भारत में संविकास–

भारत एक अल्पविकसित देश है जहां के लोगों की औसत प्रति व्यक्ति आय निम्न पाया जाता है। स्वतंत्रता के बाद से पंचवर्षीय योजना के माध्यम से देश में नियोजित आर्थिक विकास के सतत प्रयास किये जाते रहे है जिसके फलस्वरूप आर्थिक विकास में भारत ने विशेष उल्लेखनीय प्रगति किया है। स्वतंत्रता के समय भारत में खाद्यान्न तथा अन्य उपभोक्ता वस्तुओं का अधिक मात्रा में अभाव था परन्तु वर्तमान समय में भारत खाद्यान्न के मामले में आत्मनिर्भर है। इसके अलावा भारत वस्त्र, सीमेन्ट, कपास, इस्पात औद्योगिक में भी आत्म निर्भर है। इन सभी का भारत निर्यात भी करता है। वर्तमान समय में भारत पर्याप्त एवं संतुलित विकास का लक्ष्य प्राप्त नहीं कर सका है। वर्तमान में भी भारत का आर्थिक विकास कई प्रकार से संतुष्टजनक नहीं है–

- भारत खाद्यान्न के मामले में आत्मनिर्भर है फिर भी भारत को खाद्य पदार्थ का आयात करना पड़ता है।

- भारत का आर्थिक विकास या देश के प्रगति के बावजूद भी यहां पर प्रति व्यक्ति आय बहुत कम है।

- भारत रासायनिक उर्वरक, मशीने, कागज, इलेक्ट्रानिक कल–पुर्जे, वायुयान, परिवहन उपकरण तथा वस्त्र का बड़े पैमाने पर आयात करता है।

- भारत में विकास का लाभ सभी इलाकों तथा सामाजिक वर्ग को एक समान नहीं मिला है। कृषि, सिंचाई ऊर्जा, जीवन की गुणवत्त तथा जीवन स्तर में विषमता पायी जाती है।

- भारत में तीव्रगति से बढ़ रही जनसंख्या पर्यावरण, आर्थिक विकास, सामाजिक विकास, आर्थिक विकास, खाद्यान्न विकास, राज्यों एवं क्षेत्रों में असंतुलन की खाई को बढ़ा रही है। साथ ही साथ विकास के प्रगति पर भी प्रभाव डाल रही है।

- देश में गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले लोगों का प्रतिशत अधिक है। उड़ीसा, बिहार तथा असम में गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले लोगों की संख्या सर्वाधिक है।

- देश के विभिन्न क्षेत्रों में जीवन प्रत्याशा, शिशु मृत्यु–दर तथा साक्षरता एवं प्रौद्योगिकी विकास का स्तर विषम पाया जाता हैं

उपरोक्त आर्थिक विकास की विशेषताओं से स्पष्ट होता है कि भारत में आर्थिक विकास निम्न स्तर के साथ–साथ क्षेत्रीय तथा सामाजिक विषमता भी पायी जाती है। भारत में निर्धनता एवं असमानता को समाप्त करने के लिए बड़े पैमाने पर आर्थिक विकास करना होगा। लेकिन आर्थिक विकास तथा गरीबी दोनों ही के कारण जल प्रदूषण, निर्वनीकरण, वायु प्रदूषण, ऊर्जा संकट, मृदा अपरदन तथा मृदा उर्वर ह्रास की समस्या प्रकट होगी। आर्थिक विकास एवं पारिस्थितिकी तन्त्र में गुणात्मक ह्रास के द्वन्द्व निम्न समस्याओं में समाहित हैं–

- भारत में औद्योगिक प्रदेशों व नगरीय क्षेत्रों के आस–पास वायु प्रदूषण तथा जल प्रदूषण का स्तर काफी अधिक रहता है। भारत की अधिकांश नदियां बाहितमल तथा औद्योगिक बहिर्स्राव से प्रदूषित हैं। प्रदूषित जल के उपभोग से तरह–तरह की बीमारियां जन्म लेती हैं।

- देश में कूड़ा–करकट नगरी क्षेत्र से अधिक मात्रा में निकलता है जिसका संग्रहण एवं निपटारन की व्यवस्था उचिन न होने के कारण प्रदूषण बढ़ रहा है। जिसके परिणामस्वरूप महामारियों का प्रकोप दिन–प्रति दिन बढ़ रही है।

- भारत में प्रति वर्ष 12 अरब टन मृदा का अपरदन हो रहा है जिससे मृदा का ऊपरी भाग कटकर बह जा रहा है।

- फसल में वृद्धि के लिए सिंचाई की बहुत जरूरत होती है। सिंचाई से जल सिक्तता तथा मृदा में लवणता की वृद्धि होने से कृषि के लिए यह मृदा अयोग्य हो जाता है।

- रासायनिक उर्वरकों का अधिक मात्रा में प्रयोग से मृदा की उर्वरता में तीव्र ह्रास हो रहा है। खाद्यान्न की अधिक मात्रा में उपरदन के लिए उर्वरकों का अधिक उपयोग किया जा रहा है जिससे प्रति वर्ष मृदा अनुर्वरक हो रही है।

- ऐसे राज्य जहां पर प्रति हेक्टेयर अपरदन अधिक किया जा रहा है वहां पर मृदा में पोषक तत्वों की कमी पायी जाती है। जैसे पंजाब का लुधियाना जिला।

- जल विद्युत एवं सिंचाई के वृद्धि के लिए बहुत से बांध का निर्माण किया गया तथा बहुत से बांध निर्माणाधीन भी हैं। बड़े बांधों के निर्माण से अनेक पारिस्थितिकी समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं।

- देश में खाना पकाने के लिए लकड़ी, गोबर एवं फसलों के डण्ठल का प्रयोग ईंधन के रूप में किया जाता है जिससे बड़े–पैमाने पर बन की कटाई की जाती है जिसका परिणाम है कि वन का क्षेत्रफल सिकुड़ रहा है।

- कृषि उत्पादकता को बढ़ाने के लिए बड़ी मात्रा में रासायनिक दवाओं का प्रयोग किया जाता है जिससे भारतीय लोगों के आहार में डी0डी0टी0 जैसी जहरीले पदार्थ का अंश बढ़ रहा है। दवा के छिड़काव से लोगों को तरह–तरह की बीमारियां जन्म ले रही हैं।

- देश में विद्युत की मांग अधिक है और आये दिन मांग में वृद्धि भी हो रही है जिसके कारण आपूर्ति नहीं हो पा रही है। विद्युत आपूर्ति को बढ़ाने के लिए प्रयास किया जा रहा है, तापीय विद्युत गृह, बड़े विद्युत उत्पादक बांध, नाभिकीय ऊर्जा, सागरीय ऊर्जा आदि का निर्माण किया जा रहा है जिसके कारण अनेक प्रकार की पारिस्थितकीय समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि भारत में संविकास, जिसके द्वारा पर्यावरण संरक्षण के साथ–साथ आर्थिक विकास की वृद्धि हो सके, इसकी अनिवार्य आवश्कता हैं एम0एस0 स्वामी नाथन ने भारत की पर्यावरणीय समस्याएं निम्न कारणों से उत्पन्न माना है–

- औद्योगिक मालिकों का पर्यावरण सुरक्षा के प्रति रुझान कम होने के कारण पर्यावरण प्रदूषण अनावश्यक फैलता है।

- मानव तथा जानवरों का मांग के कारण विभिन्न प्राकृतिक संसाधनों का दोहन किया जा रहा है।

- लोगों का पर्यावरण के प्रति जागरुकता का अभाव होने के कारण जैव विविधता के आर्थिक एवं पारिस्थितिकीय महत्व का समुचित आकलन नहीं होता है।

- आर्थिक वृद्धि के साथ सामाजिक न्याय का ध्यान न दिया जाने के कारण निर्धनता, कुपोषण एवं शिशु मृत्यु–दर का व्यापक असर बना हुआ हैं

- राज्य एवं केन्द्र सरकार द्वारा तैयार किये गये योजनाओं में पर्यावरण प्रभाव का आकलन न किये जाने के कारण समस्या का निवारण नहीं हो पा रहा है।

- आर्थिक विकास के कारण औद्योगिक, कृषिगत तथा घरेलू कार्य में ऊर्जा की मांग बढ़ रही है जिसकी आपूर्ति कोयला एवं पेट्रोल पर निर्भर है।

इसी लिए जीवन पोषण हेतु अनिवार्य आवश्यक पारिस्थितिकी तंत्र की जरूरतों से बहुत अधिक है। विकसित देशों का कहना है कि आर्थिक विकास के बाद पर्यावरण संरक्षण की तरफ ध्यान देना बहुत मंहगा पड़ता हैं 1972 में हुए स्टाकहोम सम्मेलन के बाद भारत सरकार पर्यावरण संरक्षण के प्रति अधिक सजग हुई तथा संविकास के लिए विभिन्न प्रकार के कानून एवं योजनाएं बनाई, सरकारी तथा अर्द्ध सरकारी संस्थाएं बनाई।

15.7 सारांश–

आप इस इकाई में जनसंख्या एवं पर्यावरण का सम्बन्ध, जनसंख्या वृद्धि का पर्यावरण पर दुष्प्रभाव, संविकास की संकल्पना तथा भारत में संविकास का अध्ययन किया है। अब आप समझ गये होंगे कि जनसंख्या एवं पर्यावरण तथा संविकास क्या है। मानव एवं पर्यावरण के सम्बन्ध में एक–दूसरे का सम्बन्ध, जनसंख्या वृद्धि का पर्यावरण पर दुष्प्रभाव में वायुमण्डल पर दुष्प्रभाव, जल मण्डल पर दुष्प्रभाव तथा स्थलमण्डल पर दुष्प्रभाव को, इसके अलावा कुछ अन्य दुष्प्रभावों, संविकास की संकल्पना में अनुकूल विकास, समन्वित विकास तथा संधृत विकास तथा भारत में संविकास तथा संविकास के विभिन्न पहलुओं की विस्तृत अध्ययन किया गया है। जनसंख्या एवं पर्यावरण के बीच विभिन्न पक्षों पर विचार रखा गया है।

15.8 शब्द सूची–

Population-जनसंख्या, Environment degradation-पर्यावरण ह्रास,

Malnutrition-कुपोषण, Population growth-जनसंख्या वृद्धि,

Poverty- निर्धनता, Population decline- जनसंख्या ह्रास,

Air Pollution- वायु प्रदूषण, Balanced development- संतुलित विकास,

Polution-जल प्रदूषण Environment-पर्यावरण,

Even development-संविकास, Urbvanization-नगरीयकरण,

Environment Devopment- पर्यावरण विकास,

Sustainble Development-संधृत विकास।

15.9 परीक्षोपयोगी प्रश्न–

1. बढ़ती जनसंख्या की प्रमुख समस्या क्या है–

(क) भूमि का अभाव (ख) प्रदूषण की समस्या

(ग) बीमारियां (घ) उपरोक्त में सभी

2. आजोन क्षरण का प्रमुख कारण है–

(क) जलवाष्प की वृद्धि (ख) तापमान वृद्धि

(ग) जनसंख्या की वृद्धि (घ) आर्थिक विकास

3. दूषित जल का सेवन से कौन–सी बीमारी जन्म नहीं लेती है–

(क) गठिया (ख) टाइफाईड

(ग) दस्त (पेचिस) (घ) पीलिया

4. वायु प्रदूषण का प्रमुख तत्व कौन–सा है–

(क) नाइट्रोजन (ख) सल्फरडाई आक्साईड

(ग) मेथेन (घ) परिवहन

5. संविकास के लिए कौन सा विकल्प सही है–

(क) रुक–रुक कर विकास करना

(ख) सामाजिक विकास

(ग) सतत् विकास

(घ) सभी क्षेत्र का एक समान विकास

उत्तर– 1–घ, 2–ख, 3–क, 4–घ, 5–ग

15.10 महत्वपूर्ण पुस्तकें / संदर्भ–

1. प्रो0 जगदीश सिंह– भारत : भौगालिक आधार एवं आयामा, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर।
2. प्रो0 आर0सी0 तिवारी भारत का भूगोल, प्रवालिका प्रकाशन।
3. डॉ0 बी0सी0 जाट, भारत का भूगोल, पंचशील प्रकाशन, जयपुर

4. सिंह, आर0एल0– इण्डिया : रीजनल जियोग्राफी एन0जी0एस0आई0, गोरखपुर।

5. डॉ0 वीरेंन्द्र सिंह चौहान एवं अलका गौतम : भारत का विस्तृत भूगोल,

6. Nag, P. and Sengupta, 8- Geography of India, Gorakhpur, Concept Publicshing company, New Delhi.

15.11 अभ्यास प्रश्न–

1. भारत में संविकास का संक्षिप्त व्याख्या कीजिए।
2. संविकास की संकल्पना की व्याख्या कीजिए।
3. पर्यावरण एवं जनसंख्या का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
4. स्थल मण्डल पर पर्यावरण के दुष्प्रभावों का वर्णन कीजिए।
5. जल मण्डल पर पर्यावरण के दुष्प्रभावों का वर्णन कीजिए।
6. बढ़ती जनसंख्या से उत्पन्न विभिन्न समस्याओं का वर्णन कीजिए।

MAGO-102 भारत का भूगोल

इकाई 16– अधिवास– नगरीय एवं ग्रामीण प्रतिरूप, परिवहन के साधन

इकाई की रूपरेखा–

16.1 प्रस्तावना

16.2 उद्देश्य

16.3 अधिवास

16.4 ग्रामीण अधिवास

16.5 ग्रामीण अधिवासों के प्रतिरूप

16.6 नगरीय अधिवास

16.7 नगरीय अधिवासों के प्रतिरूप

16.8 परिवहन

16.9 सारांश

16.10 शब्द सूची

16.11 परीक्षोपयोगी प्रश्न

16.12 उपयोगी पुस्तके एवं संदर्भ

16.13 अभ्यास प्रश्न

16.1 प्रस्तावना

भारत भूगोल की इस इकाई के अंतर्गत आप अधिवास, नगरीय अधिवास, ग्रामीण अधिवास, ग्रामीण अधिवास का प्रतिरूप, नगरी अधिवास का प्रतिरूप, तथा परिवहन के साधनो का अध्ययन करेंगे। अधिवास में आदिवास की आवश्यक तत्वों, आदिवास के प्रकार, भारत में अधिवास के वितरण, नगरीय अधिवास का प्रतिरूप में नगर में किस किस प्रकार के पत्रों पाए जाते हैं। इस प्रतिरूप का आकार तथा उसका देश में वितरण। इसी प्रकार ग्रामीण अधिवास का भी वितरण, आकार तथा प्रतिरूप का अध्ययन करेंगे। ग्रामीण एवं नगरीय अधिवासों के प्रतिरूप में आयताकार प्रतिरूप, रेखीय प्रतिरूप,वृत्ताकार प्रतिरूप, अद्र्धवृत्ताकार प्रतिरूप, तारा प्रतिरूप, त्रिकोणीय प्रतिरूप, शतरंजी प्रतिरूप, नाभिकीय प्रतिरूप, तीर प्रतिरूप, अनियमित

प्रतिरूप, सीढ़ी प्रतिरूप, मधु छत्ता प्रतिरूप तथा पंखा प्रतिरूप अध्ययन करेंगे। परिवहन साधनों के अंतर्गत स्थल परिवहन, जल परिवहन तथा वायु परिवहन का दिन करेंगे। सड़क परिवहन में राष्ट्रीय महामार्ग, स्वर्णिम चतुर्भुज, उत्तर–दक्षिण एवं पूरब–पश्चिम सम्पथ, प्रांतीय राजमार्ग, जिला सड़के,ग्रामीण सड़कें, समीपवर्ती सड़कें, अंतर्राष्ट्रीय राजमार्ग तथा एक्सप्रेस राजमार्ग जबकि जल परिवहन के अंतर्गत आंतरिक जलमार्ग तथा सामुद्रिक जलमार्ग या पोत परिवहन तथा बंदरगाह का अध्ययन करेंगे।

16.2 उद्देश्य–

भारत भूगोल की इस इकाई का आप अध्ययन करने के बाद–

- भारतीय ग्रामीण तथा नगरीय अधिवासों को समझ सकेंगे,
- ग्रामीण अधिवास तथा नगरीय अधिवास प्रतिरूप कुछ समझ सकेंगे,
- भारत में कौन कौन परिवहन संसाधन का उपयोग किया जा रहा है उनको समझ सकेंगे,
- सड़क परिवहन के प्रकार तथा उसका वितरण समझ सकेंगे,
- जल परिवहन में जलीय महामार्ग तथा बन्दरगाहों वितरण को समझ सकेंगे,
- वायु परिवहन का विकास एवं प्रकार को समझ सकेंगे।

16.3 अधिवास Settlements-

अधिवास लोगों का एक विशेष प्रकार का समूहन है इसमें आवासियों के लिए मकानों एवं गलियों आदि जैसी सुविधाएं पाई जाती है। अध्ययन की दृष्टि से यह इकाई के रूप में मानव के एक संगठित उपनिवेश को दर्शाता है जिसमें मकान और उसमें लोग रहते हैं, कार्य करते हैं, वस्तुएं संग्रह करते हैं एवं अन्य प्रकार से उसका उपयोग करते हैं तथा मार्गों एवं गलियों जिन पर उनका आवागमन होता है आदि को शामिल किया जाता है। अधिवास के अन्तर्गत एकाकी गृह से लेकर महानगरों के गगनचुंबी बहुमंजिले विल्डिग, पूरवा से लेकर महानगर, खदान के खनन कार्य में लगे लोगों का अस्थायी मकान, आखेटक व शिकारी लोगों का अस्थायी कैम्प से लेकर कृषकों और नगरीय लोगों का स्थायी आवास तथा रिहायसी स्थल से लेकर होटल, सराय और व्यापारिक प्रतिष्ठान आदि इमारतों आदि को शामिल किया जाता है। अधिवास भूगोल मानव भूगोल की एक शाखा है। भूगोल की यह प्रमुख शाखा अधिवासों के आकार, आकृति, प्रकार्य वितरण, स्थिति और प्रादेशिक सम्बन्धों का अध्ययन करती है।

क्लार्क महोदय अनुसार– ''मानव निवास का कोई भी स्वरूप यहां तक कि एकल गृह भी अधिवास हो सकता है, यद्यपित यह शब्दावली प्रायः गृह समुख के रूप में प्रयुक्त होती है।''

प्रो0 आर0एल0 सिंह–''अभिग्रहण इकाई के रूप में अधिवास मानव के संगठित बस्ती को प्रदर्शित करता है, जिसके अन्तर्गत गृह जिनमें वे रहते हैं, कार्य करते हैं, संग्रहण करते हैं, अथवा उनका अन्य प्रकार से उपयोग करते हैं और मार्ग या गलियाँ जिनके ऊपर उनका आवागमन होता है, भी समाहित होते हैं।''

सामान्यतः अधिवासों को उनके अवस्थिति, आकार, प्रकार आकृति, कार्य, उत्पत्ति, व्यवसाय, नियोजन, आर्थिक विकास सामाजिक विकास इत्यादि के आधार पर विभाजित किया जा सकता है। अधिवासों को मुख्यतः ग्रामीण अधिवास तथा नगरीय अधिवास वर्गों में वर्गीकृत किया गया है–

16.4 ग्रामीण अधिवास

इन अधिवासों में प्राथमिक स्तरीय क्रिया–कलाप की प्रधानता रहती है। यहां पर बड़े पैमाने पर भूमि उपयोग, सयुक्त परिवार व्यवस्था रूढ़ीवादी विचारों का बहुल्य क्षेत्र, जनसंख्या का कम घनत्व, परम्परावादी जीवन पद्धति, आवागमन के लिए कच्ची या मृदा सदृश सड़के एवं पुराने परिवहन साधनों का प्रयोग, पिछड़ा आर्थिक विकास, सामुदायिक सहयोग तथा न्यूनतम पर्यावरण प्रदूषण की समस्या देखने को मिलती है। ग्रामीण अधिवासों का आकार छोटा तथा अधिकांशः एक मंजिला होता है। आकारिकी, आकार तथा कार्यों के आधार पर इनको नगला या पूरवा, ग्राम तथा खेतघर में बांटा गया है। सूक्ष्मतम प्रशासनिक इकाई के रूप में भू–भाग को रखा जाता है। इनकी सीमाओं का निर्धारण तथा सीमांकन राजस्व सर्वेक्षण विभाग या भूकर सर्वेक्षण विभाग द्वारा किया जाता है। किसी भी एक राजस्व गांव में एक प्रमुख बसाव क्षेत्र और उसमें एक से अधिक पूरवा/नगला पाया जाता है। गांव के विकास में सामान्यतः प्रशासन तथा ग्राम पंचायत का विशेष सहयोग होता है। प्रत्येक गांव में मुखिया के तौर पर एक प्रधान होता है, जिसका चुनाव ग्राम सभा या उस गाांव के सदस्यों द्वारा चुनाव मतदान से होता है।

ग्रामीण अधिवासों में स्थित मकानों की संख्या तथा मकानों/भवनों के आपस में दूरी के आधार पर इनको दो प्रकारों में बांटा गया है–एकाकी या प्रकिर्ण आवास तथा सामूहिक या सघन अधिवास।

प्रविकीर्ण या एकांकी एवं सघन ग्रामीण अधिवासों के फैलाव/बिखरे होने के कारण इनके प्रकारों का निर्धारण निम्न रूपों में किया गया है–

(1) सघन आवास (2) अर्द्ध सघन आवास (3) पूरवा युक्त आवास

(4) प्रविकीर्ण आवास

- देश में सघन बसाव सिन्धु, गंगा व ब्रह्मपुत्र तथा उनकी सहायक नदियों द्वारा निर्मित उत्तर के विशाल मैदान पश्चिम भाग में स्थित पंजाब से लेकर पूरब में स्थित पश्चिम बंगाल तक विस्तृत रूप में पाया जाता हैं इसके अलावा देश के अन्य भागों में सघन अधिवास पाये जाते हैं। यहां पर उपजाऊ भूमि, जलोत्सारित मैदानों में कृषि में सामुदायिक श्रम ने विकास को सहायक प्रदान किया है।

- देश में अर्द्धसघन अधिवास की ऐसी अवस्था है जिसमें सघन तथा प्रविकीर्ण अधिवास दोनों का स्वरूप देखने को मिलता है। निचले गंगा–यमुना के उत्तरी–पश्चिमी भाग में खादर वाला भाग एवं यमुना के विषम क्षेत्र बीहड़ में ऐसे आवास पाये जाते हैं।

- गांव व पुरवा युक्त अधिवास भारत में मुख्य रूप से गंगा–घाघरा दोआब के पूर्वी भाग, घाघरा मैदान के दक्षिणी भाग तथा विन्ध्य उच्च भूभाग में पाये जाते हैं। आवास का यह स्वरूप सघन तथा प्रविकीर्ण आवास के संक्रमण क्षेत्र में ज्यादातर देखने को मिलता है।

- प्रविकीर्ण आवास दूर–दूर के रूप में होता हैं। आवास गृह से दूर इनके बीच में खेत, ऊसर, बाग–बगीचा तथा विरान क्षेत्र आदि पाये जाते हैं।

16.5 ग्रामीण अधिवासों के प्रतिरूप **Patterns of Rural Settlements-**

ग्रामीण आवासों के प्रतिरूप को अधिवासों की आकारिकी के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है। ग्रामीण आवास के निर्माण को प्राकृतिक स्थल भाग, सामाजिक तथा सांस्कृतिक तत्व अधिक प्रभावित करते हैं। विभिन्न स्थल रूपों के प्रभाव से अधिवास विशेष प्रकार प्रतिरूपों में परिवर्तित हो जाते हैं। ग्रामीण अधिवास प्रतिटपों पर प्राचीन समय से चली आ रही पर्यावरण का प्रभाव सर्वाधिक पड़ता है।

रेखीय प्रतिरूप

ग्रामीण क्षेत्र के आवासों का निर्माण जब किसी सड़क नदी, नहर तथा रेलमार्ग आदि के सहारे दोनों तरफ विकसित आवास को तो उसे प्रतिरूप कहते हैं। भारत के हिमालय पर्वतीय क्षेत्र के मध्य भाग तथा शिवालिक के पहाड़ी क्षेत्रों, गंगा, यमुना नदियों द्वारा निर्मित विस्तृत मैदानों में रेखीय प्रतिरूप अधिवास अधिकांशतः मिलते हैं।

आयताकार प्रतिरूप

इस प्रतिरूप का विकास नदियों द्वारा बनाया गया समतल उपजाऊ मैदानी भागों में तथा घाटियों में होता है। आयताकार प्रतिरूप अधिवासों के मध्य से होकर रास्ते गुजरते है जाते। रास्ते एक दूसरे को समकोण पर काटते हैं। भारत में गंगा नदी द्वारा बना प्रतिरूप मुख्य रूप से देखने को मिलते हैं। यहां पर जुताई पद्धति, क्षेत्र प्रतिरूप और भू–मापन की प्रणाली प्रचलित है।

वृत्तकार प्रतिरूप

वृत्ताकार प्रतिरूप का विकास किसी तालाब, झील एवं सार्वजनिक स्थल के चारों ओर होता है। इसमें विभिन्न गृहों के सामने से गुजरने वाले मार्ग भी गोलाकार होते हैं। झील या तालाब के चारों तरफ मानव अपना आवास बना लेते हैं और इनका प्रवेश द्वारा तालाब या झील की ओर होता है। अधिकांश अधिवास मछुआरों का होता हैं। कृषि पर निर्भर ग्रामीण लोग किसी मन्दिर, मुखिया का घर तथा सार्वजनिक स्थल के चारों ओर निवास गृह बनाकर रहते हैं। ऐसे अधिवास मध्य प्रदेश, गुजरात अधिकांश महाराष्ट्र में देखको को मिलता है।

अर्द्ध वृत्ताकार प्रतिरूप

गोलाकार आकृति में एक ही दिशा में बसाव प्रतिरूप को अर्द्ध वृत्ताकार प्रतिरूप कहते हैं। इसमे गोला एक छोर दुसरे छोर से नही निलता है। ऐसे प्रतिरूप का विकास नदियों द्वारा निर्मित विसर्प, गोखुर झील एवं झील व तालाब के किनारे एक दिशा में होता है। उत्तर प्रदेश में बहने वाली हिन्डन नदी द्वारा निर्मित विसर्प के तट के किनारे सहारे बसाव का प्रतिरूप अर्द्धवृत्ताकार है।

त्रिकोणीय प्रतिरूप

दो नदियों के संगम से पहले दोनों के तटों पर बने अधिवास प्रतिरूप को त्रिभुजाकार कहते हैं। दो सड़कों के मध्य स्थित अधिवास भी त्रिभुजाकार प्रतिरूप का निर्माण करते हैं। ऐसे क्षेत्र जहां दो नदियां, नहरें, सड़कें आकर एक–दूसरे से मिलती हैं तथा इन पर मानव होता जाता है।

तारा प्रतिरूप

ऐसे क्षेत्र जिनमें चारों तरफ से कई सड़के आकर मिलती हैं। वहां तारा या अक्षीय प्रतिरूप का विकास होता है। सड़क मार्गों के दोनो किनारे ग्रामीण बस्तियों का विकास गांव के बाहर की ओर देखने को मिलता है। प्रवेश द्वार मार्ग की ओर खुलते हैं आगे चलकर यह आकृति तारों की तरह होती है। भारत में अक्षीय प्रतिरूप सतलज–यमुना नदियों द्वारा निर्मित मैदानों में पाये जाते हैं।

शतरंजी प्रतिरूप

समतल मैदानी क्षेत्रों में मार्ग एक–दूसरे से लम्बवत रूप में मिलते हैं और एक–दूसरे को समकोण पर काटते हैं वहां पर अनेक चौकोर छोटी आकृति वाले बस्तियों का विकास होने लगता हैं इसको चौकोर प्रतिरूप भी कहते हैं इसमें छोटी गलियां पाई जाती हैं। ऐसा प्रतिरूप अधिकांशतः नियोजित ग्रामीण क्षेत्रों में देखने को मिलता है।

तीर प्रतिरूप

नदी के नुकीले सिरे तथा अन्तरीप पर तीरनुमा प्रतिरूप वाले ग्रामीण बस्ती का विकास होता है। भारत में ग्रामीण अधिवासों का ऐसा प्रतिरूप कन्याकुमारी, ओड़ीसा में चिल्का झील के तट पर देखने को मिलता है।

नाभिकीय प्रतिरूप

गांव का विकास गांव के मध्य में मुखिया के मकान के चारों ओर वृत्ताकार मार्ग में हो उसे नाभिकीय प्रतिरूप कहते हैं। भारत के गंगा–यमुना नदियों द्वारा निर्मित भागों में नाभिकीय प्रतिरूप पाया जाता है।

सीढ़ी प्रतिरूप

पर्वतीय तथा पठारी क्षेत्रों में सीढ़ीनुमा आकृति में छोटे–छोटे मैदान पाये जाते हैं। जिस पर किसान लोग अपना घर बना लेते हैं जो देखने पर सीढ़ीनुमा लगता है। इसे सीढ़ी प्रतिरूप कहते हैं।

अनियमित प्रतिरूप

जब किसी गांव में लोगों का बसाव अनियमित रूप से पहले से ही बसते चले आते हैं तो अनियमित प्रतिरूप का निर्माण होता है। इसमें लोग बिना किसी प्रकार के नियम–कानून से बसते जाते है।

मधु–छत्ता प्रतिरूप

सघन वनों में आदिवासी जातियां अपने घरों का निर्माण लकड़ी तथा पत्तों माध्यम से करते है। आदि से करती हैं। इसकी आकृति गुम्बदाकार सदृश होती है। इनको मधु–छत्ता प्रतिरूप कहते हैं। दक्षिण भारत में नीलगिरि पहाड़ी पर टोडा जनजाति का अधिवास प्रतिरूप इसी प्रकार का होता है।

16.6 नगरीय अधिवास Urban Settlements-

नगर और कस्बा के लिए नगरीय या शहरीय शब्द का प्रयोग किया जाता है। नगरीय अधिवास में आवास तथा जनसंख्या दोनों सघन रूप में पाया जाता है। यहां की जनसंख्या गैर प्राथमिक क्रिया कलापों में संलग्न रहती है। 1971 की जनगणना के अनुसार भारत में नगरीय अधिवास क्षेत्र निम्न शर्तें निर्धारित की जाती है–

1– जनसंख्या 5000 से अधिक हो।

2– पुरूषों की कार्यशील जनसंख्या का कम से कम 75 प्रतिशत भाग गैर कृषि कार्यों में संलग्न हो।

3– जनसंख्या घनत्व 400 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी0 से अधिक हो।

नगरीय अधिवासों को निम्न प्रकार में बांटा जा सकता है–

1. नगरीय गांव 2. कस्बा 3. नगर 4. महानगर 5. वृहन्नगर 6. सन्नगर

16.7 नगरीय अधिवासों के प्रतिरूप Patterns of Urban Settlements-

नगर में स्थित भिन्न–भिन्न घरों के बसाव को नगर का प्रतिरूप कहते हैं। प्रतिरूप का निर्धारण नगर में से गुजरने वाली प्रमुख सड़कें, रेलमार्ग, भिन्न–भिन्न भागों में बनी भवनों की परस्पर एक–दूसरे के समीपता एवं विभिन्न क्रिया–कलापों के द्वारा होती है। नगरीय प्रतिरूप के निम्नलिखित प्रकार होते हैं–

आयताकार प्रतिरूप

नगर के आयताकार प्रतिरूप अधिकांश मध्यकाल में पाये जाते थे। वर्तमान समय में नगरों का विकास नियोजित ढंग से आयताकार प्रतिरूप में ही किया जा रहा है। इसमें नगरों के विभिन्न भागों से गुजरने वाले मार्ग एक–दूसरे के समानान्तर होते हैं और ये मार्ग एक–दूसरे को समकोण पर काटते हैं। नगरीय बस्तियों का आकार छोटे–छोटे चौकपट्टी के सदृश प्रतीत होता है। भारत के चण्डीगढ़ नगर को चैकरबोर्ड प्रतिरूप में नियोजित करके रूप प्रदान किया गया।

खुला हाथ प्रतिरूप

नदियों द्वारा नर्मित डेल्टा प्रदेश में समुद्र तट के पास अंगुली के आकार में नगरों के अधिवास को खुला हाथ प्रतिरूप कहते हैं। इसमें तटीय भाग कटा–फटा रहता है। बीच–बीच में नगरीय आवासों का विकास होता है। ये अधिवास छोटे–छोटे लम्बाकार में होते हैं।

अरीय या त्रिज्या प्रतिरूप

इसमें नगरीय अधिवासों का विकास नगर से बाहर जाने वाले विभिन्न मार्गों पर होता है। यह विकास धीरे–धीरे दूर तक हो जाता है। विकास का स्वरूप मध्य भाग में ज्यादा देखने को मिलता है जिससे अरीय प्रतिरूप का विकास हो जाता है। भारत के नगर जैसे दिल्ली और भोपाल में यह प्रतिरूप पाया जाता है।

वृत्ताकार प्रतिरूप

इस प्रकार के प्रतिरूप का विकास किसी जलाशय, स्थल भाग के चारों ओर, परिवहन मार्गों पर होता है। गुम्बदाकार स्थलभाग के चारों ओर भी वृत्ताकार प्रतिरूप में नगरों का विकास हो जाता है। भारत में अनेक नगरों के चारों ओर वृत्ताकार चारदीवारी का निर्माण करके मध्य युग में बाहरी आक्रमण से बचाव के लिए नगर बसाये गये थे।

तारा प्रतिरूप

विस्तृत धारातलीय क्षेत्र पर बस्तियों का विकास अरीय प्रतिरूप में बाहर की ओर जाने वाले मार्गों के दोनो ओर होता है तो स्टार प्रतिरूप का निर्माण हो जाता है। मध्य भाग में विकास के साथ–साथ मार्गों के सहारे बाहर भी विकास होने लगता है।

रेखीय प्रतिरूप

जब नगरों का विकास किसी नहर के किनारे या परिवहन मार्गों के दोनों ओर लम्बाकार आकृति में होता है तो उसे रेखीय प्रतिरूप कहते हैं। ऐसे नगर छोटे आकार के होते हैं इनका विकास ग्रामीण आवासों के लगातार परिवर्तन से होता है।

मिश्रित प्रतिरूप

वर्तमान समय में अधिकांश नगर मिश्रित प्रतिरूप में बसे हुए हैं। इसमें नगरों के भिन्न–भिन्न प्रकार का प्रतिरूप पाये जाते हैं जैसे–अरीप प्रतिरूप, आयताकार प्रतिरूप, वर्गाकार आदि ये प्रतिरूप प्रतिरूप सम्मिलित रूप में मिलते हैं। भारत में छत्तीसगढ़ की राजधानी तथा जयपुर में मिश्रित प्रतिरूप देखने को मिलता हैं।

तटीय पंखा प्रतिरूप

नदियों द्वारा अवसादों के जमाव से निर्मित डेल्टा के समुद्र तटीय भागों में तटीय पंखा प्रतिरूप का विकास होता है। नगर में विभिन्न बस्तियों का विकास बाहर की ओर एक ही दिशा में पृष्ठ प्रदेश में होता जाता है। तट के सहारे नगरीय बस्तियां

विकसित होती जाती हैं। धीरे–धीरे नगर अधिवास का आकार पंखे के समान हो जाता है।

मकड़ी जाल प्रतिरूप

नगर का विकास अरीय तथा वृत्ताकार दोनों प्रतिरूपों के शामिल से होता है। अरीय त्रिज्याकार प्रतिरूप में नगर के मध्य में स्थित किला, मन्दिर आदि के चारों तरफ बस्ती वर्गाकार रूप में बसती चली जाती है। नगर के वर्गाकार रूप में विकसित होते चले जाते हैं और बाहर जाने पर मार्ग एक दूसरे को इस प्रकार काटते है जैसे मकड़ी का जाल।

16.8 परिवहन Transport-

भौतिक सम्पन्नता और आर्थिक विकास का मापदण्ड परिवहन साधन माना जाता है। परिवहन के माध्यम से लोगों का आवागमन, तस्तुओं का गमनागमन तथा सेवा का संचार होता है। दूर–दराज के क्षेत्रों का जोडा जा सकता है संसाधनों का प्रयोग करके लोगों को सहायता दी जा सकती है। आपदा के समय इसकी सघनता से सुवधिाएं उपलब्ध कराई जा सकती है। इसकी सहायता से औद्योगीकरण एवं नगरीकरण को बढ़ाया जाता है। राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा मिलता है। किसी भी देश की आर्थिक विकास के लिए एक सुव्यवस्थित परिवहन प्रणाली की अनिवार्य आवश्यकता है।

(क) सड़क परिवहन Road Transport-

सड़क जनता जनार्दन के परिवहन के एक प्रमुख साधन है। देश के प्रत्येक गांव, शहर, पूरवा आदि को सड़कों के माध्यम से जोड़ा गया है। भारत में सड़क निर्माण की प्रक्रिया प्राचीन परम्परा सिन्धु घाटी सभ्यता के समय से ही रहा है। भारत में स्वतंत्रता के पश्चात सड़क निर्माण की प्रक्रिया को ज्यादा प्रोत्साहन मिला है। सड़क निर्माण की प्रक्रिया में तेजी लाते हुए मस्त सड़कों चौड़ा करना, दूर–दराज के क्षेत्रों को पक्की सड़कों से जोड़ना कच्ची सड़कों को पक्की सड़कों को में बदलने का कार्य किया गया है। 31 मार्च 2011 को देश में सड़कों की कुल लम्बाई 46,90,342 किमी0 थी, जिसमें पक्की सड़कों की लम्बाई 53.83 प्रतिशत थी।

नागपुर योजना (1943) ने भारतीय की सड़कों को 4 भागों में बांटा गया है जो निम्नवत है–

1. राष्ट्रीय महामार्ग Nationla Highways-

इन सड़कों के निर्माण और मरम्मत की जिम्मेदारी केन्द्र सरकार की होती है। ये देश की सबसे महत्वपूर्ण सड़कें होती हैं जो प्रमुख नगरों, बन्दरगाहों, राज्य की राजधानियों को जोड़ने का कार्य करती हैं।

स्वर्णिम चतुर्भुज

राष्ट्रीय राजमार्गों की गुणवत्ता में सुधार करने के लिए राष्ट्रीय महामार्ग विकास प्रायोजना (NHDP) का कार्यक्रम शुरू किया गया है। इसमें राजमार्गों की चौड़ाई को बढ़ाने का भी प्रयास किया जा रहा है। इसके प्रथम चरण में दिल्ली, मुम्बई, चेन्नई और कोलकाता के चार महानगरों को जोड़ने वाले 5846 किमी0 लम्बे स्वर्णिम चतुर्भुजीय राजमार्ग का निर्माण किया जा रहा है।

उत्तर–दक्षिण और पूर्व–पश्चिम कोरीडोर

श्रीनगर को कन्याकुमारी और सिल्चर को पोरबन्दन से जोड़ने वाले 7300 किमी0 लम्बे उत्तर–दक्षिण तथा पूर्व–पश्चिम राजमार्गों का निर्माण किया जा रहा है। इसका निर्माण विश्व बैंक कि मदद से बनाया जा रहा है। यह मार्ग 12 राज्यों से होकर गुजरता है।

2. प्रान्तीय राजमार्ग

राज्य के सार्वजनिक निर्माण विभाग (PWD) प्रान्तीय राजमार्गों का निर्माण एवं रखरखाव का प्रबन्धन किया जाता है। में मार्ग नगरों तथा बड़े कस्बों को आपस में जोड़ने का कार्य करती है। इसकी कुल लम्बाई (2016) 170237 किमी है।

3. जिला सड़कें

इन सड़कों के माध्यम से कस्बों और बड़े गांवों तथा जिला मुख्यालयों को आपस में जोड़ने का कार्य किया जा है। इन सड़कों से कच्ची से पक्की सड़कों में बदला जा रहा है। इन पर पुल आदि का निर्माण करके दुसरे मार्ग से जोडा जा रहा है।

4. ग्रामीण सड़कें

इन सड़कों की रख–रखाव निर्माण कार्य ग्राम पंचायतों द्वारा किया जाता हैं इसके अन्तर्गत पंचायत सड़कों, सामुदायिक विकासखण्ड/पंचायत समिति की सड़कों और जवाहर रोजगार योजना को शामिल किया जाता है। में सड़कों बड़े वाहनों के

लिए उपयुक्त नहीं क्योंकि ये सड़कें टेढ़ी–मेढ़ी और कच्ची होती हैं। बारिश के दिनों यहां चलना/यातायात कठिन हो जाता है। प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना के अन्तर्गत ग्रामीण परिवहन क्षेत्र को सुधारने का प्रयास किया जा रहा है।

5. सीमावर्ती सड़कें

Border Roads Organization की स्थापना 1960 में किया गया जो देश के उत्तरी–पूर्वी सीमा क्षेत्रों में सामरिक महत्व की सड़कों के विकास के लिए किया गया था। वर्तमान में सड़क निर्माण के अलावा सड़कों पर बर्फ हटाने, हवाई अड्डा बनाने, जल विद्युत परियोजनाओं के निर्माण व इमारतों और विदेशों में सड़कों के निर्माण का कार्य कर रहा है।

6. अन्तर्राष्ट्रीय राजमार्ग

पड़ोसी देशों को जोड़ने वाले देश के कुछ राजमार्गों को अन्तर्राष्ट्रीय राजमार्ग घोषित किया गया हैं। ऐसा एशिया और प्रशान्त के आर्थिक और सामाजिक आयोग के समर्थन से हो पाया है। अन्तर्राष्ट्रीय राजमार्ग के दो प्रकार हैं– (1) पड़ोसी देशों की राजधानियों को आपस में जोड़ने वाले प्रमुख्य मार्ग (2) मुख्य राजमार्ग, प्रमुख नगरों और बन्दरगाहों को जोड़ने वाले राजमार्ग।

7. एक्सप्रेस राजमार्ग

इस राजमार्ग का निर्माण बहुमार्गी हुआ है जिन पर तीब्र गति से यातायात प्रवाह होता है। उदाहरण स्वरूप– दुर्गापुर कोलकाता राजमार्ग, सुकिण्डा–पाराद्वीप बंदरगाह राजमार्ग, मुम्बई में पश्चिमी और पूर्वी राजमार्ग, यमुना एक्सप्रेसवे, पूर्वांचल एक्सप्रेसवे, गंगा एक्सप्रेसवे और कोलकाता–दमदम हवाई अड्डा राजमार्ग आदि।

सड़क परिवहन की समस्याएं–

भारत में यातायात हेतु सड़क परिवहन को कई समस्याओं का सामना करना पड़ता हैं जो निम्न हैं–

- देश में अधिकांश सड़कें कच्ची हैं जिससे भारी वाहनों को यातायात में समस्या होती है। इसके कारण वाहनों को नुकसान का सामना करना पड़ता है।
- सड़कों पर वाहनों की चेकिंग यातायात गति में बाधा लाती है। कभी–कभी पुलिस ट्रक और बस चालको को परेशान भी करते रहते हैं और उनसे मनमानी वसूली करते हैं।

- देश में यातायात के मिश्रण से जुड़े होना एक बड़ी समस्या है ऐसे में दो पहिया, तीन पहिया एवं बहुपहिया वाहन, पैदल तथा जनवार एक साथ चलने से रोड़ पर भीड़ हो जाता है जिससे वाहनों की गति मन्द पड़ जाती है। इससे मार्ग में अवरोध ध्वनि प्रदूषण व वायु प्रदूषण दुर्घटना आदि की समस्या बढ़ जाती है।

- भारत में राजमार्ग विकास के लिए कोई निश्चित और सुनियोजित नीति नही है। सरकारों के बदलने पर सड़क विकास के कार्यक्रमों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

- लम्बे निर्माण काल और कम प्रतिलाभ के कारण भारत में सड़कों के निर्माण और रखरखाव में निजी क्षेत्र की भूमिका नगण्य है। BOT योजना के तहत उन्हें भागीदार बनाने का प्रयास किया जा रहा है।

(ख) रेल परिवहन Rail Transport-

रेल यात्रियों एवं माल के परिवहन का महत्वपूर्ण साधन है। भारत के कृषि, औद्योगिक और सामाजिक–आर्थिक विकास में रेल परिवहन की प्रमुख भूमिका है। देश के ग्रामीण एवं नगरीय भागों को जोड़ने और राष्ट्रीय एकता को कायम रखने को महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। देश में रेल परिवहन के विकास की शुरूआत सर्वप्रथम 1853 में मुम्बई से ठाणे (34 किमी0) के बीच हुई। इसके बाद कोलकाता से रानीगंज 1854 में (180 किमी0) तथा इसके पश्चात् 1856 में चेन्नई (मद्रास) से अर्कोनम (70 किमी0) के बीच रेल को चलाया गया। देश के सभी बड़े शहरों/नगरों को जोड़ने के लिए लार्ड डलहौजी के प्रयास से एक विस्तृत रेल विकास की योजना तैयार की गई और 1871 कोलकाता, मुम्बई और चेन्नई के प्रेसीडेन्सी नगर रेल से जोड़ दिये गये। 1925 में भारत सरकार ने प्रथम कम्पनी का राष्ट्रीयकरण किया और 1950 तक इसका सम्पूर्ण कार्य भार भारत सरकार के अधीन हो गया। भारत में स्वतंत्रता के बाद से रेलों के विकास के लिए नई रणनीति तैयार की गई जिसमें रेल मार्गों का विस्तार, सामान परिवर्तन (मीटर और नैरो गेज को ब्राड गेज में बदलना) विद्युतीकरण, नवीनीकरण, वाष्प इंजनों को डीजल और विद्युत इंजनों में बदलाव, सूचना–संचार प्रणाली में सुधार, यात्री सुविधाओं और सुरक्षा में वृद्धि, यातायात भार विरोधों में कमी, माल और यात्री यातायात के सुप्रबन्धन माल टर्मिनल के विकास को उच्च प्राथमिकता, तेज गति की सवारी गाड़ियों की शुरूआत, रेल आरक्षण और संचालन का कम्प्यूटरीकरण और देश के दूर–दराज तथा पिछडे वाले क्षेत्रों में रेल मार्गों का फैलाव आदि सम्मिलित है।

सारणी– 1 भारत–रेल खण्ड

रेल–खण्ड	मुख्यालय
मध्य	मुम्बई (CST)
दक्षिणी	चेन्नई
पश्चिमी	मुम्बई (चर्च गेट)
उत्तरी–पूर्वी	गोरखपुर
उत्तरी	नई दिल्ली
दक्षिणी–पूर्वी	कोलकाता
पूर्वी	कोलकाता
उत्तर–पूर्वी सीमान्त	मालिगांव (गुवाहाटी)
उत्तर–पश्चिमी	जयपुर
दक्षिण–मध्य	सिकन्दराबाद
पूर्व–मध्य	हाजीपुर
उत्तर मध्य	इलाहाबाद
पूर्व तट	भुवनेश्वर
दक्षिण–पूर्व मध्य	विलासपुर
पश्चिम मध्य	जबलपुर
दक्षिण–पश्चिम	ळुबली

देश में जनसंख्या वृद्धि, नगरीकरण, औद्योगीकरण और आर्थिक विकास के चलते पिछले कुछ दशकों में रेल द्वारा माल और सवारी यातायात में वृद्धि दर्ज की गयी है। रेल यातायात की प्रमुख्य विशेषताओं को निम्न प्रकार से संक्षेपित किया जा सकता है–

- यात्रियों का सर्वाधिक घनत्व गंगा के मैदानी क्षेत्रों में देखने को मिलता है इसके बाद तमिलनाडु के मैदान में महत्व ज्यादा है।

- जहां पर कृषि बाहुल्य क्षेत्र है उन क्षेत्र से गुजरने वाले रेलमार्गों पर माल परिवहन कम देखा जाता है।

- खनिज सम्पन्न क्षेत्रों से गुजरने वाली रेल मार्गों पर माल यातायात का अधिक घनत्व देखा जाता है।

- देश में सड़क परिवहन के विकास से रेल परिवहन को प्रतिस्पर्धा करना पड़ रहा है। इससे माल और यात्रियों के परिवहन में रेलों का हिस्सा घटता जा रहा है।

रेल की समस्याएं एवं सम्भावनाएं–

देश में सार्वजनिक क्षेत्र का सबसे बड़ा उपक्रम रेल है। अतः इसकी समस्याएं भी जटिल एवं भिन्न–भिन्न प्रकार की होती है।

1. देश में रेलमार्गों के वर्तमान परिवहन–क्षेत्र पर अत्यधिक भार के कारण इसको अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है।

2. सड़क परिवहन के तेजी से विकास ने रेल परिवहन को प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ रहा है। कभी रेल परिवहन के समानान्तर सड़कों का विकास हो जाता है जिसमें समस्या का सामना करना पड़ता है और दोनों कार्य में सिथिलता आ जाती है।

3. NTPC और राज्य विद्युत बोर्ड द्वारा बिजली के मूल्यों और सरकार द्वारा डीजल के दामों में अचानक वृद्धि से रेल विभाग को विपरीत अर्थव्यवस्था का सामना करना पड़ता है।

4. देश में रेल विभाग का बिजली गृहों और राज्य विद्युत बोर्ड पर करोड़ों रूपये का बकाया है जिसकी वसूली करना एक बड़ी समस्या है।

5. रेल विभाग में राजनीतिक दबाव और हस्तक्षेप के कारण बहुत सारी ऐसी परियोजनाएं शुरू की है जिसपर अधिक पूंजी की आवश्यकता होती है यह योजना रेल विभाग घाटा दे रही है।

(ग) जल परिवहन Water Transport-

देश में परिवहन का सबसे पुराना साधन जल परिवहन है। सड़क एवं रेल परिवहन के विकास के पहले ही यात्री एवं माल यातायात का सारा काम जल परिवहन के माध्यम से होता था। जल परिवहन के विकास एवं रख–रखाव में बाकी

परिवहन की तुलना में कम खर्च लगता है। सबसे सस्ता परिवहन अगर कोई परिवहन का साधन है तो वह जल परिवहन ही है। जल परिवहन के मार्गों के दो प्रकार हैं–

(अ) आन्तरिक जल मार्ग (ब) समुद्री जल मार्ग या पोत परिवहन

आन्तरिक जल मार्ग

भारत में आन्तरिक जलमार्ग से सामान और यात्रियों के परिवहन हेतु नदियों, नहरों, अन्तर जल, संकरी खाड़ियों इत्यादि का उपयोग किया जाता है। देश में गंगा ब्रह्मपुत्र इत्यादि का उपयोग किया जाता है। देश में गंगा ब्रह्मपुत्र, सिन्धु, यमुना, महानदी, गोदावरी, कृष्णा, कावेरी, नर्मदा, तापी आदि नदियों के आन्तरिक जल परिवहन में प्रयोग किया जाता है। इन नदियों के तटों पर अनेक पत्तन और घाटों का विकास किया गया है। लगभग 19वीं सदी के मध्य में रेलों के बिछाने उसके पश्चात सड़कों के निर्माण कार्य से नदी परिवहन में ह्रास देखने को मिलता है। सिंचाई के लिए नदियों से नहरों को जोड़कर जल का अपवर्तन से जल परिवहन में समस्या को जन्म दिया है। जिसकी वजह से देश में जल परिवहन की भागीदारी मात्र 1 प्रतिशत रह गयी है। देश में बहुत सारी नदियां सदानीरा हैं। फिर भी नदी परिवहन के विकास में समस्या उत्पन्न हो रही है। इसका प्रमुख कारण है– मौसमी वर्षा, भयंकर बाढ़, मार्ग परिवतर्न, नहरों द्वारा जल का अपवर्तन, नदी प्रवृत्ति में अस्थिरता, अवसादन, विभिन्न उच्चावचन आदि।

राष्ट्रीय जल मार्ग

भारत में आन्तरिक जल परिवहन के विकास हेतु भारत सरकार ने कुल 10 प्रमुख जल मार्गों को राष्ट्रीय जलमार्ग के रूप में विकास करने का निश्चय किया है जिसमें हल्दिया–इलाहाबाद, गंगा नदी पर एवं सादिया–धुबरी के बीच ब्रह्मपुत्र नदी पर आदि हैं। राष्ट्रीय जलमार्गों के विकास की जिम्मेदारी भारतीय आन्तरिक जलमार्ग प्राधिकरण (IWAE 1986) सौंपा गया है। केन्द्रीय आन्तरिक जल परिवहन निगम (CIWIC, 1967) कोलकाता गंगा, हुगली और ब्रह्मपुत्र नदियों में माल परिवहन की व्यवस्था करता है। ये जहाजों की मरम्मत का सारा कार्य राजा बगान डाक यार्ड में किया जाता है।

जहाजरानी

देश में समुद्री व्यापार प्राचीन काल में विकसित था। जहाजें पूर्वी द्वीप समूह और मध्य पूर्व तक आती–जाती थी। औपनिवेशिक काल में इनका ह्रास होने लगा। जिसका कारण विदेशी कम्पनियों का आगमन था। प्रथम विश्व युद्ध के दौरा जहाजरानी के महत्व को समझते हुए सिन्धिया स्टीम नेविगेशन कम्पनी लि0 (1919) की स्थापना की। वर्तमान समय में भारत जहाजरानी बेड़ा विकासशील देशों में सबसे

बड़ा और विश्व में महत्वपूर्ण स्थान रखने वाला देश बन गया है। भारत, रूस और ईरान के बीच व्यापार को आसान बनाने के लिए सेण्टपीटसबर्ग में एक अन्तर्राष्ट्रीय उत्तर–दक्षिण नौपथ हेतु मंजूरी मिली है।

तटीय नौवाहन Coastal Shipping-

ये परिवहन ऊर्जा की बचत करने वाला, पर्यावरण अनुकूल एवं किफायती परिवहन का उत्तम मध्यम है। व्यापार एवं घरेलू उद्योग के विकास हेतु एक महत्वपूर्ण घटक है। विभिन्न बन्दरगाहों पर तटीय नौवहन के विकास हेतु कंटेनर सेवा शुरू की गयी है।

सेतु समुद्रम परियोजना

देश के पूर्वी और पश्चिमी तटों के बीच बड़े जहाजों के आवागमन श्रीलंका का चक्कर लगाते हुए उसे दक्षिण से होता हैं। इससे ईंधन एवं समय दोनों का नुकसान होता है। इसी समस्या के समाधान के लिए कृत्रिम जलमार्ग के विकास का निर्णय भारत सरकार द्वारा लिया गया। सेतु समुद्रम शिय केनाल प्रोजेक्ट (SSCP) स्वेज नहर के तर्ज पर बनानी की योजना भारतीय जहाजरानी परियोजना है जिसके अन्तर्गत एडम्स सेतु (रामसेतु), पाक खाड़ी और पाक जलसन्धि होते हुए एक 167.22 किमी0 लम्बी नौ परिवहन जल जलमार्ग के माध्यम से मन्नार की खाड़ी को बंगाल की खाड़ी से जोड़ दिये जाने का निर्णय किया गया है।

बन्दरगाह–

देश में बन्दरगाह की संख्या आवश्यकता पड़ने पर बढ़ती जाती है। कुछ महत्वपूर्ण बन्दरगाह निम्न है।

कांडला– कच्छ की खाड़ी के शीर्ष पर भुज से लगभग 48 किमी0 द0पू0 में स्थित है। भारत पाकिस्तान विभाजन के पश्चात कराची बन्दरगाह की कमी को पूरा करने के लिए 1955 में इसका विकास किया गया। यह एक प्राकृतिक बन्दरगाह है। यहां बड़े पोत आसानी से आवागमन कर सकते है।

मुम्बई–

भारत में पश्चिमी तट का सबसे बन्दरगाह मुम्बई बन्दरगाह है। ब्रिटिश काल में निर्मित यह सबसे महत्वपूर्ण बन्दरगाह है। 1869 में निर्मित स्वेज नहर ने इसके महत्व को और भी बढ़ा दिया है। मुम्बई बन्दरगाह एक प्राकृतिक बन्दरगाह जो सालसट द्वीप पर स्थित है।

न्हावा सेवा– मुम्बई बन्दरगाह के भार को कम करने के लिए इस बन्दरगाह का निर्माण किया गया है। यह एक आधुनिक सुविधाओं से सम्पन्न बन्दरगाह है। इससे यहां माल को उतारने–चढ़ाने में शीघ्रता होती है।

मुरर्मुगाव– जुआरी नदी के मुहाने पर स्थित गोवाकी एक प्रमुख बन्दरगाह है। यह भी प्राकृतिक बन्दरगाह हैं यह लौह अयस्क निर्यातक बन्दरगाह है। कोंकण रेल मार्ग के निर्माण से मरमुगाव बन्दरगाह के यातायात में तेजी आयी है।

कोच्चि– केरल राज्य में एक प्राकृतिक बन्दरगाह है जो अति सुन्दर है। पूरे वर्ष भर खुला बन्दरगाह है। इस बन्दरगाह से नारियल के बने समान, नारियल, काजू, मछली, रबर, चाय, गर्म मसाला, इलायची आदि का निर्यात किया जाता है।

न्यू मंगलौर– इसको पुराने बन्दरगाह से 9 किमी0 उत्तर बसाया गया है। यहां पर भारी और तरल सामान को उतारने–चढ़ाने में आसानी होती है। यहां से कहवा, मैगनीज, चाय, काजू, लौह अयस्क, इमारती लकड़ी निर्यात किया जाता है।

नई तूथूकुड़ि– तमिलनाडु तट के सहारे पुराने बन्दरगाह के 8 किमी0 दक्षिण–पश्चिम में बनाया गया है। यह एक कृत्रिक बन्दरगाह है।

चेन्नई– यह दक्षिण भारत की सबसे प्रमुख बन्दरगाह है। यह बन्दरगाह कृत्रिम है जो तमिलनाडु, द0 आन्ध्र प्रदेश, पूर्वी कर्नाटक में फैला हैं यहां से खाद्यान, चमड़ा, हल्दी, तम्बाकू, चीनी, खली, अभ्रक, मूगफली, नारियल का निर्यात और रसायनिक पदार्थ, कोयला, खाद्य तेल, ऊर्वरक कपास, लौह इस्पात, इंजीनियरिंग सामान का आयात किया जाता है।

विशाखापत्तनम– यह एक प्राकृतिक बन्दरगाह है, पूर्वी तट के सहारे आन्ध्र प्रदेश में स्थित है। इस बन्दरगाह से लौह अयस्क, लकड़ी, चमड़े के सामान, खाद्यान, कोयला और मैगनीज का निर्यात तथा खनिज तेल, ऊर्वरक, रसायन, मशीनरी कोक, सूतीवस्त्र का आयात किया जाता है।

कोलकाता–हल्दिया– इसका विस्तार उत्तर प्रदेश, असम और छत्तीसगढ़ में फैला हैं यह देश का दूसरा सबसे बड़ा बन्दरगाह है। यह क्षेत्र सघन बसा कृषि प्रधान एवं खनिज सम्पन्न क्षेत्र है। यहां पर निर्यात के लिए चीनी, चाय, जूट के सामान, चमड़े के सामान लाख, अभ्रक, मशीनरी, लौह इस्तात आदि है। खनिज तेल रसायन, ऊर्वरक, रेल के सामान, खाद्य तेल, रबर के सामान, कपास इंजीनियरिंग के सामान प्रमुख है।

पाराद्वीप– उड़ीसा के तट पर स्थित बन्दरगाह है। यहां पर यांत्रिक तरीके से लौह धातु और कोयला आदि को लादने–उतारने की सुविधा उपलब्ध है। यहां से मैगनीज,

ग्रेफाइट, कोयला, लौह अयस्क का निर्यात किया जाता है। आयात में मशीनें, उर्वरक, इंजीनियरिंग के सामान गन्धक, सूती वस्त्र आदि वस्तु का किया जाता है।

एन्नौर– चेन्नई बन्दरगाह से 20 किमी0 दूर इसकी सहायता के लिए एन्नोर बन्दरगाह का विकास किया गया है।

(घ) वायु परिवहन Air Transport-

वायु परिवहन सबसे तेज एवं महंगा परिवहन साधन है। ये लम्बी दूरी को कम समय में तय कर देता है। आर्थिक विकास के साथ ही यह युद्ध काल में शुत्रुओं से सुरक्षा एवं प्राकृति आपदाओं के समय राहत सामग्री पहुंचाने में मदद करती है।

देश में इसकी शुरूआत सन् 1919 में इलाहाबाद से नैनी तक डाक ले जाने के लिए हुआ था। 1920 में कुछ हवाई अड्डा का निर्माण हुआ तथा टाटा सन्स लि0 ने घरेलू सेवा की शुरूआत की। कराची और लाहौर के बीच 1933 में इण्डियन नेशनल एयरवेज की स्थापना हुई। स्वतंत्रता के समय देश में 4 कम्पनियाँ थी जो निम्न हैं– टाटा सन्स लि0, इण्डियन नेशनल एयरवेज। 1951 तक चार और नयी कम्पनियां बन बयी। 1953 में भारत सरकार ने इसका राष्ट्रीयकरण कर इसके दो नियम–एयर इण्डिया एवं इण्डियन एयर लाइन्स का गठन कर दिया।

हवाई अड्डे–

हवाई सेवाओं के सुचारू संचालन हेतु एयरपोर्ट अथॉरिटी ऑफ इण्डिया (AAI-1995) का गठन किया गया है। भारत में कुल 126 हवाई अड्डे, 16 अन्तर्राष्ट्रीय, 77 घरेलू, 7 कस्टम और 26 नागरिक विमान, टर्मिनल शामिल है। हवाई अड्डो के कुछ संख्या प्रतिरक्षा मंत्रालय के अधीन सेवारत है।

वायु सेवायें

देश में वायु परिवहन सेवा नागर विमानन (Civil Aviation) विभाग द्वारा संचालित किया जाता है जिसमें एयर इण्डिया अन्तर्राष्ट्रीय विमान सेवाएं प्रदान करती है। पवन हंस हेलीकाप्टर्स लिमिटेड तेल एवं प्राकृतिक गैस निगम आयल इण्डिया लिमिटेड, निजी प्रतिष्ठानों और कई राज्यों सरकारों को हेलीकॉप्टर सेवाएं प्रदान करता है। वर्तमान समय में घरेलू वायु यातायात में निजी क्षेत्र का हिस्सा 60 प्रतिशत से भी अधिक हो गया है। दिल्ली एवं मुम्बई हवाई अड्डों के आधुनिकीकरण की योजना से किया जा रहा है। कोच्ची में अन्तर्राष्ट्रीय ग्रीनलैण्ड हवाई अड्डा निजी क्षेत्र के सहयोग से निर्माण किया गया है।

समस्याएं– वायु परिवहन अनेक समस्याओं से ग्रस्त है। निगम–एयर इण्डिया और इण्डियन एयर लाइन्स सार्वजनिक क्षेत्र के लगातार घाटे में चल रहे है। जरूरत से ज्यादा कर्मचारी इनकी सबसे बड़ी समस्या है।

इण्डियन एयर लाइंस एवं एयर इण्डिया दोनों के पास विमानों को एक करने और उनको समान सुविधाएं देने में अक्षम। इनके विमान अधिकांशतः पुराने हो चुके हैं। इण्डियन एयरलाइंस तथा एयर इण्डिया की हवाई सेवाओं की कुछ वर्षों में निरन्तर ह्रास हुआ है। इसके क्षमता का उपयोग नहीं हो पा रहा है।

हवाई यात्रा इतना महंगा पड़ता है कि मध्यम व निम्न वर्ग के लोगों की क्षमता से बाहर होता है इनको विदेशी कम्पनियों से प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ रहा है। घरेलू एयरलाइंस कुप्रबन्धन का भी शिकार होता जा रहो है।

भारतीय सरकार सार्वजनिक क्षेत्र की कम्पनियों के शेयरों का विनिवेश कर विमानन क्षेत्र में निजी कम्पनियों को प्रोत्साहन देने का कार्य रहीं है।

16.9 सारांश–

आपने इस इकाई मे अधिवास, अधिवास के प्रकार, अधिवास का वर्गीकरण, ग्रामीण अधिवास प्रतिरूप, नगरीय अधिवास प्रतिरूप तथा परिवहन साधनों का अध्ययन किया है। अब आप समझ गए होंगे कि अधिवास क्या है, अधिवास का वर्गीकरण, नगरीय अधिवास के विभिन्न प्रतिरूपों तथा ग्रामीण अधिवास के विभिन्न प्रतिरूपों, परिवहन के विभिन्न साधनों, परिवहन साधनों की समस्याएं, परिवहन साधनों का वितरण,राष्ट्रीय महामार्ग, स्वर्णिम चतुर्भुज, उत्तर–दक्षिण और पूरब–पश्चिम सम्पथ, राष्ट्रीय जलमार्ग, जहाजरानी, तटीय नौवाहन, सेतु समुद्रम परियोजना, बंदरगाह तथा वायुसेवा आदि को।

16.10 शब्द सूची–

आयताकार प्रतिरूप– Rectangular Patterns, शतरंजी प्रतिरूप– Chess Board Patterns,

अरीय या त्रिज्या प्रतिरूप– Radial Patterns, नगरीय अधिवास– Urban Settlements,

खुला हाथ प्रतिरूप– Open Hand Patterns, तटीय पंखा प्रतिरूप– Castle Fan Pattern,

सीमावर्ती सड़कें– Border Roads, आन्तरिक जल मार्ग– Inland Waterways,

16.11 परीक्षोपयोगी प्रश्न–

1. देश का सबसे गहरा बंदरगाह ने लिखित में से कौन है

(क) कांडला (ख) कोचीन (ग) कोलकाता (घ) विशाखापत्तनम

2. कोझिकोड बंदरगाह स्थित है

(क) ओडिशा में (ख) केरल में (ग) अंतरिक्ष में (घ) तमिलनाडु में

3. भारती रेल द्वारा सबसे अधिक माल परिवहन होता है

(क) कोयला का (ख) सीमेंट का (ग) लौह अयस्क का (घ) तेल का

4. गंगा नदी के निम्नलिखित में से किस भाग को राष्ट्रीय जलमार्ग घोषित किया गया है?

(क) इलाहाबाद से हल्दिया तक (ख) हरिद्वार से कानपुर तक
(ग) कानपुर से इलाहाबाद तक (घ) नरौरा से पटना तक

5. सड़क, नदी तथा रेल मार्ग के सहारे विकसित अधिवास प्रतिरूप को कहते हैं?

(क) वृत्ताकार प्रतिरूप (ख) रेखी प्रतिरूप

(ग) त्रिकोणी प्रतिरूप (घ) शतरंजी प्रतिरूप

6. दो नदियों के संगम से पहले दोनों तटों पर बने अधिवास प्रतिरूप को क्या कहा जाता है?

(क) अनियमित प्रतिरूप (ख) रेखीय प्रतिरूप

(ग) त्रिकोणी प्रतिरूप (घ) तारा प्रतिरूप

16.12 उपयोगी पुस्तके एवं संदर्भ–

1. प्रो0 जगदीश सिंह, भारत : भौगोलिक आधार एवं आयाम, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर।
2. प्रो0 आर0 सी तिवारी– भारत का भूगोल, प्रवालिका प्रकाशन, प्रयागराज।
3. डॉ0 बी0सी0 जाट, भारत का भूगोल, पंचशील प्रकाशन, जयपुर।
4. प्रो0 काशीनाथ व प्रो0 जगदीश सिंह, आर्थिक भूगोल, ज्ञानादेय प्रकाशन।

5. सिंह, आर0एल0– इण्डिया : रीजनल ज्योग्राफी एन0जी0एस0आई0 गोरखपुर।

16.13 अभ्यास प्रश्न–

- अधिवास को परिभाषित करते हुए अधिवासों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
- नगरीय अधिवास तथा नगरीय अधिवास प्रतिरूप का वर्णन कीजिए।
- ग्रामीण अधिवास तथा ग्रामीण अधिवास प्रतिरूप का वर्णन कीजिए।
- सड़क परिवहन का विस्तृत व्याख्या कीजिए।
- जल परिवहन तथा वायु परिवहन का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
- भारत के मुख्य बंदरगाहों का वर्णन कीजिए।